हिन्दी
28

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय

प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–5) (16.5.1949 से 16.6.1949)

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड–28

प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–5)
(16.5.1949 से 16.6.1949)

बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

जन्म : 14 अप्रैल, 1891 परिनिर्वाण 6 दिसंबर, 1956

बाबासाहेब

डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड 28

डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड : 28
प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–5) (16.5.1949 से 16.6.1949)

पहला संस्करण : 2019 (जून)
दूसरा संस्करण : 2020 (अगस्त)

ISBN : 978-93-5109-136-3

आवरण परिकल्पना : डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, पी.एच.डी.

पुस्तक के आवरण पर उपयोग किया गया मोनोग्राम बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के लेटरहेड से साभार

ISBN (सेट) : **978-93-5109-129-5**

रियायत के अनुसार सामान्य (पेपरबैक) 1 सेट (खंड 1–40) का मूल्य : रू 1073/-
रियायत नीति (Discount Policy) संलग्न है,

प्रकाशक:
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय,
भारत सरकार
15 जनपथ, नई दिल्ली – 110 001
फोन : 011–23320571
जनसंपर्क अधिकारी फोन : 011–23320588
वेबसाइट :http://drambedkarwritings.gov.in
Email-Id :cwbadaf17@gmail.com

मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा.लि., W-30 ओखला, फेज–2, नई दिल्ली–110020

परामर्श सहयोग

डॉ. थावरचन्द गेहलोत

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार

एवं

अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

श्री रामदास अठावले

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री कृष्णपाल गुर्जर

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री रतनलाल कटारिया

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री आर. सुबह्मण्यम

सचिव

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय भारत सरकार

सुश्री उपमा श्रीवास्तव

अतिरिक्त सचिव एवं सदस्य सचिव, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, पी.एच.डी.

निदेशक

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

डॉ. बृजेश कुमार

संयोजक, सी.डब्ल्यू.बी.ए.

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सकंलन (अंग्रेजी)

श्री वसंत मून

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF SOCIAL JUSTICE & EMPOWERMENT
GOVERNMENT OF INDIA
तथा
अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
CHAIRPERSON, DR. AMBEDKAR FOUNDATION

संदेश

स्वतंत्र भारत के संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर, बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। डॉ. अम्बेडकर एक उत्कृष्ट बुद्धिजीवी, प्रकाण्ड विद्वान, सफल राजनीतिज्ञ, कानूनविद्, अर्थशास्त्री और जनप्रिय नायक थे। वे शोषितों, महिलाओं और गरीबों के मुक्तिदाता थे। डॉ. अम्बेडकर सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष के प्रतीक है। डॉ. अम्बेडकर ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में लोकतंत्र की वकालत की। एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण में डॉ. अम्बेडकर का योगदान अतुलनीय है।

डॉ. अम्बेडकर के लेख एवं भाषण क्रांतिकारी वैचारिकता एवं नैतिकता के दर्शन–सूत्र है। भारतीय समाज के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में जहां कहीं भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन, शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण और जीवन–संघर्ष एक उज्ज्वल पथ प्रशस्त करता है। समतामूलक, स्वतंत्रता की गरिमा से पूर्ण, बंधुता वाले एक समाज के निर्माण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने देश की जनता का आह्वान किया था।

डॉ. अम्बेडकर ने शोषितों, श्रमिकों, महिलाओं और युवाओं को जो महत्त्वपूर्ण संदेश दिए, वे एक प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण के लिए अनिवार्य दस्तावेज है। तत्कालीन विभिन्न विषयों पर डॉ. अम्बेडकर का चिंतन–मनन और निष्कर्ष जितना उस समय महत्त्वपूर्ण था, उससे कहीं अधिक आज प्रासंगिक हो गया है। बाबासाहेब की महत्तर मेधा के आलोक में हम अपने जीवन, समाज राष्ट्र और विश्व को प्रगति की राह पर आगे बढ़ा सकते हैं। समता, बंधुता और न्याय पर आधारित डॉ. अम्बेडकर के स्वप्न का समाज–"सबका साथ सबका विकास" की अवधारणा को स्वीकार करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है, कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, "बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर : संपूर्ण वांग्मय" के अन्य अप्रकाशित खण्ड 22 से 40 तक की पुस्तकों को, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों और देश के आम जन–मानस की मांग को देखते हुए मुद्रत किया जा रहा है।

विद्वान, पाठकगण इन खंडों के बारे में हमें अपने अमूल्य सुझाव से अवगत कराएंगे तो हिंदी में अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

(डॉ. थावरचंद गेहलोत)

बाबासाहेब अम्बेडकर के सम्पूर्ण वाड्मय (Complete CWBA Vols.) का विमोचन
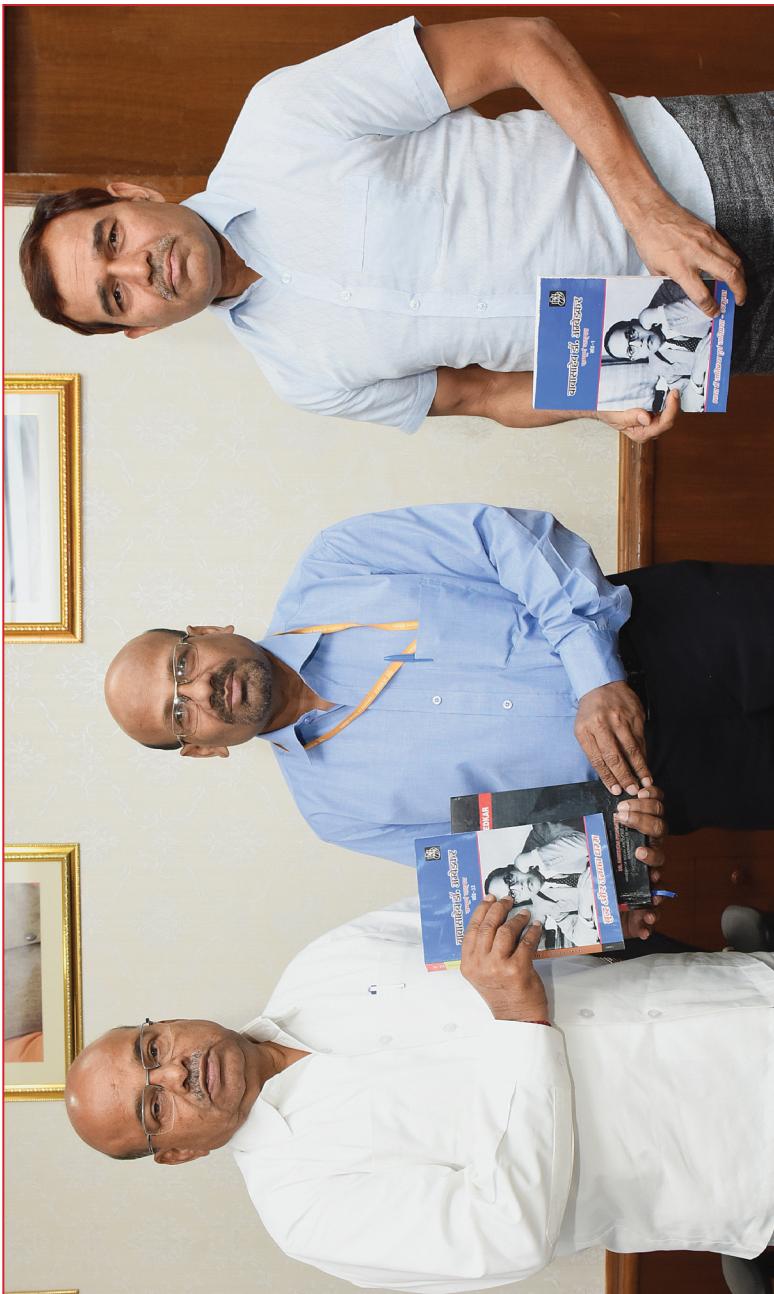
हिंदी और अंग्रेजी में CWBA / सम्पूर्ण वाड्मय, (Complete Volumes) बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के संग्रहित कार्यों के संपूर्ण खण्ड, डॉ. थावरचंद गेहलोत, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, और अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा जारी किया गया है। साथ ही डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान और श्री सुरेन्द्र सिंह, सदस्य सचिव भी इस अवसर पर उपस्थित थे। हिंदी के खंड 22 से खंड 40 तक 2019 में पहली बार प्रकाशित हुए है।

उपमा श्रीवास्तव, आई.ए.एस.
अपर सचिव
UPMA SRIVASTAVA, IAS
Additional Secretary

भारत सरकार
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
शास्त्री भवन, नई दिल्ली-110001
Government of India
Ministry of Social Justice & Empowerment
Shastri Bhawan, New Delhi-110001
Tel. : 011-23383077 Fax : 011-23383956
E-mail : as-sje@nic.in

प्राक्कथन

भारतरत्न डॉ. बी.आर. अम्बेडकर भारतीय सामाजिक–राजनीतिक आंदोलन के ऐसे पुरोधा रहे हैं, जिन्होंने जीवनपर्यंत समाज के आख़िरी पायदान पर संघर्षरत् व्यक्तियों की बेहतरी के लिए कार्य किया। डॉ. अम्बेडकर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे इसलिए उनके लेखों में विषय की दार्शनिक मीमांसा प्रस्फुटित होती है। बाबासाहेब का चिंतन एवं कार्य समाज को बौद्धिक, आर्थिक एवं राजनैतिक समृद्धि की ओर ले जाने वाला तो है ही, साथ ही मनुष्य को जागरूक मानवीय गरिमा की आध्यात्मिकता से सुसंस्कृत भी करता है।

बाबासाहेब का संपूर्ण जीवन दमन, शोषण और अन्याय के विरुद्ध अनवरत क्रांति की शौर्य–गाथा है। वे एक ऐसा समाज चाहते थे जिसमें वर्ण और जाति का आधार नहीं बल्कि समता व मानवीय गरिमा सर्वोपरि हो और समाज में जन्म, वंश और लिंग के आधार पर किसी प्रकार के भेदभाव की कोई गुंजाइश न हो। समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के प्रति कृतसंकल्प बाबासाहेब का लेखन प्रबुद्ध मेधा का प्रामाणिक दस्तावेज़ है।

भारतीय समाज में व्याप्त विषमतावादी वर्णव्यवस्था से डॉ. अम्बेडकर कई बार टकराए। इस टकराहट से डॉ. अम्बेडकर में ऐसा जज़्बा पैदा हुआ, जिसके कारण उन्होंने समतावादी समाज की संरचना को अपने जीवन का मिशन बना लिया।

समतावादी समाज के निर्माण की प्रतिबद्धता के कारण डॉ. अम्बेडकर ने विभिन्न धर्मों की सामाजिक, धार्मिक व्यवस्था का अध्ययन व तुलनात्मक चिंतन–मनन किया।

मैं प्रतिष्ठान की ओर से माननीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार का आभार व्यक्त करती हूँ जिनके सद्परामर्श एवं प्रेरणा से प्रतिष्ठान के कार्यों में अपूर्व प्रगति आई है।

उपमा श्रीवास्तव

(उपमा श्रीवास्तव)
अतिरिक्त सचिव
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय,
भारत सरकार, एवं
सदस्य सचिव

प्रस्तावना

बाबासाहेब डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर एक प्रखर व्यक्तित्व, ज्ञान के प्रतीक और भारत के सुपुत्र थे। वह एक सार्वजनिक बौद्धिक, सामाजिक क्रांतिकारी और एक विशाल क्षमता संपन्न विचारक थे। उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों के व्यावहारिक विश्लेषण के साथ–साथ अंतःविषयक दृष्टिकोणों को अपने लेखन और भाषणों के माध्य से प्रभावित किया जो बौद्धिक विषयों और भावनाओं को अभिव्यक्त एवं आंदोलित किया। उनके लेखन में वंचित वर्ग के लोगों के लिए प्रकट न्याय और मुक्ति की गहरी भावना है। उन्होंने न केवल समाज के वंचित वर्गों की स्थितियों को सुधारने के लिए अपना जीवन समर्पित किया, बल्कि समन्वय और 'सामाजिक समरसता' पर उनके विचार राष्ट्रीय प्रयास को प्रेरित करते रहे। उम्मीद है कि ये खंड उनके विचारों को समकालीन प्रासंगिकता प्रदान कर सकते हैं और वर्तमान समय के संदर्भ में डॉ. अम्बेडकर के पुनःपाठ की संभावनाओं को उपस्थित कर सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत के साथ–साथ विदेशों में भी जनता के बीच बाबासाहेब डॉ. अंबेडकर की विचारधारा और संदेश के प्रचार–प्रसार हेतु स्थापित किया गया है। यह बहुत ख़ुशी की बात है कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री के नेतृत्व में प्रतिष्ठान के शासी निकाय के एक निर्णय के परिणामस्वरूप, तथा पाठकों की लोकप्रिय माँग पर डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, बाबासाहेब अम्बेडकर के हिंदी में संपूर्ण वांग्मय (Complete CWBA Volumes) का दूसरा संस्करण पुनर्मुद्रित कर रहा है।

मैं संयोजक, अनुवादकों, पुनरीक्षकों, आदि सभी सहयोगियों, एवं डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान में अपनी सहायक, कुमारी रेनू और लेखापाल, श्री नन्दू शॉ के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी निष्ठा एवं सतत् प्रयत्न से यह कार्य संपन्न किया जा सका है।

विद्वान एवं पाठकगण इन खंडों के बारे में सुझाव से डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान को उसकी वैधानिक ई–मेल आई.डी. **cwbadaf17@gmail.com** पर अवगत कराएं ताकि, अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान हमेशा पाठकों को रियायती कीमत पर खंड उपलब्ध कराने के लिए प्रयास करता रहा है, तदनुसार आगामी संस्करण का भी रियायत नीति (Discount Policy) के साथ बिक्री जारी रखने का निर्णय लिया गया है। अतः प्रत्येक खंड के साथ प्रतिष्ठान की छूट नीति को संलग्न कर दिया गया है। आशा है कि ये खंड पाठकों के लिए प्रेरणा का स्रोत बने रहेंगे।

(डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी)
निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार,

15, जनपथ,
नई दिल्ली

जिस समाज में कुछ वर्गों के लोग जो कुछ चाहें वह सब कुछ कर सकें और बाकी वह सब भी न कर सकें जो उन्हें करना चाहिए, उस समाज के अपने गुण होते होंगे, लेकिन इनमें स्वतंत्रता शामिल नहीं होगी। अगर इंसानों के अनुरूप जीने की सुविधा कुछ लोगों तक ही सीमित है, तब जिस सुविधा को आमतौर पर स्वतंत्रता कहा जाता है, उसे विशेषाधिकार कहना अधिक उचित होगा।

—डॉ. भीमराव अम्बेडकर

विषय सूची

संविधान प्रारूप

रियायत नीति (Discount Policy)

भाग पाँच

खण्डवार चर्चा

16 मई, 1949 से 16 जून, 1949

संविधान प्रारूप

अनुच्छेद ६७-क

*__माननीय सभापति :__ अब हम लोग संविधान प्रारूप पर विचार करेंगे। सभा में अनुच्छेद 67 तक चर्चा हो चुकी है। अब हम लोग आगे बढ़ेंगे। संचालन समिति की यह राय थी कि हम लोग सबसे पहले चुनाव संबंधी मामलों से संबंधित अुनच्छेदों को स्वीकार कर सकते हैं। मेरे विचार से सभा की भी यही राय है लेकिन मैं समझता हूँ कि आज उन अनुच्छेदों पर कार्यवाही कर पाना संभव नहीं हो पाएगा और हम उन मामलों पर कल चर्चा कर सकते हैं। आज हम अनुच्छेद 67 और चुनाव मामलों से संबंधित अनुच्छेदों, जो कि आज की चर्चा में शामिल हैं, से शुरुआत कर सकते हैं और जो बच जाएंगे उन पर बाद में चर्चा होगी। एक अनुच्छेद के संशोधन के बारे में सूचना दी गई है और वह अनुच्छेद 67-क है। पहले उसे लिया जाए।

नया अनुच्छेद ६७-क

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बॉम्बे : जनरल) : सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 67 के बाद निम्नलिखित नया अनुच्छेद अन्त:स्थापित किया जाए:-
67-क

(1) राष्ट्रपति संसद के किसी भी सदन में पुन: स्थापित किए गए अथवा पुन: स्थापित किए जाने वाले किसी भी विधेयक के संबंध में संसद के सदनों की सहायता करने तथा परामर्श देने हेतु किन्हीं व्यक्तियों जिनकी संख्या तीन से अधिक नहीं हो, के नाम-निर्देशित कर सकता है।

(2) किसी विधेयक के संबंध में इस प्रकार नाम-निर्देशित व्यक्ति को उक्त विधेयक के संदर्भ में किसी भी सदन और संसद के सदनों की संयुक्त बैठक और संसद की किसी समिति जिसका सदस्य उसे नामित किया जाए, में बोलने, कार्यवाहियों में बोलने तथा भाग लेने का अधिकार होगा लेकिन ऐसे नाम-निर्देशन के परिणामस्वरूप उसे मतदान का अधिकार नहीं होगा

---

* सीएडी, आधिकारिक प्रतिवेदन, खण्ड VIII, दिनांक 18 मई, 1949, पृ. 82-83

तथा किसी अन्य मामलों में उसे किसी भी सदन की कार्यवाहियों या सदनों की संयुक्त बैठक में अथवा संसद की किसी समिति में न तो बोलने और न ही भाग लेने का अधिकार होगा।"

महोदय, इस अनुच्छेद को संविधान में अन्त:स्थापित किए जाने की जरूरत है। क्योंकि: सभा को याद होगा कि ऊपरी सदन की संरचना के बारे में मूलत: केन्द्रीय संविधान समिति के प्रतिवेदन के 14वें पैराग्राफ में उल्लेख किया गया था। उस पैराग्राफ में यह बताया गया था कि प्रारूप समिति को आयरिश प्रणाली, जिसके अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रों जैसे विज्ञान, साहित्य, कृषि, इंजीनियरिंग आदि से संबंधित व्यक्तियों के पैनल में से 15 सदस्यों को नामित किए जाने की व्यवस्था है, को अपने मॉडल के रूप में स्वीकार करना चाहिए। महोदय जब प्रारूप समिति ने इस मामले पर विचार किया, तो बी.एन. राव उसी समय यात्रा पर चले गए और उन्होंने श्री डी. वलेरा और आयरिश सरकार के अन्य सदस्यों के साथ इस बारे में चर्चा की थी कि आयरलैण्ड में यह प्रणाली अब तक कितनी सफल रही है और उन्हें यह बताया गया कि वह पैनल प्रणाली पूरी तरह से विफल हो चुकी है और इसिलए प्रारूप समिति ने केन्द्रीय संविधान समिति के प्रतिवेदन के पैरा 14 में सुझाए गए प्रावधान को छोड़ देने का निर्णय लिया और उसके स्थान पर एक सरल उपाय की व्यवस्था कर दी अर्थात् राष्ट्रपति को ऊपरी सदन में 15 सदस्यों, जिनके पास विज्ञान, साहित्य और समाज सेवाओं के बारे में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो, को नामित करने का प्राधिकार दे दिया गया। प्रारूप समिति द्वारा इस प्रारूप को तैयार कर लिए जाने के बाद केन्द्रीय संविधान समिति ने इस मामले पर फिर विचार किया और केन्द्रीय संविधान समिति के इस सत्र में समिति ने यह प्रस्ताव किया कि मूलत: कुल 15 व्यक्तियों को नामित किए जाने की जो व्यवस्था है, उसके अन्तर्गत उन व्यक्तियों को दो वर्गों में विभाजित कर दिया जाना चाहिए, अर्थात् एक समूह ऐसे व्यक्तियों को होना चाहिए, जो सभा के पूर्णकालिक सदस्य होंगे और उन लोगों के पास कला, विज्ञान, साहित्य और समाज सेवा के बारे में विशेष ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव होना चाहिए और तीन व्यक्तियों को विशेषज्ञ के रूप में नामित किया जाना चाहिए, जो ससंद द्वारा किसी विशेष समय में विचार किए जा रहे किसी विशेष मामले के संबंध में किए जाने वाले उपाय के बारे में संसद को अपनी राय दे सकते हैं और उसकी सहायता कर सकते हैं।

केन्द्रीय समिति के दूसरे सत्र की सिफारिश के पहले भाग को अनुच्छेद 17 में पहले ही समाविष्ट किया जा चुका है, जिसे सभा पारित कर चुकी है। केन्द्रीय संविधान समिति की सिफारिश के दूसरे भाग को प्रभावी बनाने के लिए इस अनुच्छेद को संविधान में शामिल किए जाने का प्रस्ताव किया गया है। माननीय सदस्य इस पर गौर करेंगे कि यह अनुच्छेद इसके अन्तर्गत नामित सदस्यों के कार्यों को सीमित करता है। उनका कार्य किसी विशेष उपाय, जो सभा के विचाराधीन हो, के मामले में सभा की सहायता करना और उसे परामर्श देना है; दूसरे शब्दों में अनुच्छेद 67-क के अधीन नामित किए गए

सदस्यों का कार्यकाल किसी विशेष विधेयक, जिसके संबंध में सभा को परामर्श देने तथा उसकी सहायता करने हेतु उन सदस्यों को राष्ट्रपति द्वारा नामित किया गया हो, के संबंध में चल रही कार्यवाहियों तक ही सीमित रहेगा।

अनुच्छेद 67–क के दूसरे पैरा से यह स्पष्ट हो जाएगा कि उन लोगों को केवल चर्चा में भाग लेने का हक होगा, चाहे सभा के अन्दर पूर्णकालिक चर्चा चल रीह हो या किसी समिति विशेष में चर्चा चल रही हो, जिसके सदस्यों के रूप में सभा द्वारा उन्हें नामित किया गया हो, लेकिन उन लोगों को मतदान करने का हक बिल्कुल हीं होगा ताकि इन तीन सदस्यों को शामिल किए जाने से निश्चय ही सभा के मतदान करने की शक्ति प्रभावित नहीं होगी। मुझे विश्वास है कि सभा अनुच्छेद 67–क में अन्तर्विष्ट इस नए उपबंध को स्वीकार कर लेगी। मैं सभा को यह बताना चाहता हूँ कि सभा में विशेषज्ञों को नामित किए जाने से संबंधित अनुच्छेद 67–क में अन्तर्विष्ट उपबंध कोई नया सुझाव नहीं है। जिन सदस्यों को भारत सरकार अधिनियम, 1919 के बारे में जानकारी होगी, वे इस बात को जानते होंगे कि जब सभा में एक लोकप्रिय तत्त्व पुनःस्थापित किया गया था, तो उसमें भी एक उपबंध किया गया था, जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रान्तों के गवर्नरों को किसी विशेष मामले में कार्य करने हेतु विशेषज्ञों को नियुक्त करने की शक्ति प्रदान की गई थी, जब सभा में ऐसे किसी उपाय पर विचार किया जा रहा हो। मेरे विचार से यह एक उपयोगी उपबंध है और संविधान में इस तरह के उपबंध किए जाने से बहुत लाभ होगा।

* * * * *

***माननीय सभापति :** सुझाव यह है कि इसके बारे में सभा में कोई सूचना प्रचलित नहीं की गई है और इसलिए सदस्यगण चाहते हैं कि उन्हें समय दिया जाए।

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : सभा यदि इस मामले पर विचार को स्थगित रखना चाहती है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

माननीय सभापति : हम लोग आज इसे स्थगित रखेंगे और इस पर बाद में विचार करेंगे।

अनुच्छेद ६८

माननीय सभापति : प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 68 को संविधान का भाग बनाया जाए।"

अब हम लोग इस अनुच्छेद के संशोधनों पर विचार करेंगे।

---

* खण्ड VIII, दिनांक 18 मई, 1949, पृ. 84

(संशोधन संख्या 1453 और 1454 प्रस्तावित नहीं किए गए।)

संशोधन संख्या 1455 श्री नजरुद्दीन अहमद के नाम से है। मैं समझता हूँ कि यह एक शाब्दिक संशोधन है। क्या आप इसे प्रस्तावित करना चाहेंगे? इन शाब्दिक संशोधनों के बारे में मैं माननीय डॉ. अम्बेडकर को यह सुझाव देने जा रहा हूँ कि इस प्रकार के शाब्दिक संशोधनों के बारे में जिन सदस्यों ने सूचना दी है, उनके साथ परामर्श करके इस बात पर सहमति बनाई जा सकती है कि जिन संशोधनों को स्वीकार किया जाएगा, उन्हें सभा में उस मामले को प्रस्तावित किए जाने के समय समावेश कर लिया जाएगा और इससे हम सभा का समय बचा सकेंगे और जो संशोधन स्वीकार्य नहीं हैं, निश्चय ही उनके बारे में हमें सोचना पड़ेगा कि क्या किया जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : प्रारूप समिति को बड़ी खुशी होगी, यदि यह प्रक्रिया अपनाई जाए।

* * * * *

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि:

"अनुच्छेद 68 के खण्ड (2) के मामले में 'राष्ट्रपति के द्वारा' शब्दों के स्थान पर 'संसद द्वारा कानून के अन्तर्गत' प्रतिस्थापित किया जाए।

मैंने जो संशोधन प्रस्तावित किया है, उसके बारे में स्पष्टीकरण दिए जाने की कोई जरूरत नहीं है। यह देखा जा सकता है कि इस खण्ड के अन्तर्गत संसद का कार्यकाल बढ़ाने की शक्ति राष्ट्रपति में निहित है। ऐसा महसूस किया जा रहा है कि इससे एक साधारण संवैधानिक उपबंधों का अत्यधिक अतिक्रमण हो जाएगा और इस प्रकार के मामले में शक्ति वस्तुत: संसद में ही निहित रहनी चाहिए और इस प्रकार का उपबंध किए जाने की आवश्यकता है, जिसके माध्यम से संसद का कार्यकाल कानून बना कर बढ़ाया जा सकता है और किसी अन्य तरीके, जैसे किसी संकल्प या प्रस्ताव के द्वारा ऐसा नहीं किया जा सकता।

माननीय सभापति : संशोधन संख्या 1465 : यह डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में शामिल हो चुका है। इस पर विचार किया जाना आवश्यक नहीं है।

* * * * *

**__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ सभापति महोदय, मैं नहीं समझता कि मेरे द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 1464 के संबंध में चर्चा के दौरान जो कुछ कहा गया है, उसके बारे में कोई जवाब देने की जरूरत है। मेरे विचार से इस संशोधन में बहुत ही

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 18 मई, 1949, पृ. 85

** वही पृष्ठ 88

उत्तम सिद्धांत समाविष्ट हैं और मुझे आशा है कि सभा इसे स्वीकार करेगी।

मेरे मित्र प्रोफेसर शाह द्वारा प्रस्तुत संशोधन के बारे में, मैं यह कहना चाहता हूँ कि इसके कारण कुछ कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं, जिनके बारे में मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी पहले ही बता चुके हैं। आखिरकार, चुनाव कोई साधारण सा मामला नहीं है। इसमें भारी धनराशि खर्च होती है और लघु अवधि के लिए बार-बार होने वाले चुनावों पर होने वाले भारी खर्च का बोझ सरकार और लोगों पर डालना अनुचित होगा। प्रोफेसर शाह द्वारा व्यक्त किए गए इस विचार के प्रति मेरी पूरी सहानुभूति है कि पूरे विश्व में ऐसा अनुभव रहा है कि किसी युद्ध के तुरंत बाद जब भी कोई चुनाव होता है तो कुछ समय के लिए लोग इतना असंतुलित रहते हैं कि उस समय के दौरान होने वाले चुनाव के परिणाम को लोगों के मन की सही अभिव्यक्ति नहीं माना जा सकता। लेकिन साथ ही मेरा यह मानना है कि हमें यह महसूस करना चाहिए कि युद्ध ही केवल एकमात्र कारण या परिस्थिति नहीं होती, जिसमें लोगों का मन डांवाडोल रहता है या हम कहें कि लोगों का मन सामान्य तौर पर स्थिर नहीं रहता। ऐसी बहुत सारी अन्य परिस्थितियाँ होती हैं, बहुत सारी घटनाएं हो सकती हैं, जो कि वस्तुतः युद्ध की श्रेणी में नहीं आते, लेकिन उनके कारण लोगों का मन किसी प्रकार से असंतुलित हो सकता है। इसलिए, एक प्रकार की स्थिति के लिए कोई उपबंध करने तथा अन्य प्रकार की स्थितियों को छोड़ देने का कोई लाभ नहीं होगा। इसलिए, मुझे प्रोफेसर शाह द्वारा प्रस्तुत किए गए संशोधन के बारे में ऐसा लगता है कि कुल मिलाकर बेहतर यही होगा कि यह प्रारूप संविधान पर छोड़ देना चाहिए कि ऐसी स्थिति के बारे में वह क्या प्रावधान करता है?

माननीय सभापति : तो फिर मैं पूरे अनुच्छेद को डॉ. अम्बेडकर के संशोधन द्वारा संशोधित रूप में मतदान के लिए प्रस्तुत करता हूँ।

प्रस्ताव है कि:

"अनुच्छेद 68 को, यथासंशोधित रूप में संविधान का भाग बनाया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 68 को यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद ६८-क

***माननीय सभापति :** अब मैं अनुच्छेद 68-क में प्रस्तुत किए गए नए अनुच्छेद को लेता हूँ। डॉ. अम्बेडकर।

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 18 मई, 1949, पृ. 89

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि:

"अनुच्छेद 68 के बाद निम्नलिखित नया अनुच्छेद अन्तःस्थापित किया जाए:-

68-क कोई व्यक्ति संसद के किसी स्थान को भरने के लिए चुने जाने के लिए तभी अर्हित होगा जब -

(क) वह भारत का नागरिक है।

(ख) वह राज्य सभा में स्थान के लिए कम से कम पैंतीस वर्ष की आयु का और लोक सभा में स्थान के लिए कम से कम पच्चीस वर्ष की आयु का है; और

(ग) उसके पास ऐसी अन्य अर्हताएं हैं जो संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस निमित्त विहित की जाएँ।

महोदय, इस अनुच्छेद का उद्देश्य चुनाव के उम्मीदवार बनने के इच्छुक व्यक्ति के लिए योग्यताओं का निर्धारण करना है। सामान्यतः नियम यह है कि कोई भी व्यक्ति, जो कि एक मतदाता है, महज इस तथ्य के कारण ही कि वह एक मतदाता है, को चुनाव में उम्मीदवार बनने का हक प्राप्त है। इस अनुच्छेद में यह प्रस्ताव किया गया है कि चुनाव के लिए उम्मीदवार बनने के इच्छुक व्यक्ति के लिए उसका मतदाता होना एक अनिवार्य योग्यता है। लेकिन, इसके साथ ही उसे कुछ अतिरिक्त योग्यताओं को भी पूरा करना होगा। इस नए अनुच्छेद 68-क में इन अतिरिक्त योग्यताओं का निर्धारण किया गया है।

मेरे विचार से सभा इस बात पर सहमत होगी कि यह वांछनीय है कि जो उम्मीदवार विधानमण्डल में अपनी सेवा देने का इच्छुक हो, उसकी योग्यता महज एक मतदाता होने के अलावा कुछ और भी होनी चाहिए। सभा के अन्दर उसे जिस प्रकार के कार्य करने की जरूरत पड़ेगी, उसके लिए जरूरी है कि उसके पास कुछ अनुभव हो और दुनियादारी के मामले में उसके पास कुछ ज्ञान ओर व्यावहारिक अनुभव हो और मैं समझता हूँ कि यदि इन अतिरिक्त योग्यताओं को स्वीकृति दे दी जाती है, तो हम लोग समुचित प्रकार के उम्मीदवारों को चयन के मामले में सुरक्षित हो जाएंगे, जो कि सभा में एक साधारण मतदाता के मुकाबले कहीं अधिक बेहतर सेवा प्रदान कर सकते हैं।

* * * * *

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी :** इस साधारण से मुद्दे पर बहुत कुछ कहा जा चुका है कि डॉ. अम्बेडकर का संशोधन शरारतपूर्ण और हानिकारक है। मैं आशा करता हूँ कि सभा यह महसूस करेगी कि इस प्रकार की टिप्पणियों से वस्तुतः स्थिति अतिशयोक्तिपूर्ण हो जाती है और समस्या पर वास्तव में विचार नहीं हो पाता। मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन पर श्रीमती दुर्गा बाई द्वारा प्रस्तुत संशोधन का समर्थन करता हूँ।

---

*. वही, पृष्ठ 94

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं श्रीमती दुर्गा बाई का संशोधन स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। मैं किसी अन्य संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता।

माननीय सभापति : क्या आप जवाब देना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं नहीं समझता कि मेरे लिए इस पर कोई जवाब देना जरूरी है, लेकिन इतना जरूर कहना चाहूँगा कि यदि मैं श्रीमती दुर्गा बाई के संशोधन को स्वीकार करता हूँ तो कतिपय मामलों में यह अनुच्छेद 152 और 55 को असंगत बना देगा क्योंकि प्रान्तीय ऊपरी सदन के मामले में तथा उपराष्ट्रपति के मामले में भी हमने आयु-सीमा 35 वर्ष निर्धारित कर दी है। मुझे लगता है कि यदि यह विशिष्टता बरकरार भी रहती है, तो इससे कोई बहुत फर्क नहीं पड़ेगा। फिर भी, यह सभा पर निर्भर करता है, यदि वह चाहे तो एक समान आयु-सीमा निर्धारित कर सकती है।

माननीय सभापति : मैं अब संशोधन पर मत लूँगा।

(श्रीमती दुर्गा बाई का निम्नलिखित संशोधन स्वीकृत हुआ।)

"कि नए अनुच्छेद 68-क, जिसे अनुच्छेद 68 के बाद अन्तःस्थापित किए जाने का प्रस्ताव है, की खण्ड (ख) में शब्द पैंतीस के स्थान पर शब्द 'तीस' प्रतिस्थापित किया जाए।"

अनुच्छेद 68-क को यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।

* * * * *

अनुच्छेद ६९

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ महोदय, मुझे खेद है कि मैं इस अनुच्छेद के मामले में प्रस्तुत किए गए संशोधनों में से किसी को स्वीकार नहीं कर सकता। मैं नहीं समझता कि इनमें से किसी भी संशोधन सिवाए एक, जिस पर मैं अभी उत्तर दूंगा, पर कोई टिप्पणी करने की जरूरत है। प्रोफेसर शाह द्वारा रखे गए संशोधनों में कतिपय मुद्दे उठाए गए हैं। उनका पहला संशोधन (संख्या 1470) और दूसरा संशोधन (संख्या 1479) कमोबेश एक ही विषय का उल्लेख करते हैं और इस कारण मैं उन पर एक साथ विचार करने का प्रस्ताव करता हूँ ताकि उन्होंने इनके पक्ष में जो तर्क दिए हैं, उन पर बहस की जा सके। उन दोनों संशोधनों में प्रोफेसर शाह ने इस बात पर जोर दिया है कि संसद के दो सत्रों के बीच का अन्तराल तीन महीने से अधिक का नहीं होगा। इन दोनों संशोधनों का सार यही है।

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 18 मई, 1949, पृ. 104-107

मैं प्रोफेसर शाह के इन दो संशोधनों के साथ ही श्री कामत का संशोधन भी (संख्या 1471) लेना चाहता हूँ क्योंकि इसमें भी उसी प्रश्न को उठाया गया है। मुझे लगता है कि न तो प्रोफेसर शाह और न ही श्री कामत इस बात को समझ पाए हैं कि किन कारणों से भारत सरकार अधिनियम, 1935 में मूलतः इन खण्डों को स्थान दिया गया था। मैं समझता हूँ कि प्रोफेसर शाह और श्री कामत इस बात को महसूस करेंगे कि 1935 में पारित किए गए अधिनियम के समय का राजनीतिक वातावरण आज के वातावरण से पूरी तरह भिन्न था। 1935 में जो वातावरण मौजूद था, उसमें कार्यपालिका का उद्देश्य विधायिका को दबा कर रखना था। वस्तुतः उन दिनों विधानमण्डल का सत्र बुलाने का मुख्य उद्देश्य राजस्व संग्रह करने का होता था। उसके द्वारा केवल बजट को पारित करना होता था और उसके बाद कार्यपालिका को अपने वित्तीय प्रस्तावों, कराधान तथा राजस्व के विनियोग, दोनों ही मामलों में, विधायिका से मंजूरी लेने में सफलता मिल जाती थी और कार्यपालिका की इस विषय में कोई रुचि नहीं होती थी कि विधानमण्डल का सत्र इसलिए बुलाया जाए कि उसमें उनके दैनंदिन प्रशासन के बारे में कोई प्रश्न पूछा जाए अथवा सामाजिक शिकायतों को दूर करने हेतु कोई विधेयक प्रस्तुत किया जाए या वे लोग अपने उन मामलों में हस्तक्षेप करने के लिए अपने अधिकारों का उपयोग कर सकें। वस्तुतः, मैं स्वयं ही भारत के कुछ प्रांतीय विधानमंडलों, जो अधिनियम, 1935 के अधीन कार्यरत हैं, की प्रक्रिया पर बड़े ध्यान से गौर करता रहा हूँ और मैं प्रान्त विशेष के बारे में जानता हूँ, (मैं उसका नाम लेना नहीं चाहता) जहाँ विधानमंडल की बैठकपूरे साल भर में 18 दिनों से अधिक नहीं होती और विधानमण्डल की बैठक बुलाने का एकमात्र उद्देश्य राजस्व उगाही करने के प्रस्तावों के लिए मंजूरी प्राप्त करना होता है।

श्री तजामुल हुसैन : उसके लिए जिम्मेदार कौन था?

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : मैं यह बताने जा रहा था कि विगत की कार्यपालिका की मनोवृत्ति इस आचरण के लिए जिम्मेदार थी क्योंकि उसकी विधान मण्डल की बैठक बुलाने तथा स्वयं और अपने प्रशासन की समीक्षा किए जाने में रुचि नहीं होती थी।

पंडित हृदयनाथ कुंजरू : वह कौन-सा प्रान्त था?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : बेहतर होगा कि उसे रहने दें। मैं निजी तौर पर अपने माननीय मित्र को उस प्रान्त का नाम बता सकता हूँ ऐसा महसूस किया गया कि यदि यही स्थिति व्याप्त रहने दी जाती है, जैसा 1935 से पूर्व हुआ करती थी तो यह लोकप्रिय सरकार की अवधारणा का मजाक ही होगा। विधायिका की बैठक महज राजस्व जुटाने के उद्देश्य से बुलाया जाना और फिर उसकी बैठक को समाप्त कर देना और उसे प्रश्नों या कानून के माध्यम से प्रशासन में सुधार लाने हेतु, कानून द्वारा प्रदत्त सभी वैध

अवसरों से वंचित कर दिया जाना लोकतंत्र का मजाक ही होगा। इस प्रकार की घटना को रोकने के उद्देश्य से भारत सरकार अधिनियम, 1935 में यह खण्ड अन्त:स्थापित किया गया था। हम सब इस बात को जानते हैं और निजी तौर पर भी मेरा यह मानना है कि वह वातावरण अब पूरी तरह से बदल चुका है और मैं नहीं समझता कि अब कोई भी कार्यपालिका विधानमण्डल के मामले में इस तरह का निष्ठुर रवैया अपना सकने में सक्षम हो पाएगा। इसलिए हमने सोचा कि अपने वर्तमान संविधान में भी उसी खण्ड को अतिरिक्त सावधानी के उपाय के रूप में जारी रहने दिया जाए। मेरे मित्र श्री कामत और प्रोफेसर शाह यह मानते हैं कि इतना ही पर्याप्त नहीं है। वे लोग चाहते हैं कि बार-बार सत्र बुलाए जाते रहने चाहिए। वर्तमान खण्ड विधानमंण्डल की बैठक को बार-बार बुलाए जाने से नहीं रोकता। वस्तुत:, मुझे तो यह आशंका है और मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि संसद के सत्र इतने अधिक बार होंगे और वह इतना लम्बा चलेगा कि हो सकता है कि विधानमण्डल के सदस्य ही सत्रों से थक जाएं। इसका कारण यह है कि सरकार लोगों के प्रति जवाबदेह है। उसकी जिम्मेदारी महज अच्छे प्रशासन चलाने तक ही सीमित नहीं हो जाती : वह ऐसे कानूनी उपायों को प्रभावी बनाने के लिए भी लोगों के प्रति जिम्मेदार होगी, जो उनकी पार्टी के कार्यक्रमों को लागू करने के लिए आवश्यक होगा।

उसी प्रकार से बहुत सारे गैर-सरकारी सदस्य भी होंगे, जो अपनी सोच या अपनी छोटी-छोटी कल्पनाओं को प्रभावी बनाने हेतु गैर-सरकारी विधेयक उपस्थित करने के इच्छुक होंगे। आगे, दूसरे कारण भी हो सकते हैं, जिससे कार्यपालिका को विधायिका की बैठक बार-बार बुलाने के लिए मजबूर होना पड़ सकता है। मैं समझता हूँ कि कराधान उपायों को समय पर पूरा किए जाने, अनुदान और अनुपूरक अनुदानों की मांगों को पारित कराए जाने आदि प्रश्न ऐसे सशक्त कारक हैं, जो कि इस मुद्दे पर फैसला लिए जाने के मामले में बृहत्तर भूमिका निभाने जा रहा है कि विधायिका के सत्र कितनी बार बुलाए जाने चाहिएं?

इसलिए, सभा से मेरा अनुरोध है कि हमने जो छोटा सा प्रावधान किया है, वह अपने आप में पर्याप्त होगा। जहां तक अधिकतम प्रावधान किए जाने का संबंध है, यह मामला पूरी तरह से खुला हुआ है और जो कारण मैंने अभी बताए हैं कि इस खण्ड विशेष के द्वारा जो कार्यपालिका पर न्यूनतम बाधिता डाली गई है, महज उतने से ही उनका काम चल जाएगा, इस बारे में कोई आशंका नहीं है।

मैं प्रोफेसर शाह के संशोधन (सं. 1477) पर आता हूँ। इस विशेष संशोधन के माध्यम से प्रो. शाह खण्ड 67 (2) (क) से "किसी भी सभा" शब्दों का विलोपन चाहते हैं। मैं उनके तर्कों को नहीं समझ सका हूँ। उन्होंने जो धारणा व्यक्त की है,

यदि मैं गलत हूँ तो मुझे सही कर देंगे – कि चूंकि उच्च सदन भंग नहीं होता, इसलिए राष्ट्रपति के लिए इसके कार्य संचालन हेतु उसकी बैठक बुलाना आवश्यक नहीं होगा। मुझे लगता है कि दोनों ही स्थितियों के बीच पूरी तरह भिन्नता है। प्रत्येक पांच वर्ष के अंत में जिस प्रकार से निम्न सदन को भंग किए जाने की जरूरत पड़ती है, उसी प्रकार से किसी कथित अवधि के दौरान किसी सभा को भंग करने की जरूरत नहीं पड़ेगी; लेकिन, कार्य सम्पादित करने हेतु उस सभा की बैठक बुलाया जाना एक अलग मामला है, जिसका अधिकार अभी भी बना रहेगा। सभा की बैठक यहाँ दिल्ली में प्रति वर्ष बारहों महीने प्रति दिन 24 घण्टे तक नहीं होने जा रही है। इसकी बैठक बुलाई जाएगी और जब भी सभा की बैठकें आहूत की जाएंगी, सदस्यगण उपस्थित होंगे। इसलिए, मुझे लगता है कि उच्च सदन की बैठक आहूत किए जाने की शक्ति का भी उपबंध किया जाना चाहिए, जैसा कि निचले सदन के मामले में किया गया है।

फिर मैं प्रो. शाह के दो अन्य संशोधनों (सं. 1473 और 1478) को लेता हूँ। संशोधन में प्रयुक्त किए गए शब्द थोड़े जटिल हैं। इन संशोधनों का सार यह है। प्रो. शाह को ऐसा लगता है कि राष्ट्रपति साधारण दिनों में अनुच्छेद के अनुरूप संसद को आहूत करने में विफल हो सकते हैं या वह संकटकालीन स्थिति में भी विधानमण्डल को आहूत नहीं कर सकते। इसलिए, उनका कहना है कि ऐसी स्थिति में जहां राष्ट्रपति स्वयं में निहित शक्ति के अनुरूप कर्त्तव्य का निर्वहन करने में विफल रहता है, विधानमण्डल को आहूत करने की शक्ति निचले सदन के अध्यक्ष में अथवा उच्च सदन के सभापति या उपसभापति में निहित होनी चाहिए। प्रो. के.पी. शाह की व्याख्या यही है, यदि मैंने सही समझा है। मुझे ऐसा लगता है कि यहाँ फिर प्रो. शाह पूरी समिति को समझ नहीं पाए हैं। सबसे पहले तो मैं यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि राष्ट्रपति अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करने में विफल क्यों रहेंगे, जिसका दायित्व विधि के द्वारा उन पर सौंपा गया है। यदि प्रधानमंत्री राष्ट्रपति से संसद को आहूत करने का अनुरोध करते हैं और फिर राष्ट्रपति बिना किसी कारण के या फिर पूरी तरह से लापरवाही या अपनी हठधर्मिता के कारण संसद को आहूत करने से मना कर देता है, तो ऐसी स्थिति में ऐसे राष्ट्रपति को विस्थापित करने का हमारे संविधान में पहले से ही बहुत अच्छा उपाय किया गया है। हमारे पास उस पर अभियोग चलाने का अधिकार है क्योंकि राष्ट्रपति द्वारा उन दायित्वों, जो उन पर सौंपा गया है, को निभाने से मना करना नि:संदेह संविधान का उल्लंघन माना जाएगा। इसलिए, उस खण्ड विशेष में इसके लिए पर्याप्त उपाय अन्तर्विष्ट हैं।

लेकिन, यदि हम प्रो. के.पी. शाह के सुझाव को स्वीकार कर लेते हैं तो एक दूसरी प्रकार की कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए राष्ट्रपति उचित कारण से विधानमण्डल की बैठक को आहूत नहीं करता और अध्यक्ष तथा सभापति विधानमण्डल

की बैठक को आहूत कर देता है, ऐसी स्थिति में क्या होगा? यदि राष्ट्रपति संसद को आहूत नहीं करता, तो उसका अर्थ है कि कार्यपालक सरकार के पास सभा में प्रस्तुत करने के लिए कोई भी कार्य नहीं है क्योंकि वही एकमात्र कारण है, जिसके आधार पर राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री की सलाह पर विधानमण्डल का सत्र नहीं बुला सकता। अब न तो अध्यक्ष और न ही सभापति सभा के लिए कार्य मुहैया करा सकता है। कार्य तो कार्यपालिका अर्थात् प्रधानमंत्री, जिसे राष्ट्रपति को विधानमण्डल आहूत करने के लिए सलाह देना होता है, के द्वारा मुहैया कराया जाना है। इसलिए, मेरे विचार से अध्यक्ष या सभापति द्वारा इस प्रकार से सभा का सत्र बुलाए जाने के मामले में सभा के समक्ष कार्य प्रस्तुत करने हेतु प्रावधान किए बगैर विधानमण्डल को आहूत करने की शक्ति अध्यक्ष या सभापति को दे देना एक निरर्थक कार्य होगा और इस प्रकार के संशोधन को स्वीकार करने से किसी उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो सकती।

प्रो. के. टी. शाह द्वारा रखे गए अंतिम संशोधन (सं. 1482) का उद्देश्य यह है कि राष्ट्रपति को सभा भंग किए जाने की अनुमति तब तक नहीं देनी चाहिए, जब तक प्रधानमंत्री द्वारा उसे भंग किए जाने का कारण लिखित में प्रस्तुत नहीं कर दिया जाए। ठीक है, मैं नहीं समझता कि इन दो स्थितियों में क्या अंतर है जब प्रधानमंत्री राष्ट्रपति के पास जाता है और उससे कहता है कि उसके विचार से सभा को भंग कर दिया जाना चाहिए और दूसरी स्थिति में प्रधानमंत्री राष्ट्रपति को एक पत्र लिख कर कहता है कि सभा को भंग कर दिया जाना चाहिए। प्रो. के.पी. शाह ने अपने भाषण में यह नहीं बताया है कि सभा को भंग करने की अनुमति दिए जाने से पूर्व प्रधानमंत्री से इस लिखित दस्तावेज को प्राप्त किए जाने का, जो उन्होंने प्रस्ताव किया है, उससे कौन सा उद्देश्य पूरा होने जा रहा है? इसलिए, मैं इस बारे में कोई भी टिप्पणी करने में असमर्थ हूँ। यदि प्रो. के.पी. शाह का उद्देश्य यह है कि प्रधानमंत्री मनमाने ढंग से सभा को भंग करने के लिए नहीं कह सके तो मैं समझता हूँ कि सभा को विघटित किए जाने के संबंध में परम्परा का यदि समुचित ढंग से पालन किया जाए तो इस उद्देश्य की प्राप्ति वैसे ही हो जाएगी। जहाँ तक इसके बारे में मुझे समझ है, राजा को संसद भंग करने का अधिकार है। सामान्य तौर पर वह प्रधानमंत्री की सलाह पर सभा को भंग करता है, लेकिन एक बार ऐसा हुआ था, और निश्चय ही वह उस समय हुआ था, जब मैकाले ने अंग्रेजी इतिहास लिखा था, जिसमें उन्होंने संसद को भंग करने के अधिकार के सिद्धांत का प्रतिपादन किया था, उस समय स्थिति इस प्रकार थी : सभी राजनीतिज्ञों ने इस बात पर सहमति व्यक्त की कि उस समय पालन की जाने वाली परम्परा के अनुसार राजा, प्रधानमंत्री जो संसद को भंग कराना चाहता था, की सलाह मानने के लिए अनिवार्य रूप से बाध्य था। राजा यदि चाहता तो वह विपक्ष के नेता से पूछ सकता था कि क्या वह सरकार का गठन करने के लिए तैयार है ताकि प्रधानमंत्री, जिसने सभा को भंग किए जाने की इच्छा व्यक्त की थी, को

हटाया जा सके और विपक्ष के नेता सरकार का प्रभार संभाल सके तथा उसी संसद को भंग किए बगैर उसी की सहायता से आगे का राज-काज चला सके। यदि राजा सरकार चलाने और प्रशासन संभालने की जिम्मेदारी स्वीकार करने हेतु विपक्ष के नेता या संसद के किसी सदस्य को मनाने में विफल रहता है, तो वह सभा भंग करने के लिए बाध्य है। उसी प्रकार से भारतीय संघ का राष्ट्रपति सभा की भावनाओं की जांच करेगा कि सभा को भंग कर दिया जाना चाहिए अथवा सभा इस बात पर सहमत है कि सरकार चलाने की जिम्मेदारी सभा को भंग किए बगैर किसी और नेता को दी जानी चाहिए। यदि उसे यह लगता है कि सभा की यह भावना है कि सभा को भंग किए जाने के अलावा कोई दूसरा विकल्प नहीं है तो वह एक संवैधानिक राष्ट्रपति के रूप में निश्चय ही सभा को भंग किए जाने की प्रधानमंत्री की सलाह को स्वीकार करेगा। इसलिए, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रधानमंत्री द्वारा सभा को भंग किए जाने की इच्छा व्यक्त करने के मामले में उसके द्वारा लिखित में कारण बताए जाने पर जोर दिया जाना निरर्थक है और जिस पत्र पर वह कारण बताया गया हो, उसका कोई मूल्य नहीं है। सभा की भावना की जांच करके यह पता लगाने कि प्रधानमंत्री ठोस कारणों से सभा को भंग करने के लिए कह रहा है अथवा पूरी तरह से अपने दलगत हितों के कारण ऐसा कह रहा है, के राष्ट्रपति के पास अन्य तरीके मौजूद हैं। मेरे विचार से हमें राष्ट्रपति पर विश्वास करना चाहिए। वह दलीय नेताओं तथा सभा के सम्पूर्ण हित के मध्य सही निर्णय ले सके। इसलिए, मुझे नहीं लगता कि इस संशोधन को स्वीकार किया जाना चाहिए।

माननीय सभापति : अब मैं संशोधनों पर एक-एक करके मत लूँगा।

[सभी संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 69 को सं विधान में जोड़ा गया।]

अनुच्छेद ७१

***माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर :** प्रो. के.टी. शाह सीधे उन शब्दों को बनाए रखना चाहते हैं, जो इन्होंने प्रयुक्त किए हैं; मेरे विवेक के अनुसार 'इसके आहूत किए जाने के कारणों' जैसे वाक्य पूरी तरह से स्पष्ट हैं और मैं समझता हूँ कि प्रो. के.टी. शाह जिन शब्दों को बनाए रखना चाहते हैं, को विस्तृत रूप से शामिल करने के लिए यह वाक्य पर्याप्त हैं और यदि मैं कहूँ कि यह जो वाक्य है 'शैल एड्रेस एण्ड इन फॉरम पार्लियामेंट ऑफ दी कॉजेज ऑफ इट्स सम्मनस', उसे ब्रिटिश संसद के मामले में प्रयोग में लाया गया है। यदि प्रो. शाह हाऊस ऑफ कॉमन्स के नियमों के बारे में कैम्पियन द्वारा लिखी गई पुस्तक को देखें तो वह पाएंगे कि उसमें इस वाक्य का प्रयोग किया गया है और एक समुचित वाक्य

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 18 मई, 1949, पृ. 110

की खोज करने में लम्बे समय तक जुटे रहने और काफी प्रयास करने के बाद सौभाग्य से ये शब्द कैम्पियन की पुस्तक में ढूंढ पाने में हम सफल रहे और मेरे विचार से यह एक बहुत अच्छा वाक्य है, जिसे बनाए रखा जाना चाहिए क्योंकि यह उन सभी पहलुओं को समेटे हुए है, जो प्रो. के.टी. शाह इसमें शामिल कराना चाहते हैं। प्रो. के.टी. शाह ने कहा कि राष्ट्रपति द्वारा संदेश भेजने तथा सभा को अन्य रूप में संबोधित करने हेतु एक उपबंध किया जाना चाहिए। मैं समझता हूँ कि अनुच्छेद 70, जिसे हमने अभी पारित किया है, में एक निश्चित उपबंध है जो राष्ट्रपति को संसद के दोनों सदनों में अभिभाषण देने का अधिकार होता है और उसे संदेश भेजने का भी अधिकार प्राप्त है और वे संदेश किसी विधेयक विशेष से संबंधित हो सकते हैं या फिर संसद की किसी अन्य कार्यवाहियों से संबंधित हो सकते हैं। मैं नहीं समझता कि राष्ट्रपति को सभा को संबोधित किए जाने का जहाँ तक स्वतंत्र अधिकार दिए जाने का संबंध है, अनुच्छेद 70 में अन्तर्विष्ट किए गए उपबंध से और कुछ ज्यादा किए जाने की जरूरत है क्योंकि अनुच्छेद 70 में पर्याप्त रूप से इस बारे में उपबंध किया गया है। इसलिए, मेरे विचार से इस संशोधन को लाए जाने की कोई जरूरत नहीं है।

[प्रो. के.टी. शाह द्वारा रखा गया एकमात्र संशोधन अस्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 71 को संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद ७२

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं नहीं समझता कि प्रो. शाह अनुच्छेद 72 के अन्तर्निहित प्रयोजन को वास्तव में समझ पाए हैं। इस मामले को और स्पष्ट करने हेतु मैं कुछ साधारण से मूलभूत सिद्धांतों के बारे में बताना चाहूँगा। प्रत्येक सभा एक स्वायत्तशासी सभा होती है। अर्थात् वह किसी भी ऐसे व्यक्ति, जो उस सभा का सदस्य नहीं है, को सभा की कार्यवाहियों में भाग लेने अथवा कार्यवाही समाप्त होने के बाद मतदान करने की अनुमति नहीं देगी। सभा की कार्यवाहियों में भाग लेने तथा मतदान करने का हक केवल उन्हीं व्यक्तियों को है, जो उस सभा के सदस्य हैं। अब हमारे यहाँ एक समान स्थिति बन गई है और वह इस प्रकार है। केन्द्रीय स्तर पर हमारे यहाँ दो सदन हैं, उच्च सदन और निचला सदन। यह बिल्कुल संभव है कि मंत्री के रूप में नियुक्त कोई व्यक्ति निचले सदन का सदस्य हो। यदि कोई विधेयक उसके प्रभार में है और विधेयक के लिए दोनों सभाओं की मंजूरी लेना आवश्यक है तो यह स्पष्ट है कि उस विधेयक को निचले सदन में ही नहीं, बल्कि उच्च सदन में भी प्रस्तुत करना होगा। परिणामत: यदि विधेयक का प्रभारी कोई निचले सदन का सदस्य है तो सामान्य स्थिति में वह उच्च सदन

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 113-114

में उपस्थित होने तथा विधेयक प्रस्तुत करने की स्थिति में नहीं होगा, जब तक कि इसके लिए कोई विशेष प्रावधान नहीं बना दिया जाता। ऐसा उस व्यक्ति, जो निचले सदन का सदस्य है और जो किसी विधेयक का एक प्रभारी मंत्री है, को उच्च सदन में प्रवेश करने, उसे संबोधित करने, उसकी कार्यवाहियों में भाग लेने के लिए समर्थ बनाने हेतु अनुच्छेद 72 अधिनियमित किया जा रहा है। अनुच्छेद 72 वास्तव में समाान्य नियम कि कोई भी व्यक्ति, जो उस सभा का सदस्य न हो, सभा की कार्यवाहियों में भाग नहीं ले सकता, का एक अपवाद है। यह अनिवार्य है कि कोई मंत्री जो उच्च सदन का सदस्य हो, को निचले सदन में प्रवेश करने ओर उसे संबोधित करने का अधिकार होना चाहिए ताकि यह सब कामकाज पूरा हो सके। उसी प्रकार यदि वह निचले सदन का सदस्य है, तो उसे उच्च सदन में उपस्थित होने, उसे संबोधित करने और उसमें भाग लेने का अधिकार होना चाहिए। इन्हीं सब स्थितियों को दृष्टि में रखकर अनुच्छेद 72 अधिनियमित किया जा रहा है। यही नियम महान्यायवादी के मामले में भी लागू होता है। महान्यायवादी निचले सदन का सदस्य हो सकता है। उसे उच्च सदन में जाना पड़ सकता है, लेकिन निचले सदन का सदस्य होने के कारण ही उसे उच्च सदन में उपस्थित होने का वैधानिक अधिकार नहीं मिल जाता। परिणामत: यह प्रावधान किया गया है। उसी प्रकार से यदि वह उच्च सदन का सदस्य है तो उसे निचले सदन में प्रवेश करने और उसे संबोधित करने का वैधानिक अधिकार नहीं होता। इसी प्रयोजनार्थ इस अनुच्छेद को अधिनियमित किया गया है। हमने इस अधिकार को केवल कार्यवाहियों में भाग लेने तक सीमित रखा है। इसके द्वारा हम किसी मंत्री को, जो दूसरे सदन की कार्यवाहियों में भाग ले रहा हो, को मतदान करने का अधिकार नहीं देते क्योंकि हम नहीं समझते कि किसी विधेयक के मामले में कार्यवाहियों में हिस्सा के लिए उसे मतदान करने की शक्ति दिया जाना अनिवार्य है। मैं समझता हूँ कि मेरे मित्र ने यह भी कहा है कि 'मंत्री' शब्द का विलोप कर दिया जाना चाहिए और 'निर्वाचित व्यक्ति' शब्द अन्तर्विष्ट किए जाने चाहिए; लेकिन, उस मामले में फिर एक कठिनाई उत्पन्न हो सकती है क्योंकि हमने अपने संविधान के किसी भाग में यह कहा है कि कोई व्यक्ति, जो किसी सदन का निर्वाचित सदस्य नहीं है, को कतिपय अवधि के लिए मंत्री के रूप में नियुक्त किया जा सकता है। ऐसे व्यक्ति को भी वह सब अधिकार प्रदान करने हेतु 'मंत्री' शब्द का प्रयोग किया जाना आवश्यक है न कि 'व्यक्ति' शब्द। इसी कारण से इस संदर्भ में 'मंत्री' शब्द अति अनिवार्य है। मैं संशोधन का विरोध करता हूँ।

[प्रो. के.टी. शाह का संशोधन अस्वीकृत हुआ और अनुच्छेद 72 को संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 119

अनुच्छेद ७३

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बॉम्बे जनरल) :** सभापति महोदय, मैं यह कहने से अपने आपको रोक नहीं पा रहा हूँ कि श्री नजरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत संशोधन बिल्कुल ही बेतुका है और खण्ड में उल्लिखित उपबंधों के विपरीत पूरी तरह से मिथ्या धारणा पर आधारित है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह किसी व्यक्ति के उसी पद पर पुनः निर्वाचित होने तथा नवनिर्वाचन के बीच के अंतर को नहीं समझ पा रहे हैं। अनुच्छेद 73 पुनर्निर्वाचन से संबंधित है न कि नवनिर्वाचन से। नवनिर्वाचन अनुच्छेद 74 में उल्लिखित परिस्थितियों के कारण रिक्त हुए पद के परिणामस्वरूप किया जाता है। अनुच्छेद 74 में दिए गए कारण के आधार पर वह व्यक्ति सदन का सदस्य नहीं रह जाता है और स्पष्ट है कि उस व्यक्ति के सदन का सदस्य नहीं रहने पर आप यह नहीं कह सकते कि वे लोग 'एक सदस्य को निर्वाचित कर सकते हैं' जिसका आशय यह हो सकता है कि उसी व्यक्ति जिसने पहले वह पद धारित किया हुआ था, उसे ही निर्वाचित किया गया है। परिणामतः, इस स्थिति को पूरा करने हेतु, समुचित शब्द विन्यास 'अन्य सदस्य' है क्योंकि वह सदस्य अनुच्छेद 74 के अन्तर्गत अयोग्य हो चुका है। इसलिए अनुच्छेद 73 में प्रयुक्त किए गए शब्द बिल्कुल सही क्रम में हैं। मैं यह कह सकता हूँ कि यदि कोई सदस्य समयावधि समाप्त हो जाने के कारण सदस्य नहीं रह जाता है, तो उसे पुनः निर्वाचित किया जाता है क्योंकि वह 'अन्य सदस्य' है।

[श्री नजरुद्दीन का संशोधन अस्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 73 को संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

नया अनुच्छेद ७५-क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** माननीय सभापति, ऐसी कोई भी कठिनाई उत्पन्न होने की संभावना नहीं है जैसा कि श्री कामथ ने बताया है और मैं यह कहना चाहता हूँ कि इसमें किसी प्रकार की कोई त्रुटि नहीं है। स्थिति इस प्रकार होगी: यदि सभापति पर लगाए गए अभियोग के मामले में सुनवाई चल रही हो तो मैं – यहाँ लोकप्रिय शब्द प्रयोग कर हरा हूँ – यद्यपि सभापति उपस्थित रहेगा, फिर भी उपसभापति सभा की अध्यक्षता करेगा। यदि उपसभापति के मामले में सुनवाई हो रही हो तो सभापति सभा की अध्यक्षता करेगा; और जब यदि विधानमंडलों की किसी भी बैठक में, जब राष्ट्रपति उसे उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है, तो अध्यक्ष अथवा

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 121

जब उपाध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तो उपाध्यक्ष, चाहे वह उपस्थित हो, अध्यक्षता नहीं करेगा और अंतिम पिछले अनुच्छेद की धारा (2) के प्रावधान ऐसी प्रत्येक बैठक के संबंध में उसी प्रकार लागू होगा जैसा कि उन बैठकों के संबंध में लागू होते हैं जिसमें अध्यक्ष अथवा जैसी भी स्थिति हो, उपाध्यक्ष उपस्थित रहता है।" उपसभापति के मामले में सुनवाई हो रही हो; यदि सभा की अध्यक्षता करने के लिए सभापति उपस्थित नहीं हो, तो नया खण्ड यह कहता है कि ऐसी स्थिति में अनुच्छेद 75-क का खण्ड (2) लागू होगा। अनुच्छेद 75 के खण्ड (2) के अनुसार राज्यों के विधानमंडल की किसी बैठक में सभपति या उपसभापति के मौजूद नहीं रहने पर विधानमंडल की कार्यवाही नियम के अनुसार चयनित व्यक्ति, और अगर ऐसा कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं है तो विधानमंडल द्वारा तय कोई अन्य व्यक्ति बैठक की अध्यक्षता करेगा।

माननीय सभापति : प्रस्ताव है:

(श्री टी.टी. कृष्णामाचारी द्वारा प्रस्ताव किया गया।)

"कि अनुच्छेद 75 के बाद, निम्नलिखित नया अनुच्छेद अन्तःस्थापित किया जाए:

"75 क

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 75-क संविधान में जोड़ा गया।

* * * * *

अनुच्छेद ७६

***माननीय सभापति :** प्रस्ताव है:

"कि अनुच्छेद 76 को संविधान का भाग माना जाए।"

श्री नजरुद्दीन अहमद : मैं इस संशोधन को औपचारिक रूप से पेश नहीं करना चाहता लेकिन मैं कुछ टिप्पणी करना चाहता हूँ। इसी प्रकार के मेरे एक संशोधन को डॉ. अम्बेडकर ने बेतुका कहने की कृपा की थी। महोदय! मेरा यह कहना है कि मेरा संशोधन बेतुका नहीं था ...

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हम लोग उस संशोधन पर विचार कर चुके हैं और मेरे माननीय मित्र द्वारा एक वैसा ही संशोधन अनुच्छेद 73 के मामले में पेश किया यगा था।

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 121

अनुच्छेद ७७

****माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर :** महोदय, मुझे खेद है कि मैं अपने माननीय मित्र, श्री कामत द्वारा प्रस्तुत संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता। विद्यमान अनुच्छेद एक अति सरल सिद्धांत पर आधारित है और वह यह है कि कोई व्यक्ति सामान्य तौर पर अपना त्यागपत्र उसी व्यक्ति को सौंपता है जिसने उसे नियुक्त किया हो। अब अध्यक्ष और उपाध्यक्ष वैसे व्यक्ति होते हैं जिन्हें संसद द्वारा नियुक्त किया जाता है या चुना जाता है या निर्वाचित किया जाता है। परिणामत: इन दोनों व्यक्तियों यदि वे लोगों अपना त्यागपत्र देना चाहते हों, को अपने त्यागपत्र सभा को सौंपने चाहिए जो कि उन लोगो ंके नियुक्त प्राधिकारी हैं। नि:संदेह सभा लोगों का एक सामूहिक निकाय है इसलिए त्यागपत्र सभा के प्रत्येक सदस्य के नाम से अलग-अलग संबोधित नहीं किया जा सकता। इसके परिण ाामस्वरूप यह उपबंध किया जाता है कि त्यागपत्र या तो अध्यक्ष के नाम या उपाध्यक्ष के नाम संबोधित होना चाहिए क्योंकि यही दोनों लोग सभा का प्रतिनिधित्व करते हैं। वास्तविक तौर पर देखें तो सिद्धांतत: त्यागपत्र सभा को सौंपा जाता है क्योंकि सभा ने ही उन दोनों की नियुक्ति की हुई होती है। उन दोनों की नियुक्ति राष्ट्रपति ने नहीं की हुई होती। परिणामत: यह एक बड़ी असंगतिपूर्ण स्थिति होगी यदि उपाध्यक्ष अथवा अध्यक्ष को अपने त्यागपत्र राष्ट्रपति को सौंपने पड़ें जिसे सभा से कुछ लेना-देना नहीं होता और उसे इस मामले में सभा से कुछ लेना-देना ही नहीं होना चाहिए जहां सभा को कार्यपालिका प्राधिकार जिसका उपयोग राष्ट्रपति या तत्कालीन सरकार के माध्यम से किया जाता है, से स्वतंत्र रखा जाना चाहिए।

श्री एच.वी. कामत : एक सूचना के आधार पर क्या मैं डॉ. अम्बेडकर से यह जान सकता हूँ कि आज केन्द्रीय विधानसभा के अध्यक्ष के मामले में क्या प्रक्रिया व्याप्त है?

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : आज की स्थिति इतनी अलग है क्या वह वर्तमान स्थिति के बारे में जानना चाहते हैं अथवा वह उस स्थिति के बारे में जानना चाहते हैं जो वह पैदा करना चाहते हैं? भारत सरकार अधिनियम के अधीन, असेम्बली और अध्यक्ष गवर्नर जनरल के अधिकार क्षेत्र में आते हैं। परिणामत: अध्यक्ष को गवर्नर जनरल के नाम पर त्यागपत्र संबोधित करना होता है। हम नहीं चाहते कि वह स्थिति जारी रहे। हम लोग अध्यक्ष को कार्यपालिका से यथासंभव पूरी तरह से स्वतंत्र स्थिति प्रदान करना चाहते हैं।

**सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 121·
पूर्वोत्तर पृष्ठ 123

श्री एच.वी. कामत : क्या भारत सरकार अधिनियम के अधीन भी अध्यक्ष असेम्बली द्वारा निर्वाचित नहीं होता?

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : यह गलत है। इसमें कोई संदेह नहीं कि उसे निर्वाचित किया जाता है लेकिन उसके निर्वाचन को गवर्नर जनरल के अनुमोदन की जरूरत पड़ती है।

श्री एच.वी. कामत : महोदय, मैं संशोधन वापस लेने की अनुमति चाहता हूँ। सभा की अनुमति से संशोधन वापस लिया गया।

नया अनुच्छेद ७९-क

***माननीय सभापति :** अनुच्छेद 79-क के बारे में डॉ. अम्बेडकर और श्री घनश्याम सिंह गुप्ता द्वारा सूचना दी गई है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं इस संशोधन को स्थगित रखना चाहता हूँ।

श्री सभापति : अनुच्छेद 79-क स्थगित रखा गया।

* * * * *

नया अनुच्छेद ८०

#माननीय सभापति : मुझे वह याद है; उसे दोहराने की जरूरत नहीं है। हम लोग यह मान सकते हैं कि उस संशोधन को उपस्थित नहीं किया गया है। हम लोग अनुच्छेद 80 को ले सकते हैं

प्रस्ताव है :

"अनुच्छेद 80 को संविधान का भाग बनाया जाए।"

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ :

"कि अनुच्छेद 80 के खण्ड (1) में "इस संविधान में यथा उपबंधित के सिवाए" शब्दों के स्थान पर "इस संविधान में यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाए" शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।"

महोदय, यह छूट गया है और इसे केवल सही किया जाना है।

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 126

#

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : क्या मैं यह बता सकता हूँ कि सभा अनुच्छेद 68-क को पहले ही स्वीकार कर चुकी है जोकि बिल्कुल वही है जिसे अभी श्री कामत ने संशोधन के रूप में प्रस्तुत किया है।

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : कल हम अनुच्छेद 68-क स्वीकार कर चुके हैं जिसमें इस मुद्दे को शामिल कर लिया गया है।

माननीय सभापति : वह अनुच्छेद 1538 और 1541 के पहले भाग के बारे में बता रहे हैं।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : मुझे खेद है।

माननीय श्री के. संथानम : मेरा सुझाव है कि श्री कामथ उन्हें अलग से प्रस्तुत कर सकते हैं। यह हो सकता है कि हम लोग एक का समर्थन करना चाहें और दूसरे का विरोध करना चाहें।

श्री एच.वी. कामत : 1538 और 1541 एक साथ रखे जाएंगे; अन्यथा तस्वीर पूरी तरह साफ नहीं हो पाएगी। यदि मेरे संशोधन स्वीकृत हो जाते हैं तो अनुच्छेद को इस प्रकार पढ़ा जाएगा -

"इस संविधान में यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाए, प्रत्येक सदन की बैठक में या सदनों की संयुक्त बैठक में सभी प्रश्नों का अवधारण उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के बहुमत से किया जाएगा:

'सभापति या अध्यक्ष आदि को छोड़कर'

* * * * *

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ महोदय, मुझे खेद है कि मैं श्री कामथ का संशोधन स्वीकार नहीं कर सकता।

श्री एच.वी. कामत : मेरा कौन सा संशोधन? मैंने अलग-अलग तीन संशोधन उपस्थित किए हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : वह संशोधन जिसे उन्होंने अभी-अभी रखा है। मैंने एक पुस्तक में यह पाया है कि यह एक समेकित संशोधन है। उन्होंने इसके अलग-अलग भागों पर बोला होगा लेकिन संशोधन एक ही है।

श्री एच.वी. कामत : महोदय, मैंने उन्हें अलग-अलग भेजा था और मैंने उन पर पृथक रूप से बोला है। महोदय आपकी अनुमति से पहले उसके बारे में बताना चाहूँगा।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 128-29

'किसी बैठक में' शब्दों के बाद 'कोई भी सभा जाए'; दूसरा 'सभापति या अध्यक्ष या उसके रूप में कार्य कर रहे व्यक्ति के अलावा' शब्दों का विलोप किया जाए। तीसरा, दूसरे पैरा के शुरुआत में 'बशर्ते कि' शब्द अन्त:स्थापित किया जाए'। मैं यह जानना चाहता हूँ कि इन तीनों संशोधनों में कौन सा संशोधन माननीय सदस्य स्वीकार कर रहे हैं, क्या वह सभी तीनों संशोधन या दो संशोधन या एक संशोधन को स्वीकार कर रहे हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं माननीय सदस्य के संशोधन संख्या 1538 का उल्लेख कर रहा हूँ, जो कि आधिकारिक दस्तावेज के मुताबिक, एक ही संशोधन प्रतीत होता है।

श्री एच.वी. कामत : महोदय, मैंने आपसे उन्हें अलग-अलग प्रस्तुत करने की अनुमति मांगी थी।

माननीय सभापति : श्री कामत ने ये तीन संशोधन प्रस्तुत किए हैं लेकिन, उन्हें अलग-अलग भी लिया जा सकता है। संशोधित हो जाने पर, अनुच्छेद को इस प्रकार से पढ़ा जाएगा।:

"इस संविधान में यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाए प्रत्येक सदन की बैठक में या सदनों की संयुक्त बैठक में ......"

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे लगता है कि मैं संशोधनों की समेकित सूची में से संशोधन संख्या 87 को स्वीकार कर सकता हूँ। इससे मेरे उद्देश्य की पूर्ति होती है और इसलिए मैं इसे स्वीकार करता हूँ।

(अनुच्छेद 80 को यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद ८१

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 81 में 'घोषणा' शब्द के स्थान पर 'प्रतिज्ञान अथवा शपथ' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।"

श्री एच.वी. कामत : सभापति महोदय, मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर द्वारा अभी प्रस्तुत किए गए संशोधन संख्या 1554 के बारे में छोटा सा स्पष्टीकरण चाहता हूँ, जिसमें "घोषणा" शब्द के स्थान पर "प्रतिज्ञान अथवा शपथ" शब्दों को प्रतिस्थापित करने की बात कही गई है। महोदय, क्या मैं आपका ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 130-32

कर सकता हूँ कि सभा पहले ही अनुच्डेद 49 स्वीकार कर चुकी है जिसमें राष्ट्रपति या राष्ट्रपति के रूप में कार्य कर रहे व्यक्ति अथवा राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन करने वाले व्यक्ति द्वारा कार्यभार संभालने से पूर्व एक प्रतिज्ञान अथवा शपथ ली जाएगी। उसमें उल्लिखित प्रतिज्ञान अथवा शपथ को इस आशय से संशोधित किया गया था कि राष्ट्रपति या राष्ट्रपति के रूप में कार्य कर रहा व्यक्ति या राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन कर रहे व्यक्ति को अपना कार्यभार संभालने से पूर्व निम्न रूप में शपथ या प्रतिज्ञान लेना चाहिए:

"मैं क, ख, ईश्वर के नाम पर शपथ लेता हूँ या "मैं क, ख, यह प्रतिज्ञान करता हूँ"......

क्या मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर के साथ-साथ इस सभा से यह आश्वासन प्राप्त कर सकता हूँ कि अनुच्छेद 81 में उल्लिखित प्रतिज्ञान अथवा शपथ के बारे में उपबंध उसी तर्ज पर किया जाएगा जैसा कि संविधान के संशोधित अनुच्छेद 49 के मामले में किया गया था।

माननीय सभापति : मैं समझता हूँ कि यह स्पष्ट है कि इस अनुसूची को भी संशोधित करना होगा ताकि इस खण्ड के शब्दों के साथ उसका मेल हो सके...

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे खेद है कि मैं अपने मित्र प्रो. शाह द्वारा प्रस्तुत संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता। मेरे विचार से प्रो. शाह वास्तव में इन स्थितियों के क्रम को नहीं समझ पा रहे हैं। यदि मैं ऐसा कहूँ कि किसी उम्मीदवार जिसे तब तक के लिए निर्वाचित किया जाता है जब तक कि वह अपने जीवन में सभा का सदस्य नहीं बन जाता। यदि प्रो. शाह अनुच्छेद 81 का संदर्भ लें और उसके शीर्षक को नोट करें "सदस्यों को अयोग्य ठहराया जाना" तो वह सबसे पहली बात जो महसूस करेंगे वह यह होगी कि कोई उम्मीदवार संसद के लिए निर्वाचित हो जाने मात्र से ही संसद का सदस्य बनने का हकदार नहीं हो जाता। यथोचित रूप से निर्वाचित उम्मीदवार को संसद का सदस्य बनने से पूर्व कतिपय प्रकार की औपचारिकताएं पूरी करनी पड़ सकती हैं। ऐसी ही एक औपचारिकता उसके द्वारा शपथ लेने की हो सकती है। उसे सभा में अपना स्थान ग्रहण करने से पूर्व पहले शपथ लेनी चाहिए। जब तक वह शपथ नहीं ले लेता वह सभा का सदस्य नहीं बन जाता उसे सभा में बैठने का हक प्राप्त नहीं होता। वही उपबंध किया गया है। जब तक उम्मीदवार शपथ नहीं ले लेते और सभा के अन्दर अपना स्थान प्राप्त नहीं कर लेते वे सदस्य नहीं माने जाते और फिर उन्हें अध्यक्ष के चुनाव में भाग लेने का हक नहीं होता। इस संबंध में इस प्रकार का क्रम है - निर्वाचन, शपथ लिया जाना, सदस्य बनना और फिर अध्यक्ष को चुनने में भाग लेने का हक प्राप्त करना। इसलिए अध्यक्ष का चुनाव किए जाने से पूर्व शपथ दिलाए जाने की प्रक्रिया पूरी होनी चाहिए।

इस क्रम को देखते हुए यह कहना असंभव होगा कि अध्यक्ष के सामने शपथ ली जाएगी क्योंकि अध्यक्ष तो उस समय वहां होता ही नहीं और अध्यक्ष का चुनाव तब तक नहीं हो सकता जब तक निर्वाचित सभा के सदस्य नहीं बन जाते। अतः शपथ दिलाने का अधिकार अध्यक्ष को छोड़कर किसी और व्यक्ति में अनिवार्य रूप से निहित किया जाना चाहिए। इस स्थिति में प्रश्न यह है कि शपथ दिलाने की शक्ति किसमें निहित की जाएगी? स्पष्ट है कि यह शक्ति केवल राष्ट्रपति में या फिर किसी अन्य सदस्य में जिसे राष्ट्रपति अपनी ओर से अपना प्राधिकार अन्तरित कर सके। इस क्रम के अनुसार शपथ दिलाने का प्राधिकार या तो राष्ट्रपति में या फिर उसके द्वारा नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति में निहित करने का उपबंध स्वीकार करने का विकल्प है। इस प्राधिकार को अध्यक्ष में निहित नहीं किया जा सकता क्योंकि उस समय अध्यक्ष का अस्तित्व नहीं होता।

मैं अब अपने सभापति द्वारा उठाए गए मुद्दे पर आता हूँ। शपथ लेने के संबंध में उप-चुनाव में चुने गए नवनिर्वाचित सदस्य के मामले में क्या होगा? क्या उसे राष्ट्रपति के पास जाकर शपथ लेनी पड़ेगी या फिर अध्यक्ष के सामने शपथ लेनी पड़ेगी? उस प्रश्न का उत्तर यह है कि अध्यक्ष का चुनाव हो जाने के बाद राष्ट्रपति अपनी ओर से शपथ दिलाने का प्राधिकार उसे प्रदान कर देगा ताकि जब कोई नवनिर्वाचित उम्मीदवार शपथ लेने के प्रयोजन से संसद में उपस्थित होता है तो राष्ट्रपति द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति के रूप में अध्यक्ष उसे शपथ दिलाएगा। इसके परिणामस्वरूप नवनिर्वाचित व्यक्ति के मामले में उसके लिए राष्ट्रपति या राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त पीठासीन प्राधिकार के पास जाने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

क्रमबद्ध स्थिति यही है और यह देखा जा सकता है कि अनुच्छेद 81 में इस प्रकार का उपबंध किया जाए कि यह क्रम सही ढंग से लागू हो सके। आज भी मैं यह कहूँगा कि उसी प्रक्रिया का पालन किया जाता है। राष्ट्रपति (या गवर्नर जनरल) सभा के प्रथम बार समवेत होने पर किसी व्यक्ति को उसकी अध्यक्षता करने के लिए नियुक्त करता है। फिर प्रत्येक सदस्य पीठासीन प्राधिकारी के समक्ष शपथ या प्रतिज्ञा लेता है। सदस्यों को शपथ दिलाने के बाद पीठासीन प्राधिकारी अध्यक्ष का चुनाव संपन्न कराता है और अध्यक्ष का चुनाव हो जाने पर पीठासीन अधिकारी के रूप में चुने गए व्यक्ति का कार्य समाप्त हो जाता है और फिर अध्यक्ष उसके बाद आने वाले किसी सदस्य को शपथ दिलाने का प्राधिकार राष्ट्रपति से उस सभापीठ अधिकारी के स्थान पर प्राप्त कर लेता है। इसलिए जैसा कि मैंने कहा कि मूल प्रारूप इन क्रमवार स्थितियों को ध्यान में रखकर बनाया जा रहा है और राष्ट्रपति के लिए यह प्राधिकार अध्यक्ष को दिए जाने हेतु इस प्रकार का उपबंध किया जा रहा है कि अध्यक्ष नवनिर्वाचित व्यक्ति को शपथ लेने हेतु राष्ट्रपति के पास जाने से रोक सकेगा।

माननीय सभापति : क्या अध्यक्ष के लिए शपथ दिलाने का प्राधिकार राष्ट्रपति से प्राप्त किया जाना अनिवार्य होना चाहिए?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं यह बताना चाहता हूँ कि संवैधानिक तौर पर ऐसा किया जाना जरूरी है क्योंकि शपथ दिलाने का कार्य सभा के संविधान के अंतर्गत आता है जिस पर अध्यक्ष का कोई प्राधिकार नहीं होता ...

माननीय सभापति : मैं उस अवस्था के बारे में नहीं सोच रहा हूँ। मैं तो अध्यक्ष के चुनाव हो जाने के बाद की स्थिति पर विचार कर रहा हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे विचार से इसमें कुछ भी गलत या अपमानजनक नहीं हैं क्योंकि इसका साधारण सा कारण यह है कि सभा का संविधान, उसकी संरचना, सभा का वैधानिक रूप आदि ऐसे मामले हैं जो अध्यक्ष के कार्यक्षेत्र के दायरे से बाहर है। अध्यक्ष संसद के कार्यों का प्रभारी है और जब संसद का गठन हो जाता है और संसद का गठन तब तक नहीं होता जब तक सदस्यों द्वारा शपथ नहीं ले ली जाती। इसलिए शपथ लिया जाना वास्तव में उपबंध के अनुरूप सभा के गठन का एक भाग है और जहां तक उस बात का संबंध है मेरे विचार से वह प्राधिकार अध्यक्ष का नहीं होता इसलिए उसे अध्यक्ष को दिए जाने की आवश्यकता नहीं है।

माननीय सभापति : मान लें सभा की बाद की बैठक में यदि अध्यक्ष अनुपस्थित हो और कोई नया सदस्य उस दिन आता है जब उपाध्यक्ष या कोई अन्य व्यक्ति पीठासीन हो।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अध्यक्ष को दिया गया प्राधिकार केवल अध्यक्ष में ही निहित नहीं होता बल्कि उपाध्यक्ष में, सभापीठ के पैनल में और कुछ समय के लिए पीठासीन अन्य व्यक्ति में भी निहित होता है।

माननीय सभापति : अध्यक्ष को प्राधिकार के प्रत्यायोजन पर निर्भर रहना पड़ेगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हमें संविधान द्वारा तय किए गए सभी कार्याधिकारियों के विश्वास पर निर्भर रहना पड़ता है।

[उपर्युक्त दर्शाए गए डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 81 को संविधान में जोड़ दिया गया।]

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 133

अनुच्छेद ८२

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** सभापति महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (1) के बाद, निम्नलिखित नए खंड स्थापित किए जाएं:

कोई व्यक्ति संसद और किसी राज्य के विधानमंडल के किसी सदन, दोनों का सदस्य नहीं होगा और यदि कोई व्यक्ति संसद और [किसी राज्य] के विधानमंडल के किसी सदन, दोनों का सदस्य चुन लिया जाता है तो ऐसी अवधि की समाप्ति के पश्चात् जो राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए नियमों में विनिर्दिष्ट की जाए, संसद में ऐसे व्यक्ति का स्थान रिक्त हो जाएगा यदि उसने राज्य के विधान मंडल में अपने स्थान को पहले ही नहीं त्याग दिया है।''

महोदय, इस पर कोई टिप्पणी करने की जरूरत नहीं है। यह एक साधारण नियम है।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं श्री नजरुद्दीन अहमद या श्री कामत में से किसी के भी संशोधनों को स्वीकार नहीं करता।

श्रीमान सभापति : मैं संशोधनों पर एक-एक करके मत लूँगा।

[उपर्युक्त दिए गए संशोधनों में से केवल डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 82 यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ दिया गया।]

अनुच्छेद ८३

****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** सभापति महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 83 के खण्ड (1) के उपखण्ड (छ) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड प्रतिस्थापित किया जाए:

यदि वह भारत का नागरिक नहीं है या उसने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित कर ली है या वह किसी विदेशी राज्य के प्रति निष्ठा या अनुषक्ति को अभिस्वीकार किए हुए हैं।"

* * * * *

*****माननीय सभापति :** मैं चाहता हूँ कि प्रारूप समिति इस मामले में एक मुद्दे पर विचार करे। यदि हम इस अनुच्छेद के खण्ड 2 का उल्लेख करें तो इसमें सभापति या उपसभापति, लोक सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष का कोई उल्लेख नहीं है। वे लोग भी लाभ के पद पर होते हैं। उन लोगों को भी वेतन मिलता है।

---

* वही, 136

**सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 19 मई, 1949, पृ. 138

***वही, पृष्ठ 141

माननीय डॅ. बी.आर. अम्बेडकर : वे लोग सरकार के अधीन नहीं होते। अत: वे लोग इसके अन्तर्गत नहीं आते।

माननीय सभापति : तब ठीक है।

* * * * *

#माननीय सभापति : क्या कोई अन्य भी बोलना चाहते हैं। क्या डॉ. अम्बेडकर को कुछ कहना है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं माननीय श्री जी.एस. गुप्ता के नाम से प्रस्तुत संशोधन संख्या 1587 को छोड़कर किन्हीं और संशोधनों को स्वीकार नहीं करता।

(डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ।)

***माननीय सभापति :** फिर आगे श्री कामत का संशोधन संख्या 1585 है। लेकिन, डॉ. अम्बेडकर के संशोधन स्वीकृत हो जाने के बाद उसे प्रस्तुत करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

फिर श्री गुप्ता का संशोधन संख्या 1587 है जिसमें "और" शब्द का विलोप किए जाने की बात कही गई है। या उसके स्थान पर "अथवा" शब्द को प्रतिस्थापित किया जाना है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह एक ही बात है। 'और' शब्द को विलोप किया जाए या फिर उसके स्थान पर 'अथवा' शब्द को प्रतिस्थापित किया जाए।

माननीय सभापति : प्रस्ताव है:

"कि अनुच्छेद 83 के खण्ड (1) के उपखण्ड (घ) के अंत में आए "और" शब्द का विलोप किया जाए।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

ख्अनुच्छेद 83, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।,

* * * * *

अनुच्छेद ८५

****माननीय सभापति :** हम लोगों ने उस विषय पर काफी रोचक चर्चा की जो कि किसी संशोधन की विषय-वस्तु नहीं है। इस खण्ड विशेष जिस पर पंडित मैत्रा बोल चुके हैं, को बदलने या उसमें कोई संशोधन करने हेतु कोई प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं किया गया है। उस मुद्दे पर कोई भी संशोधन प्रस्तुत नहीं किया गया है।

#वही पृष्ठ 142

*· वही, 155-157

अब मैं मत लूंगा। क्या डॉ. अम्बेडकर कुछ कहना चाहेंगे?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं, जब तक श्री कामत मुझे जवाब देने के लिए न कहें। श्री अलादि और अन्य लोग पहले ही जवाब दे चुके हैं और मैं भी अधिकतर उन्हीं बातों को दोहराऊँगा, मेरा तरीका अलग हो सकता है।

माननीय सभापति : फिर संशोधन संख्या 1627, श्री जसपतराय कपूर का संशोधन। मैं समझता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर इसे स्वीकार करने के इच्छुक हैं।

प्रस्ताव है:

"कि अनुच्छेद 85 के खण्ड (4) में 'संसद के किसी सदन' शब्दों के बाद 'अथवा कोई समिति' शब्दों को अन्त:स्थापित किया जाए।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[अनुच्छेद 85 को संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद ८६

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** (बॉम्बे जनरल) : महोदय, मुझे खेद है कि मैं अपने मित्र श्री लारी के संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता। दूसरी तरफ बैठे श्री अनन्तश्यानम अयंगर और श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के साथ हुई मेरी पूरी सहमति के दृष्टिगत प्रस्तावकर्ता द्वारा दिए गए तर्कों पर विस्तृत उत्तर दिए जाने की आवश्यकता नहीं है। मेरे विचार से वे लोग जो कुछ कह चुके हैं उसमें और अधिक बातें जोड़कर सभा का वक्त बर्बाद करना वांछनीय नहीं है। उन लोगों का उत्तर मुझे पूरा लगता है।

फिर भी मैं श्री संथानम के इस संशोधन को स्वीकार करता हूँ कि 'भारतीय राज्य के विधानमण्डल' शब्दों के स्थान पर 'संविधान सभा' शब्दों को प्रतिस्थापित किया जाए।

[श्री संथानम के संशोधन को छोड़कर अन्य सभी संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 86 के यथासंशोधित रूप को संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 20 मई, 1949, पृ. 172

**वही, पृष्ठ 178

अनुच्छेद ८८

****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 88 के खण्ड (2) में 'दोनों सदन हैं' शब्दों के स्थान पर उस खण्ड के उपखण्ड (ग) में उल्लिखित सदन है" शब्द प्रतिस्थापित किए जाएँ।

महोदय, यह उपखण्ड (ग) में उल्लिखित सदन के बारे में स्पष्टीकरण दिए जाने का मामला भर है।

माननीय सभापति : संशोधन संख्या 1651 मैं समझता हूँ कि वह भी इसमें शामिल हो चुका है।

(संशोधन संख्या 1652 प्रस्तुत नहीं किया गया।)

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 88 के खण्ड (2) में अन्तिम शब्द 'शब्दों' के पहले 'बाद के' के शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।

(संशोधन संख्या 1654 प्रस्तुत नहीं किया गया।)

माननीय श्री के. संथानम : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 88 के खण्ड (4) में आए 'कुल संख्या' शब्दों को विलोप किया जाए।

महोदय, मैं उस परन्तुक के विलोप पर जोर नहीं देना चाहता, मैं इस आशय का संशोधन चाहता हूँ कि...

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यदि मेरे माननीय मित्र इस मामले को प्रारूप समिति द्वारा विचार किए जाने हेतु छोड़ दें तो मैं उनका बड़ा आभारी रहूँगा और फिर हम इस मामले को बाद में ले सकते हैं।

माननीय के. संथानम : महोदय, मुझे स्वीकार है।

* * * * *

अनुच्छेद ८८

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मरे मित्र श्री कामत द्वारा प्रस्तुत किए गए संशोधन के बारे में ही उत्तर दिए जाने की जरूरत है। उन्होंने अपने संशोधन संख्या 1656 के माध्यम से "इस संविधान के प्रयोजनार्थ" शब्दों का विलोप किए जाने

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 20 मई, 1949, पृ. 183

की मांग की है। मेरा यह मानना है कि वे शब्द बहुत आवश्यक हैं और उन्हें बनाए रखा जाना चाहिए। मैं ऐसा इसिलए कह रहा हूँ क्योंकि अनुच्छेद 87 के खण्ड (2) और अनुच्छेद 91 में अन्तर्विष्ट उपबंधों में ये शब्द मिलेंगे। अनुच्छेद 87 के खण्ड (2) के अनुसार, मुख्य उपबंध इस प्रकार किया गया है कि प्रत्येक सदन द्वारा अपने सदस्यों की पृथक बैठकाों में विधेयक को स्वतंत्र रूप से पारित किया जाएगा। उसके बाद अनुच्छेद 91 के अधीन संविधान में यह प्रावधान किया गया है कि विधेयक राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए उसके पास प्रस्तुत किया जाएगा। मेरे मित्र श्री कामत इस बात को महसूस करेंगे कि अनुच्छेद 88 में अन्तर्विष्ट उपबंध अनुच्छेद 87 के खण्ड (2) में अन्तर्विष्ट मुख्य उपबंधों से अलग हट कर है। इसलिए, यह बताया जाना आवश्यक है कि संयुक्त बैठक में पारित विधेयक इस तथ्य के बावजूद राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा कि अनुच्छेद 87 के खण्ड (2) में अन्तर्विष्ट मुख्य उपबंधों से यह अलग है। इसलिए, मेरा यह कहना है कि "इस संविधान के प्रयोजनार्थ" शब्द मेरे विचार से जरूरी हैं और ये फालतू नहीं हैं।

अनुच्छेद 88 में अन्तर्विष्ट उपबंधों के संबंध में बहुत सारे वक्ताओं ने जो समुक्ति की है, उसके बारे में मैं यही कह सकता हूँ कि उन लोगों ने जो आशंका व्यक्त की है, वह कुछ हद तक जायज है लेकिन जैसा कि अन्य सदस्यों ने कहा है कि किसी भी अर्थ में यह कोई नया उपबंध नहीं है। यह अन्य देशों के संविधानों में भी अन्तर्विष्ट है और इसलिए उन लोगों से मेरा यह सुझाव है कि वह इस अनुच्छेद को उसी रूप मे रहने दें, जिस रूप में यह है और देखें कि आगे क्या होता है। यदि उन लोगों की आशंका सच साबित होती है तो मुझे इसमें कोई संशय नहीं है कि कुछ माननीय सदस्य संविधान के संशोधन के लिए निर्धारित प्रक्रिया के माध्यम से इस अनुच्छेद में संशोधन किए जाने का प्रस्ताव करने हेतु आगे आएंगे।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, इस अनुच्छेद पर विचार किए जाने पर मुझे ऐसा लगता है कि इसके बारे में आगे और विचार किए जाने की जरूरत है। इसलिए, मेरा आपसे नअुरोध है कि इस अनुच्छेद पर आज मत न लें।

माननीय सभापति : इस अनुच्छेद के संबंध में 4 संशोधन प्रस्तुत किए गए हैं और पहला संशोधन अनुच्छेद 90 के खण्ड (1) के संबंध में है, जिसकी संख्या 1669 है, उसमें 'केवल' शब्द का विलोप किए जाने की मांग की गई है। श्री नजरुद्दीन अहमद उस संशोधन के महत्त्व पर जोर देना चाहते हैं। प्रारूप समिति द्वारा उस पर विचार किया जा सकता है। पूरे अनुच्छेद पर विचार होने जा रहा है।

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 20 मई, 1949, पृ. 191

खण्ड ९१

****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 91 के परन्तुक में 'छह सप्ताह के बाद नहीं' शब्दों के स्थान पर 'जितनी जल्दी संभव हो' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।"

श्री नजीरुद्दीन अहमद : इस संशोधन के लिए मेरा एक संशोधन है जिसकी संख्या 94 है।

माननीय सभापति : मैं समझता हूँ कि यह एक प्रारूप मात्र है।

श्री नजीरुद्दीन अहमद : वास्तविक व्यवहार में इससे अन्तर पड़ जाएगा।

माननीय सभापति : तो आप इसे महत्त्वपूर्ण मानते हैं?

श्री टी.टी. कृष्णामाचारी : भाषा में थोड़ी भिन्नता है। मेरे विचार से डॉ. अम्बेडकर का प्रस्ताव बेहतर रहेगा।

माननीय सभापति : मैं इसे मतदान के लिए रखूँगा। इसे प्रस्तुत करने की जरूरत नहीं है। संशोधन संख्या 1689 : यह भी डॉ. अम्बेडकर के संशोधन संख्या 1688 जैसा ही है। हमने इसे उसी रूप में लिया है जिस रूप में प्रस्तुत किया गया है। क्या इसे प्रस्तुत किया जाना जरूरी है? यदि इसमें थोड़ा भी अन्तर हो तो आप इसे प्रस्तुत कर सकते हैं।

* * * * *

***माननीय सभापति :** मैं अब संशोधनों पर मत लूंगा। डॉ. अम्बेडकर क्या आप कुछ कहना चाहेंगे?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं महोदय, मेरे विचार से इस पर कोई जवाब आवश्यक नहीं है।

नजरुद्दीन अहमद का संशोधन अस्वीकृत हुआ।

* * * * *

माननीय सभापति : मैं अब संशोधनों पर मत लूँगा। डॉ. अम्बेडकर, क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

[डॉ. अम्बेडकर के संशोधन स्वीकृत हुए। अन्य संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 91, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

** वही, पृष्ठ 192

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 20 मई, 1949, पृ. 195

अनुच्छेद ६७-क

****माननीय सभापति :** हम अनुच्छेद 67-क पर विचार करेंगे जिसे उस दिन लिया गया था और जो स्थगित कर दिया गया था।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई-जनरल) : महोदय, मैं सभा से इस अनुच्छेद को वापस लेने की अनुमति चाहता हूँ।

माननीय सभापति : मैं समझता हूँ कि उन्होंने जब इसे प्रस्तुत किया ही नहीं, तो फिर इसे वापस लेने का प्रश्न ही नहीं उठता।

श्री बी. पोकर साहिब (मद्रास : मुस्लिम) : नहीं, इसे प्रस्तुत किया जा चुका है और यह सभा के स्वामित्व में है। इसलिए, माननीय सदस्य को इसे वापस लेने का कारण बताना चाहिए।

माननीय सभापति : जी हाँ, मुझे खेद है कि मुझसे गलती हो गई। माननीय डॉ. अम्बेडकर इस अनुच्छेद को वापस लिए जाने का कारण बताएंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय इसका कारण यह है जैसा कि मैं पिछली बार बता चुका हूँ कि हमने संसद में कतिपय व्यक्तियों को नाम-निर्देशित किए जाने का उपबंध किया है। मूल प्रस्ताव में 15 व्यक्तियों के नाम-निर्देशित किए जाने का प्रावधान था, बाद में यह निर्णय लिया गया कि इन 15 व्यक्तियों को दो श्रेणियों में विभाजित कर दिया जाए, अर्थात् 12 व्यक्ति साहित्य, विज्ञान, कला, समाज सेवा आदि क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाले हों और 3 व्यक्ति किसी विधेयक विशेष के संबंध में संसद की सभाओं की सहायता करने तथा परामर्श देने हेतु नाम-निर्देशित किए जाएं। महोदय, मेरा यह मानना है कि अनुच्छेद 67, जो राष्ट्रपति को संसद में 12 व्यक्तियों को नाम-निर्देशित किए जाने की अनुमति देता है, में ऐसा उपबंध पहले से ही अन्तर्विष्ट है और उससे ही इस नए अनुच्छेद 67 (क) में किए जाने वाले उपबंध का प्रयोजन पूरा हो जाएगा। अनुच्छेद 67 (क) के कानून के रूप में पारित हो जाने पर उसके माध्यम से नाम-निर्देशित किए जाने वाले व्यक्ति, जो सेवा प्रदान करेंगे, वही सेवा अनुच्छेद 67 के अधीन नाम-निर्देशित किए गए व्यक्तियों द्वारा भी प्रदान किया जा सकेगा, और इसलिए अनुच्छेद 67 (क) के अधीन नाम-निर्देशित किया जाना अनुच्छेद 67 में शामिल नाम-निर्देशित किए जाने की प्रणाली की नकल भर होगी। इसके अलावा, यह भी महसूस किया जा रहा है कि एक स्वतंत्र संसद, जो कि पूरी तरह से सम्प्रभु है और वह लोगों का प्रतिनिधित्व करती है, के अन्दर नाम-निर्देशित किए जाने वाले प्रावधानों

**· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 20 मई, 1949, पृ. 197

की अधिकता नहीं होनी चाहिए। हमारे यहां पहले से ही 12 नाम-निर्देशित सदस्यों का प्रावधान है; एंग्लो-इंडियन के बारे में भी कुछ नाम-निर्देशित किए जाने का प्रावधान किया जा सकता है और इसलिए, यह माना जाता है कि नाम-निर्देशित सदस्यों की संख्या बढ़ाते चले जाना संसद के लोकप्रिय तथा प्रतिनिधिमूलक चरित्र का अपमान करने जैसा होगा। इसलिए, मैं अनुच्छेद 67 (क) को वापस लेना चाहता हूँ।

सभा की स्वीकृति से अनुच्छेद 67-क वापस लिया गया।

अनुच्छेद ९२ से ९९ के संबंध में वक्तव्य

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि अब हम अनुच्छेद 100 से शुरुआत करें।

माननीय सभापति : मैं समझता हूँ कि इस समय अनुच्छेद 92 से 99 पर चर्चा स्थगित कर दी जानी चाहिए ताकि वित्त और वित्त विधेयकों से संबंधित कार्य को पूरा किया जा सके और उन पर आगे और चर्चा की जा सके।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हाँ, स्थिति इस प्रकार है। जब अनुच्छेद 90 पर बहस चल रही थी, उस समय मैंने सुझाव दिया था कि बहस पर चर्चा पूरी नहीं की जाए और उस पर मत न लिया जाए क्योंकि उस समय मुझे लगा था कि उस अनुच्छेद में कुछ त्रुटि है, जिसे मेरे विचार से सही किया जाना चाहिए था और अब यदि उस त्रुटि को सही किया जाना है तो अनुच्छेद 96 से 99 पर उस अनुच्छेद के अनुसरण में फिर से विचार किए जाने की जरूरत है। अनुच्छेद 91 हम पारित कर चुके हैं। अनुच्छेद 92 से 99 पर आगे और विचार किए जाने की आवश्यकता है और इसलिए मैं चाहता हूँ कि वर्तमान में उन अनुच्छेदों पर चर्चा स्थगित कर दी जानी चाहिए। लेकिन हम अनुच्छेद 100 से कार्यवाही शुरू कर सकते हैं।

[अनुच्छेद 100 स्वीकृत हुआ और डॉ. अम्बेडकर द्वारा दिए गए सुझाव के अनुरूप उसे संविधान में जोड़ दिया गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १०१

#**माननीय डॅ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, जहाँ तक श्री कामत के संशोधन का प्रश्न है, मुझे नहीं लगता कि यह जरूरी है, क्योंकि संसद की कार्यवाहियों के बारे में न्यायालय

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 23 मई, 1949, पृ. 197-98

सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 23 मई, 1949, पृ. 200-01

के अलावा कानूनी रूप से और कहां प्रश्न उठाया जा सकता है? केवल एक ही स्थान है, जहां संसद की कार्यवाहियों पर कानूनी तरीके से प्रश्न खड़ा किया जा सकता है और इसके लिए कानूनी स्वीकृति ली जा सकती है और वह स्थान न्यायालय ही है। इसलिए, इस संशोधन में श्री कामत जिन शब्दों का उल्लेख चाहते हैं, वे अनावश्यक हैं।

जैसा कि मैं बता चुका हूँ कि न्यायालय ही एकमात्र फोरम है, जहाँ पर राष्ट्रपति या अध्यक्ष या किसी अधिकारी या सदस्य के विरुद्ध कानूनी रूप से सवाल खड़ा किया जा सकता है और कानूनी राहत प्राप्त की जा सकती है, इसलिए उस फोरम को विनिर्दिष्ट किया जाना अनावश्यक है। श्री कामत देख सकते हैं कि इसके संबंध में जो मार्जिन नोट है, उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है।

मेरे मित्र श्री नजरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत संशोधन के संबंध में मैं यह कहना चाहता हूँ कि वह इस बात को नहीं समझ पाए हैं कि उपखण्ड (2) में आए 'जिनमें शक्तियां निहित हैं' शब्द महत्त्वपूर्ण है।

श्री नजरुद्दीन अहमद : व्यवस्था बनाए रखने के लिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : 'संसद का कोई अधिकारी या अन्य सदस्य, जिनमें शक्तियां निहित हैं, नहीं' में उल्लिखित व्यक्तियों को उपखण्ड (2) द्वारा संरक्षण मिलता है। अध्यक्ष पहले से ही एक अधिकारी हैं और वह सदस्य भी है, उसमें कोई शक्ति निहित नहीं की जानी है। संविधान ने उसमें शक्ति पहले से निहित कर रखी है। इसलिए, इस संबंध में जो तथ्य है, वह केवल 'अन्य सदस्य, अर्थात् अध्यक्ष या उपाध्यक्ष, जो भी स्थिति हो, के अलावा सदस्य से संबंधित है, जिसे संरक्षण प्रदान किए जाने की जरूरत है।' इसलिए, 'अन्य' शब्द महत्त्वपूर्ण है।

माननीय सभापति : 'या व्यवस्था बनाए रखने के लिए' शब्दों का क्या प्रभाव है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मान लीजिए सभा के अन्दर कोई बवाल हो जाता है। मैं इसका उस तरह से उल्लेख नहीं करना चाहता। लेकिन, मान लें कि सभा के अन्दर अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है और अध्यक्ष किसी सदस्य को हटाए जाने हेतु अपने पास किसी अधिकारी को नहीं पाता है और वह वहां उपस्थित किसी अन्य सदस्य से अव्यवस्था पैदा करने वाले सदस्य को हटाने के लिए कहता है तो फिर वह सदस्य विशेष ही वह सदस्य होगा, जिसमें अध्यक्ष द्वारा यह प्राधिकार निहित किया जाना माना जाएगा और वह सदस्य "अन्य सदस्य" के दायरे में आएगा।

माननीय सभापति : 'क्या कोई अन्य अधिकारी, जो सभा का सदस्य नहीं है', उसके अन्तर्गत आता है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : 'अधिकारी' तो वहाँ होंगे।

श्री एच.वी. कामत : क्या मैं कुछ स्पष्टीकरण माँग सकता हूँ? श्री संथानम ने मेरे संशोधन के बारे में उल्लेख करते हुए कहा था कि किसी संशोधन की वैधता के बारे में केवल विधि न्यायालय में ही नहीं, बल्कि किसी विधानमण्डल में भी, प्रश्न उठाया जा सकता है। क्या डॉ. अम्बेडकर उनकी बात से सहमत हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं अपने द्वारा दिए जाने वाले स्पष्टीकरण के लिए ही जिम्मेदार हूँ।

श्री एच.वी. कामत : डॉ. अम्बेडकर ने जो अभी कहा है कि मार्जिनल उपशीर्षक स्पष्ट है। क्या मैं अन्य फोरम अर्थात् विधानसभा का उल्लेख कर सकता हूँ? मुझे यह बताया गया है कि मार्जिनल शीर्षकों का इस प्रकार के विधान से कुछ भी लेना-देना नहीं है और अनुच्छेदों या धाराओं का उपयोग बिना मार्जिनल शीर्षकों का उल्लेख किए बगैर ही किया जाता है। यदि ऐसा है तो आप मार्जिनल शीर्षक तथा अनुच्छेद को एक साथ नहीं पढ़ते हैं। इसलिए, इसका अर्थ मुझे स्पष्ट नहीं हो रहा है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उस बारे में दो विचार हैं। एक विचार तो यह है कि मार्जिनल नोट धारा का भाग नहीं होता और दूसरा विचार यह है कि वह धारा का भाग होता है : उदाहरण के लिए श्री मावलंकर, जब वह बम्बई में थे, ने यह मत प्रकट किया था कि मार्जिनल नोट धारा का भाग नहीं है। लेकिन बम्बई विधानसभा के वर्तमान अध्यक्ष ने हाल ही में कहा है कि मार्जिनल नोट धारा का ही भाग होता है और उससे धारा का अर्थ स्पष्ट होने में मदद मिलती है।

[दो संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 101 संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १०२

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** माननीय सभापति माहेदय, मेरे मित्र पं. कुंजरू ने इस अनुच्छेद 102 में अन्तर्विष्ट उपबंधों के संबंध में कुछ मौलिक आपत्तियां उठाई हैं। उन्होंने अपने भाषण में कहा है कि हम लोग वस्तुतः भारत सरकार अधिनियम 1935, जिसकी इस देश के सभी दलों ने भर्त्सना की थी, में अन्तर्विष्ट उपबंधों को ही दुबारा से प्रस्तुत कर रहे हैं। मुझे लगता है कि मेरे मित्र पं. कुंजरू ने इस बात का ध्यान नहीं रखा है कि भारत सरकार अधिनियम, 1935 में दो अलग-अलग उपबंध हैं। उपबंधों का एक सेट भारत सरकार अधिनियम की धारा 42 में अन्तर्विष्ट है और दूसरा सेट धारा 43

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 23 मई, 1949, पृ. 213-17

में अन्तर्विष्ट है। धारा 43 में अन्तर्विष्ट उपबंध गवर्नर जनरल को अध्यादेश प्रख्यापित करने की शक्ति प्रदान करता है, जो कि उसकी राय में उन कृत्यों का निर्वहन करने के लिए आवश्यक है, जिनका दायित्व संविधान द्वारा उसे सौंपा गया है और उसका निर्वहन उसे अपने विवेक से तथा वैयक्तिक निर्णय के आधार पर करना जरूरी हो। धारा 43 के अधीन अध्यादेश प्रख्यापित करने की शक्ति गवर्नर जनरल को दी गई है, विधानमंडल को इससे पूरी तरह से बाहर रखा गया था। गवर्नर जनरल, जो चाहे कर सकता था, जो कि उसके विशेष कृत्य का निर्वहन करने के लिए उसकी राय में जरूरी हो। दूसरी बात यह है कि धारा 43 के अधीन गवर्नर जनरल द्वारा उस समय भी अध्यादेश प्रख्यापित किए जा सकतें थे, जबकि विधानमण्डल का सत्र चल रहा हो। धारा 43 के प्रावधानों के अंतर्गत वह समांतर विधायी प्राधिकारी है। यह देखा जा सकता है कि वर्तमान अनुच्छेद 102 में वैसा कोई भी उपबंध अन्तर्विष्ट नहीं है, जो भारत सरकार अधिनियम की धारा 43 में अन्तर्विष्ट थे। अतः राष्ट्रपति के पास कोई स्वतंत्र वैधानिक शक्ति प्राप्त नहीं है, जैसा कि धारा 43 के अधीन गवर्नर जनरल को प्राप्त थी। इस अनुच्छेद के अधीन उसे उन दिनों अध्यादेश प्रख्यापित करने का हक प्राप्त नहीं है, जब विधानमण्डल का सत्र चल रहा हो। हम लोग सिर्फ इतना कर रहे हैं कि धारा 42 के अधीन गवर्नर जनरल को प्रदान की गई शक्तियाँ राष्ट्रपति को अनुच्छेद 102 के उपबंधों के अधीन प्रदान कर दी जाएं। वे उपबंध उस अवधि से संबंधित हैं, जब विधानमंण्डल अवसान की अवस्था में हो, उसका सत्र नहीं चल रहा हो। उसी स्थिति में अनुच्छेद 102 में अन्तर्विष्ट उपबंधों का प्रयोग किया जा सकता है। अनुच्छेद 102 में अन्तर्विष्ट उपबंध राष्ट्रपति को कोई ऐसी शक्ति प्रदान नहीं करते, जो केन्द्रीय विधानमण्डल के पास स्वयं ही नहीं है, क्योंकि उनकी कोई विशेष जिम्मेदारी नहीं होती, उनके पास कोई विवेकाधीन शक्ति नहीं है और न ही वैयक्तिक निर्णय करने का कोई अधिकार दिया गया है। तद्नुसार, मेरा यह कहना है कि मेरे मित्र पं. कुंजरू ने जो तर्क प्रस्तुत किए हैं, वे अनुच्छेद 102 के उपबंधों से काफी परे चला गया है। यदि मैं यह कहूँ कि यह अनुच्छेद कुछ हद तक ब्रिटिश इमरजैंसी पावर्स एक्ट, 1920 में अन्तर्विष्ट उपबंधों के समान है। मैं बड़ी सतर्कता के साथ इस भाषा का प्रयोग कर रहा हूँ। उस अधिनियम के अधीन भी राजा को अध्यादेश जारी करने का हक है और जब अध्यादेश जारी किया जाता है तो कार्यपालिका को किसी मामले को निपटाने के लिए कोई भी विनियम जारी करने का हक प्राप्त हो जाता है और यह अनुमति तब दी जाती है, जब संसद का सत्र नहीं चल रहा हो। सभा से मेरा निवेदन यह है कि ऐसे मामलों के बारे में कल्पना करना कठिन नहीं है, जहां साधारण कानून द्वारा प्रदान की गई कोई शक्तियाँ किसी ऐसी स्थिति में जो अचानक और तत्काल उत्पन्न हो गई हों, से निपटने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकती हैं। ऐसी स्थिति में कार्यपालिका क्या करे? कार्यपालिका के सामने एक नई स्थिति उत्पन्न हो चुकी हो, जिसे प्राक्कलन के

आधार पर निपटाया जाना जरूरी हो और विद्यमान कानून संहिता के अधीन उसे निपटाने की शक्ति उसे प्राप्त नहीं हो। आपात स्थिति से निपटना जरूरी होता है और मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस समस्या का एकमात्र समाधान राष्ट्रपति को ऐसे कानून प्रख्यापित करने की शक्ति प्रदान करना है, जिससे उस स्थिति से निपटने में कार्यपालिका समर्थ हो सके क्योंकि वह कानून की साधारण प्रक्रिया को अपनाने की स्थिति में नहीं होती और फिर यह मान लेना चाहिए कि उस समय विधानमण्डल का सत्र नहीं चल रहा होगा। इसलिए मुझे तो नहीं लगता कि अनुच्छेद 102 में अन्तर्विष्ट उपबंधों पर मूल रूप से आपत्ति किए जाने का कोई आधार है।

मेरे मित्र श्री पोकर ने अपने संशोधन संख्या 1796 में जो बात उठाई है, उसमें उन्होंने यह तर्क दिया है कि ऐसे किसी भी अध्यादेश के माध्यम से किसी नागरिक को उसकी वैयक्तिक स्वतंत्रता के मूलाधिकार से सक्षम विधि न्यायालय द्वारा दोष सिद्ध होने के अलावा और किसी ढंग से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। अब जहां तक उनके संशोधन का संबंध है, मैं समझता हूँ कि इन्होंने अनुच्छेद 102 का खण्ड (3) नहीं पढ़ा है। अनुच्छेद 102 के खण्ड (3) में यह निर्धारित किया गया है कि अनुच्छेद 102 के उपबंधों के अधीन राष्ट्रपति द्वारा बनाया गया कोई भी कानून उन्हीं सीमाओं के विषयाधीन होगा जो सामान्य प्रक्रिया के माध्यम से विधानमण्डल द्वारा बनाए गए किसी कानून के मामले में लागू होती हैं। अब विधानमण्डल द्वारा साधारण प्रक्रिया के माध्यम से कोई कानून बनाया जाता है तो वह इस प्रारूप संविधान के मूलाधिकारों से संबंधित अनुच्छेदों में अन्तर्विष्ट उपबंधों के विषयाधीन होगा। ऐसी स्थिति में अनुच्छेद 102 के उपबंधों के अधीन बनाया गया कोई भी कानून नागरिकों के मूलाधिकारों से संबंधित उपबंधों के विषयाधीन होगा और इसलिए ऐसा कोई भी कानून उन उपबंधों को अवक्रमित करने में समर्थ नहीं हो सकेगा और मेरे मित्र श्री पारित द्वारा अपने संशोधन संख्या 1796 में सुझाए गए किसी उपबंध की जरूरत नहीं है।

मेरे मित्र श्री कामत द्वारा सुझाया गया संशोधन अर्थात् 1793 मुझे बिल्कुल प्रयोजनरहित लगता है। मान लें किसी एक सभा का सत्र चल रहा हो और दूसरी सभा का सत्र नहीं चल रहा हो। यदि ऐसी स्थिति, जैसी कि मैंने सुझाई है, उत्पन्न होती है तो फिर अनुच्छेद 102 के उपबंध आवश्यक हैं क्योंकि इस संविधान के अनुसार कोई भी कानून किसी एक ही सभा के द्वारा पातिर नहीं किया जा सकता। कानून बनाने की प्रक्रिया में दोनों सभाओं को भाग लेना होगा। इसलिए, किसी एक ही सभा की उपस्थिति वस्तुतः सभी स्थितियों को पूरा नहीं कर पाती।

श्री एच.वी. कामत : क्या इसका अर्थ यह है कि जब एक सभा मान लीजिए लोक सभा सत्र में नहीं हो, तो भी राष्ट्रपति के पास यह शक्ति होगी?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हां, उस शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है क्योंकि कानून पारित करने के लिए आवश्यक ढांचा उस समय सामान्य प्रक्रिया में विद्यमान नहीं होता।

श्री एच.वी. कामत : मैं तो यह कहूँगा कि यह स्थिति शर्मनाक होगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अब, मैं अपने मित्र श्री कुंजरू द्वारा संशोधन संख्या 1802 में उठाए गए दूसरे प्रश्न पर आता हूँ। उनका सुझाव है कि अनुच्छेद 102 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा अधिनियमित किया गया ऐसा कोई भी कानून अध्यादेश प्रख्यापित होने के 30 दिनों के बाद स्वत: ही समाप्त हो जाना चाहिए। प्रारूप अनुच्छेद में अन्तर्विष्ट उपबंध यह है कि यह कानून संसद की बैठक के बाद 6 सप्ताह तक जारी रहेगा। अब पं. कुंजरू ने अपने संशोधन लाने का जो कारण दिया है वह यह है; वह कहते हैं कि प्रारूप अनुच्छेद में अन्तर्विष्ट उपबंधों के अधीन 6 सप्ताह से अधिक की अवधि ली जा सकती है क्योंकि वह ऐसा सोचते हैं कि कार्यपालिका संसद को आहूत करने में एक महीने या दो महीने का समय ले सकती है। यदि संसद का सत्र चार महीने के बाद बुलाया जाता है, तो फिर 6 सप्ताह का समय भी रहना चाहिए क्योंकि यह व्यावहारिक होगा या इससे भी लम्बा समय रखा जा सकता है, यदि कार्यपालिका संसद को आहूत करने में विलम्ब करती है। ठीक है, हालांकि मैं नहीं जानता कि वास्तव में क्या होगा, लेकिन मेरा यह कहना है कि मेरे माननीय मित्र पं. कुंजरू ने जो आशंका व्यक्त की है, वह वास्तव में निराधार है क्योंकि हमने एक दूसरे अनुच्छेद 69 का उपबंध किया है, जिसमें कहा गया है कि संसद के दो सत्रों के बीच की अवधि 6 महीने से अधिक की नहीं होगी और मेरा विश्वास है कि संसदीय कार्य की तात्कालिकता को देखते हुए संसद के सत्र कहीं अधिक जल्दी-जल्दी बुलाए जाएंगे, जितने कि माननीय सदस्यगण वर्तमान में सोच रहे हैं। इसलिए, मेरा यह कहना है कि अनुच्छेद 69 को देखते हुए, कार्य की तात्कालिकता को देखते हुए और विद्यमान सरकार द्वारा संसद का विश्वास बनाए रखने की अनिवार्यता को देखते हुए कार्यपालिका द्वारा ऐसी किसी भी विलम्बकारी प्रक्रिया की अनुमति दी जा सकेगी, जिससे अनुच्छेद 102 के अधीन प्रख्यापित किसी अध्यादेश को लम्बे समय तक लागू करने की अनुमति दी जा सकेगी और इसलिए मैं समझता हूँ कि प्रारूप अनुच्छेद के विद्यमान उपबंधों को बनाए रखे जाने की अनुमति दी जानी चाहिए।

श्री एच.वी. कामत : सभापति महोदय, क्या मैं अंतिम प्रश्न पूछ सकता हूँ? क्या यह स्वतंत्रता और लोकतंत्र के प्रति हमारे विचारों या अवधारणाओं के विपरीत नहीं होगा और जैसा कि मैं मानता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर भी नहीं चाहेंगे कि इस अनुच्छेद में अध्यादेश को लम्बे समय तक बनाए रखने की अनुमति दी जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरा स्वयं का यह मानना है कि मेरे माननीय मित्र श्री कामत तथा मेरे सम्मानित मित्र श्री कुंजरू ने इसके विरुद्ध जो भावना व्यक्त की है , उसका ठोस कारण वस्तुतः इस अध्याय के दुर्भाग्यपूर्ण शीर्षक "राष्ट्रपति की विधायी शक्तियां" से उत्पन्न हुआ है। यह होना चाहिए था "संसद के सत्र नहीं होने की स्थिति में विधान बनाने की शक्ति" मैं समझता हूँ कि इस प्रकार का हानिरहित शीर्षक यदि इस अध्याय को दे दिया जाता तो इस उपबंध के प्रति जो नाराजगी प्रकट हो रही है, वह समाप्त हो जाती। हां, 'अध्यादेश' एक खराब शब्द है। लेकिन, यदि श्री कामत अपनी प्रखर कल्पनाशक्ति के माध्यम से कोई बेहतर शब्द सुझाएं तो उसे स्वीकार करने वाला पहला व्यक्ति मैं होऊँगा। मैं 'अध्यादेश' शब्द को पसंद नहीं करता, लेकिन इसके स्थान पर मैं कोई अन्य शब्द ढूंढ नहीं पा रहा हूँ।

माननीय सभापति : सरदार हुकम सिंह द्वारा एक दूसरा संशोधन उपस्थित किया गया है, जिसमें कहा गया है कि राष्ट्रपति अपनी मंत्रिपरिषद के परामर्श से अध्यादेश प्रख्यापित कर सकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसके बारे में ध्यान दिलाने के लिए मैं आपका बड़ा आभारी हूँ। बात यह है कि वह संशोधन अनावश्यक है क्योंकि राष्ट्रपति मंत्रियों की सलाह के बगैर कोई कार्य नहीं कर सकता।

माननीय सभापति : प्रारूप संविधान में ऐसा उपबंध कहाँ पर है, जो राष्ट्रपति को मंत्रियों की सलाह के अनुरूप कार्य करने के लिए बाध्य करता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे विश्वास है कि ऐसा एक उपबंध है और उपबंध यह है कि राष्ट्रपति को अपने कृत्यों का निर्वहन करने के लिए सलाह देने तथा सहायता करने हेतु एक मंत्रिपरिषद् होगी।

माननीय सभापति : चूंकि हमारे पास यह लिखित संविधान है, इसलिए उसका कहीं स्पष्ट तौर पर उल्लेख होना चाहिए था।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यद्यपि, उसके बारे में मैं अभी तुरन्त नहीं बता सकता, लेकिन मुझे विश्वास है कि ऐसा एक उपबंध है। मैं समझता हूँ कि ऐसा एक उपबंध है कि राष्ट्रपति मंत्रियों की सलाह को स्वीकार करने के लिए बाध्य होगा। वास्तव में वह अपने मंत्रियों की सलाह के बगैर कोई कार्य नहीं कर सकता।

कुछ माननीय सदस्य : अनुच्छेद 61 (1)

माननीय सभापति : यह केवल मंत्रियों के कर्त्तव्य का निर्धारण करता है। लेकिन उसके अन्तर्गत मंत्रियों की सलाह के अनुरूप कार्य करना राष्ट्रपति का कर्त्तव्य होगा, ऐसा निर्धारित नहीं किया गया है। ऐसा नहीं कहा गया है कि राष्ट्रपति सलाह मानने के

लिए बाध्य है। क्या संविधान में कोई अन्य और उपबंध हैं? हम लोग उस पर महाभियोग भी लगाने की स्थिति में नहीं होंगे क्योंकि यदि कोई उपबंध ही नहीं होगा, तो उसका कोई भी कृत्य संविधान का उल्लंघन नहीं माना जाएगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं आपका ध्यान अनुच्छेद 61 की ओर खींचना चाहता हूँ, जिसमें राष्ट्रपति के कार्यों के बारे में बताया गया है। वह कोई भी कार्य अपने कृत्यों के उपयोग के अन्तर्गत तब तक नहीं कर सकता, जब तक उसे ऐसा करने की सलाह न दी गई हो। यह केवल 'सहायता देने और सलाह करने' तक ही सीमित नहीं है। 'अपने कृत्यों के निर्वहन के मामले में' वे शब्द अति महत्त्वपूर्ण हैं।

माननीय सभापति : मुझे तो शंका है कि यह शब्द राष्ट्रपति के लिए बाध्यकारी हो सकेगा। इसमें केवल यह कहा गया है कि राष्ट्रपति के कृत्यों का प्रयोग किए जाने के लिए उसे सहायता करने और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी, जिसका प्रमुख प्रधानमंत्री होगा। इसमें यह नहीं कहा गया है कि राष्ट्रपति उस सलाह को स्वीकार करने के लिए बाध्य होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यदि, वह विद्यमान मंत्रालय की सलाह स्वीकार नहीं करता तो उसे सलाह प्राप्त करने के लिए कोई और मंत्रिपरिषद् ढूंढना पड़ेगा। वह मंत्रियों से स्वतंत्र होकर कार्य करने में कभी समर्थ नहीं होगा।

माननीय सभापति : क्या किसी स्थान पर ऐसा उपबंध करने में वास्तव में कोई कठिनाई है कि राष्ट्रपति मंत्रियों की सलाह मानने के लिए बाध्य होगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हम वैसा कर रहे हैं। यदि मैं यह कहूँ कि ऐसा एक उपबंध अनुदेश में दिया गया है।

माननीय सभापति : मैंने उस पर भी विचार किया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : पैरा 3 में कहा गया है : संघ की कार्यपालिका शक्ति के दायरे के अन्दर सभी मामलों में राष्ट्रपति अपनी प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करने के मामले में अपने मंत्रियों की सलाह पर कार्य करेगा। हम उसमें कुछ संशोधन करने का प्रस्ताव करते हैं।

माननीय सभापति : आप उसे बदलना चाहते हैं। विद्यमान उपबंध यह कहता है कि राष्ट्रपति संघ की कार्यपालिका शक्तियों के प्रयोग करने के मामले में मंत्रियों द्वारा दिशा-निर्देशित होगा और ऐसा उसकी विधायी शक्ति के मामले में नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अनुच्छेद 61 के अधिकतर उपबंध अन्य संविधानों से अक्षरश: लिए गए हैं और राष्ट्रपतियों ने हमेशा इस बात का ध्यान रखा है कि उसमें प्रयुक्त भाषा का अर्थ यह है कि उन्हें सलाह माननी चाहिए। यदि कोई दिक्कत होगी,

तो निश्चय ही उसे उपयुक्त संशोधन द्वारा सही कर लिया जाएगा।

श्री एच.वी. कामत : किसी अध्यादेश के प्रचालन की अधिकतम अवधि के विषय पर आप इस अनुच्छेद को मौन रखने जा रहे हैं, वह अवधि साढ़े सात महीनों की हो सकती है। ऐसा होना असम्भव है।

माननीय सभापति : क्या श्री कामत अपने संशोधन पर दूसरा भाषण देने जा रहे हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हमारे राष्ट्रपति की स्थिति संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति से बिल्कुल अलग है।

[सभी 6 संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 102 संविधान में जोड़ा गया।]

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि भाग 5 के अध्याय 4 के शीर्षक में आए 'संघीय न्यायाधिकार' शब्दों के स्थान पर 'संघीय न्यायपालिका' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।

ऐसा पूर्व के अनुच्छेद, जिसमें भारत को संघ के रूप में वर्णित किया गया है, के परिणामस्वरूप करना पड़ रहा है।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

* * * * *

अनुच्छेद १०२ - क

माननीय सभापति : रात के आठ बज चुके हैं। मेरे विचार से अब चर्चा बंद कर देना बेहतर रहेगा।

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद : (बिहार : जनरल) : मैं इस प्रस्ताव पर बोलने के लिए सभा का एक मिनट लेना चाहता हूँ।

माननीय सभापति : मैं समझता हूँ कि सभा अब आगे कोई भी भाषण सुनने की इच्छुक नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं नहीं समझता कि इसका कोई उत्तर दिया जाना आवश्यक है। यदि मैं ऐसा कहूँ कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि प्रो. शाह ने यह संशोधन प्रस्तुत किया है। जब हम लोग राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों पर चर्चा कर रहे थे उस समय इस मामले पर व्यापक रूप से चर्चा की गई थी। इसलिए मैं नहीं समझता कि इस मामले को दुबारा से उठाया जाए, इसलिए इस पर किसी प्रकार की बहस होनी चाहिए। इस मुद्दे पर व्यवहारिक तौर पर अनुच्छेद 39-क के अंतर्गत समाप्त कर दिया गया था।

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 23 मई, 1949, पृ. 218

माननीय सभापति : मैं अब संशोधन पर मत लूँगा।

[संशोधन अस्वीकृत हुआ।]

* * * * *

अनुच्छेद १०३

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : (बम्बई - जनरल) :** सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 103 के खण्ड (1) में "और कम से कम सात अन्य न्यायाधीशों से जैसा संसद विधि द्वारा विहित करे" के स्थान पर "जब तक संसद विधि द्वारा अधिक संख्या विहित नहीं करती है, तब तक सात से अनाधिक अन्य न्यायाधीशों से मिलकर बनेगा।"

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि जब तक संसद कानून के द्वारा न्यायाधीशों की संख्या निर्धारित नहीं करती तब तक उच्चतम न्यायालय का गठन नहीं किया जाना चाहिए। संशोधन में यह निर्धारित किया गया है कि सात न्यायाधीशों से उच्चतम न्यायालय का गठन होगा।

* * * * *

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"खण्ड (3) के स्पष्टीकरण में 'न्यायिक पद' शब्दों के बाद 'जो जिला न्यायाधीश के पद से अवर नहीं है' शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।"

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 103 के खण्ड (4) में "कम से कम दो तिहाई बहुमत से" संसद के दोनों सदनों के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों द्वारा राष्ट्रपति के समक्ष रखे जाने पर शब्दों के स्थान पर संसद के प्रत्येक सदन द्वारा अपनी कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा समर्थित समावेदन राष्ट्रपति के समक्ष रखे जाने पर, शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।

माननीय सभापति : डॉ. बख्शी टेकचन्द द्वारा इस संशोधन में एक संशोधन प्रस्तुत किया गया है, जिसके बारे में उन्होंने नोटिस दिया है। संशोधनों के संशोधन में अन्तर्विष्ट मुद्रित पैम्फलेट में संख्या 101 दी गई है।

संशोधन प्रस्तुत नहीं किया गया।

* * * * *

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 23 मई, 1949, पृ. 230

\# सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 23 मई, 1949, पृ. 242-43

***माननीय संभापति :** संशोधन संख्या 1857 एक शाब्दिक संशोधन है। संशोधन संख्या 1858 प्रो. के.टी. शाह के नाम से है। क्या वह संशोधन 'अक्षमता और दुर्व्यवहार' शब्दों के द्वारा कवर नहीं होता?

प्रो. के.टी. शाह : यदि आपके विचार में ऐसा है, तो मैं इसे स्वीकार कर लूंगा। मैं इसे प्रस्तुत नहीं करता।

* * * * *

माननीय सभापति : ....संशोधन संख्या 1862 डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के नाम से है। वह भी एक औपचारिक संशोधन है जिसका उद्देश्य 'घोषणा' शब्दों के स्थान पर 'प्रतिज्ञान या शपथ' शब्दों से प्रतिस्थापित किया जाना है। प्रारूप संविधान के अन्य भागों में जहां भी ये शब्द आए हैं, वहां हमने इसी प्रकार के परिवर्तन किए हैं। मैं यह मान लेता हूँ कि इसे प्रस्तुत कर दिया गया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महादेय, मैं औपचारिक रूप से प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 103 के खण्ड (6) 'घोषणा' शब्दों के स्थान पर 'प्रतिज्ञान या शपथ' शब्द प्रतिस्थापित किया जाए।"

* * * * *

#**माननीय सभापति :** डॉ. अम्बेडकर क्या आप संशोधनों के बारे में कुछ कहना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : सभापति महोदय मैं दो संशोधनों को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। उनमें से एक तो श्री संथानम द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 1829 है और दूसरा श्री कामत द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 1845 है। इनके माध्यम से उन्होंने यह प्रस्ताव किया है कि जूरियों को भी सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया जा सकता है। लेकिन, श्री कामत के संशोधन संख्या 1845 के संबंध में मैं एक आपत्ति दर्ज कराना चाहूँगा और वह आपत्ति यह है कि मैं अभी तक अपने दिमाग में इस बात को तय नहीं कर पाया हूँ कि "विशिष्ट" शब्द इस संदर्भ में समुचित बैठता है। मुझे यह सुझाव दिया गया है कि "प्रख्यात" शब्द कहीं अधिक समुचित होगा। लेकिन, जैसा कि मैंने कहा कि मैं इस विषय पर अपने मन को स्थिर नहीं कर पाया हूँ और इसलिए मैं इस आपत्ति को प्रारूप समिति को प्रेषित करने के पक्ष में हूँ कि प्रारूप

*· वही, 244

सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 23 मई, 1949, पृ. 2

समिति जब संविधान को संशोधित तरीके से तैयार करे तो उस समय उसे जो सही लगे उसे रखने की उसे स्वतंत्रता है कि वह “विशिष्ट” शब्द को स्वीकार करे अथवा उसके स्थान पर “प्रख्यात” शब्द का प्रयोग करे अथवा कोई और समुचित शब्द डाले।

अब, महोदय, इस अनुच्छेद के बारे में प्रस्तुत किए गए बहुत सारे संशोधनों के संबंध में मुझे यह कहना है कि इनके माध्यम से वास्तव में तीन मुद्दे उठाए गए हैं। पहला तो यह कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति किस प्रकार की जानी है? अब इस मामले विशेष से संबंधित विभिन्न संशोधनों को एक समूह में डालने पर मैं तीन अलग-अलग प्रकार का प्रस्ताव पाता हूँ। पहला प्रस्ताव तो यह है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति मुख्य न्यायाधीश की सहमति से की जानी चाहिए। एक विचार तो यह है। दूसरा विचार यह है कि राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियों को संसद द्वारा दो तिहाई मतों से पुष्टि किए जाने का विषयाधीन बनाया जाना चाहिए और तीसरा सुझाव यह है कि उनकी नियुक्ति राज्यों की परिषद् के परामर्श से की जानी चाहिए।

इस मामले के संबंध में मैं पूरी तरह से सहमत हूँ कि जो मुद्दे उठाए गए हैं, वे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं। सभा में इस बारे में कोई मतभेद नहीं हो सकता कि हमारी न्यायपालिका को कार्यपालिका से पूरी तरह स्वतंत्र तथा स्वयं में सक्षम होना चाहिए। और प्रश्न यह है कि इन दोनों उद्देश्यों की प्राप्ति किस प्रकार से हो सकती है। अन्य देशों में इस मामले को दो विभिन्न तरीकों से शासित किया जाता है। ग्रेट-ब्रिटेन में इनकी नियुक्ति राजा द्वारा की जाती है जिसमें किसी प्रकार की कोई सीमा नहीं लगाई गई है अर्थात् उसमें कार्यपालिका का कुछ भी लेना-देना नहीं होता। संयुक्त राज्य अमरीका में इसके विपरीत प्रणाली है। जहां उदाहरण के लिए उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के पदों के साथ-साथ राज्य के अन्य पदों पर नियुक्ति संयुक्त राज्य अमरीका के सीनेट की सहमति से ही की जाएगी। मुझे इन परिस्थितियों में जिनमें हम आज रह रहे हैं, उनमें मुझे यह लगता है कि जिम्मेदारी का अहसास उस हद तक नहीं हो पाया है जितना कि हम संयुक्त राज्य अमरीका के मामले में देखते हैं। इन नियुक्तियों के मामले को राष्ट्रपति पर बिना किसी आपत्ति या सीमा के पूरी तरह से छोड़ दिया जाना बहुत ही खतरनाक होगा अर्थात् उनकी नियुक्ति केवल विद्यमान कार्यपालिका के परामर्श पर किया जाना एक खतरनाक स्थिति होगी। उसी प्रकार से, मुझे ऐसा लगता है कि कार्यपालिका द्वारा की जाने वाली प्रत्येक नियुक्ति को विधानमंडल की सहमति का विषयाधीन बनाया जाना भी बहुत समुचित प्रावधान नहीं है। यह एक अति दुरूह प्रक्रिया होने के साथ-साथ इस प्रकार की नियुक्ति में राजनीतिक दबाव और राजनीतिक विचारों से प्रभावित होने की संभावना भी है। इसलिए, प्रारूप अनुच्छेद में मध्य मार्ग को अपनाए जाने की बात कही गई है। इसके अंतर्गत राष्ट्रपति को नियुक्तियों के मामले में सर्वोच्च और सम्पूर्ण

प्राधिकार नहीं प्रदान किया गया है। इसके अंतर्गत विधानमंडल को भी प्रभावी बनाने की कोशिश नहीं की गई है। अनुच्छेद में यह उपबंध किया गया है कि जो लोग इस प्रकार के मामले में समुचित सलाह देने के लिए पूरी तरह से योग्य हैं, ऐसे व्यक्तियों से परामर्श लिया जाना चाहिए। और मरे विचार से इस प्रकार के उपबंध को वर्तमान में पर्याप्त माना जाना चाहिए।

मुख्य न्यायाधीश की सहमति के प्रश्न के संबंध में मुझे ऐसा लगता है कि जो लोग उस सिद्धांत का समर्थन कर रहे हैं। वे लोग मुख्य न्यायाधीश की निष्पक्षता और उनके निर्णय की न्यायसंगतता के संबंध में उनके निहितार्थ पर विश्वास करते हैं। मेरा व्यक्तिगत तौर पर यह मानना है कि इसमें कोई संदेह नहीं कि मुख्य न्यायाधीश एक प्रख्यात व्यक्ति होता है। लेकिन, आखिरकार, मुख्य न्यायाधीश भी एक मनुष्य है जिसके साथ भी सभी प्रकार की विफलताएँ, भावनाएं और पूर्वाग्रह जुड़े होते हैं जैसा कि हम आम लोगों के साथ होता है और मेरे विचार से न्यायाधीशों की नियुक्ति में व्यावहारिक तौर पर मुख्य न्यायाधीश को वीटो का अधिकार देना वस्तुतः उसमें प्राधिकार का स्थानांतरण किया जाना होगा जोकि हम राष्ट्रपति या सरकार में निहित करने को तैयार नहीं हैं। इसलिए, मैं उसे भी एक खतरनाक विचार मानता हूँ।

इस अनुच्छेद के संबंध में जो अलग-अलग संशोधन प्रस्तुत किए गए हैं उसमें जो दूसरा मुद्दा उठाया गया है वह आयु के प्रश्न से संबंधित है। आयु के संबंध में विभिन्न विचार व्यक्त किए गए हैं। कुछ लोगों का यह विचार है कि न्यायाधीशों को साठ वर्ष की आयु में सेवानिवृत्त हो जाना चाहिए। ठीक है, उच्च न्यायालयों के मामले में वर्तमान में यही स्थिति है। कुछ लोगों का यह कहना है कि संविधान में कोई भी आयु-सीमा निर्धारित नहीं की जानी चाहिए लेकिन, आयु-सीमा निर्धारित करने की शक्ति कानून द्वारा संसद पर छोड़ दी जानी चाहिए। मुझे लगता है इस विचार को स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि यदि आयु का मामला समय-समय पर निर्धारित करने हेतु इसे संसद पर छोड़ा जाता है, तो किसी भी व्यक्ति की न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति नहीं की जा सकती क्योंकि कोई भी व्यक्ति किसी भी पद को स्वीकार करते समय यह जानना चाहेगा कि स्वाभाविक दृष्टि से वह उस पर कितने वर्षों तक कार्य करेग और इसलिए यदि उसकी आयु के संबंध में जो प्रावधान किया गया है उसे समय-समय पर संसद द्वारा निर्धारित किए जाने के लिए नहीं छोड़ा जा सकता है बल्कि उसे संविधान में ही निर्धारित किया जाना चाहिए। दूसरा विचार यह है कि यदि आप कोई समय-सीमा निर्धारित करते हैं तो व्यावहारिक दृष्टि से आप उस व्यक्ति को हटा रहे हैं जो उस आयु-सीमा जो हम निर्धारित करेंगे, को पूरा कर लेने के बाद भी स्वस्थ हो और जिसका दिमाग बिल्कुल दुरुस्त हो और शरीर भी चुस्त-दुरुस्त हो तथा राज्य के लिए पूरी तरह

से अच्छी सेवा प्रदान करने की स्थिति में हो और वह यह सेवा कतिपय और वर्षों तक प्रदान कर सकता हो। मैं पूरी तरह से सहमत हूँ कि 65 वर्ष की अवस्था को किसी भी व्यक्ति की बौद्धिक योग्यता के लिए हमेशा ही शून्यकाल नहीं माना जा सकता। साथ ही मेरा मानना है कि इस आशय के संशोधन प्रस्तुत करने वाले माननीय सदस्य इस उपबंध को भूल गए हैं जो हमने अनुच्छेद 107 में किया है, जहाँ हमने यह प्रावधान किया है कि मुख्य न्यायाधीश के लिए किसी विशेष मुकदमा या मुकदमों की सुनवाई करने और उन पर निर्णय देने के लिए किसी सेवानिवृत्त न्यायाधीश को बुलाने का विकल्प खुला होगा। परिणामतः अनुच्छेद 107 के लागू हो जाने के बाद इस बात की कम संभावना होगी, यदि मैं यह कहूँ कि जो व्यक्ति उच्चतम न्यायालय में पहले ही अपनी सेवा दे चुका हो, उस प्रतिभा को हम नहीं खोएंगे। इसलिए मेरा यह निवेदन है कि आयु संबंधी प्रश्न पर भी बहस के दौरान जो तर्क या आशंकाएं प्रकट की गई हैं, उनका कोई आधार नहीं है।

अब मैं इस संशोधन पर हुई बहस के दौरान उठाए गए तीसरे मुद्दे पर आता हूँ और यह प्रश्न है न्यायपालिका के सदस्यों द्वारा सेवानिवृत्त के पश्चात् किसी अन्य पद को स्वीकार किया जाना। इस बारे में दो संशोधन हैं – एक तो प्रो. शाह और दूसरा श्री जसपत राय कपूर का है। व्यक्तिगत तौर पर मेरा यह मानना है कि इनमें से किसी भी संशोधन को स्वीकार नहीं किया जा सकता। यह संशोधन कुल मिलाकर कमोबेश उन्हीं उपबंधों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है जो लोक सेवा आयोग के संबंध में प्रारूप संविधान में दिए गए हैं। यह बिल्कुल सच है कि यह प्रावधान किया गया है कि लोक सेवा आयोगों का कोई भी सदस्य लोक सेवा आयोगों से सेवानिवृत्त होने के पश्चात् कतिपय अवधि के लिए सरकार के अधीन कोई भी पद धारण करने का हकदार नहीं होगा। लेकिन, मुझे ऐसा लगता है कि न्यायपालिका के सदस्यों तथा संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों के बीच एक मौलिक अन्तर है और वह अन्तर यह है कि लोक सेवा आयोग सरकार की सेवा कर रहा है और उन्हीं मामलों पर निर्णय दे रहा है जिसमें सरकार के प्रत्येक क्षेत्र जुड़े होते हैं अर्थात् सिविल सेवा में किन व्यक्तियों की भर्ती की जानी है। यह बिल्कुल संभव हो सकता है कि कतिपय विभाग के प्रभारी मंत्री लोक सेवा आयोग के सदस्य को उसकी सेवानिवृत्ति के बाद कुछ दिए जाने का वायदा कर सकता है कि यदि वह कतिपय उम्मीदवार के नाम की सिफारिश कर दे जिसमें मंत्री की रुचि हो। संघ लोक सेवा आयोग और कार्यपालिका के बीच बड़ा ही नजदीकी और अभिन्न संबंध है। दूसरे शब्दों में यदि मैं यह कहूँ कि लोक सेवा आयोग हमेशा ही उन्हीं मामलों पर निर्णय देने में लगा रहता है जिनमें कार्यपालिका का महत्त्वपूर्ण हित जुड़ा होता है। न्यायपालिका उन मामलों पर निर्णय देता है जिन पर सरकार की बहुत ही कम रुचि होती है या बल्कि तथ्य तो यह है कि उसका हित बिल्कुल नहीं गिरा होता है। न्यायपालिका

नागरिकों के बीच तथा नागरिकों तथा सरकार के बीच उठे मुद्दे पर निर्णय देता है। इसके परिणामस्वरूप सरकार द्वारा न्यायपालिका के किसी सदस्य के आचरण को प्रभावित करने के बहुत कम ही आसार होते हैं और मेरा निजी विचार इसलिए यह है कि संघ लोक सेवा आयोग के मामले में जो उपबंध लागू किए गए हैं, उनका न्यायपालिका से कोई संबंध नहीं है। इसके अलावा बहुत सारे ऐसे मामले होते हैं जहां न्यायिक प्रतिभा को नियोजित करने के लिए कतिपय उद्देश्यों के लिए विशेष प्रकार की प्रतिभा का होना अति आवश्यक होता है। हमारे मित्र श्री वरदाचरयार का उदाहरण है। उन्हें आयकर से संबंधित प्रश्नों की जांच करने वाले आयोग का सदस्य नियुक्त किया गया है।

श्री जसपतराय कपूर : इसे एक अवैतनिक रूप से किए जाने का प्रावधान किया जा सकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं, उन्हें इसका भुगतान किया जाता है। यह सरकार के अधीन एक लाभ का पद है।

इसलिए, इस प्रकार के पदों पर उन व्यक्तियों जिनके पास न्यायिक प्रतिभा हो, के अलावा किसकी नियुक्ति की जा सकती है? इस प्रकार का कार्य करने की प्रतिभा रखने वाले इन व्यक्तियों को ऐसे प्रावधानों जैसा कि श्री जसपतराय कपूर ने सुझाया है, के द्वारा इससे यदि वंचित किया जाता है तो यह एक बड़ी ही विकलांगता की स्थिति हो जाएगी। और मैंने यह कहा है कि कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच का संबंध इतना पृथक और विशिष्ट होता है कि कार्यपालिका के पास न्यायपालिका के निर्णय को प्रभावित करने का मुश्किल से मौका होता है। इसिलए मेरा सुझाव है कि सुझाया गया उपबंध जरूरी नहीं है और मैं सभी संशोधनों का विरोध करता हूँ।

निम्नलिखित में दो संशोधन स्वीकृत हुए।

(1) श्री संथानम द्वारा प्रस्तुत संशोधनः

"कि अनुच्छेद 103 के खण्ड (2) में 'हो सकते हैं' शब्दों के स्थान पर 'जैसा राष्ट्रपति उचित समझे शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।"

(2) श्री कामत द्वारा प्रस्तुत संशोधनः

"कि अनुच्छेद 103 के खण्ड (3) में निम्नलिखित उपखण्ड जोड़ा जाएः

(ग) या एक प्रख्यात न्यायविद् हो।"

उपर्युक्त दर्शाए गए डॉ. अम्बेडकर के सभी चारों संशोधन स्वीकृत हुए। अन्य सदस्यों द्वारा प्रस्तुत किए गए सभी 18 संशोधन अस्वीकृत हुए।

[अनुच्छेद 103, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १०३-क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं यथासंभव कम से कम शब्दों में इस मामले को समाप्त करना चाहूँगा। इसे मैं समाप्त करूँ इससे पहले मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि इस विशेष संशोधन को लाने के पीछे क्या विचार है। इस संशोधन को प्रस्तुत किए जाने के पीछे जो मुख्य विचार है उसे समझने के लिए मुझे लगता है कि हमें तीन अलग-अलग मामलों को लेना होगा। एक मामला तो उच्चतम न्यायालय के उस न्यायाधीश का है जिसे किसी कार्यपालिका के पद पर नियुक्त किया गया है और जिसे उच्चतम न्यायालय में वापस आने का अधिकार नहीं दिया गया हो। एक तो वह मामला है। दूसरा मामला उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में उस व्यक्ति को नियुक्त किए जाने का है जिसने कार्यपालिका का गैर-न्यायिक स्वरूप वाला कोई पद धारण किया हो। तीसरा मामला उच्चतम न्यायालय के उस न्यायाधीश का है जिसे गैर-न्यायिक स्वरूप वाला कोई कार्य सौंपा गया हो लेकिन उसे उच्चतम न्यायालय में फिर वापस आने का अधिकार भी दिया गया हो। मैं समझता हूँ कि - मेरे मित्र डॉ. सेन मुझे सही कह देंगे यदि मैं गलत कह रहा हूँ - यह संशोधन तीसरी स्थिति अर्थात् अल्प अवधि के लिए उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को गैर-न्यायिक कार्य सौंपा जाता है लेकिन उसे उच्चतम न्यायालय में वापस आने का अधिकार दिया जाता है।

पहला मामला जिसका मैंने उल्लेख किया है अर्थात् उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को कार्यपालिका के अधीन किसी पद पर नियुक्त किए जाने का जहाँ तक संबंध है, यदि उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के पद से त्यागपत्र देता है तो मुझे इसमें कोई आपत्ति बिल्कुल नहीं दिखती क्योंकि वह पूरी तरह से उच्चतम न्यायालय के दायरे से बाहर निकल जाता है।

दूसरे मामले का जहाँ तक संबंध है अर्थात् उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश जो सेवानिवृत्त हो चुका हो, को यदि कोई कार्य सौंपा जाता है, तो उस मामले में भी कोई सीमा नहीं होनी चाहिए।

तीसरे मामले के संबंध में, मेरा यह मानना है कि यह एक ऐसा मुद्दा है जिस पर विचार किए जाने की जरूरत है। इस देश में हमारे सामने दो ऐसे मामले आ चुके हैं। एक मामला तो युद्ध के दौरान सामने आया था जब फैडरल न्यायालय के एक न्यायाधीश को तत्कालीन भारत सरकार द्वारा कूटनीतिक मिशन पर बाहर भेजा गया था। इस सरकार के शासन के दौरान भी हमारे सामने एक मामला आया है जिसमें मुख्य न्यायाधीश या किसी न्यायाधीश - मैं अभी वह भूल रहा हूँ - वह किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश था, को किसी

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 24 मई, 1949, पृ. 266-67

कूटनीतिक मिशन पर भेजा गया था। दोनों ही अवसरों पर इस प्रकार की कार्यवाही की काफी तीखी आलोचना की गई थी। मेरे मित्र श्री चिम्मनलाल शीतलावाद ने टाइम्स ऑफ इंडिया में प्रकाशित अपने लेख में सरकार की कार्यवाही की ओलाचना की है। मेरी भी निजी तौर पर वही भावना थी। तथापि, वर्तमान में मैं डॉ. पी.के. सेन द्वारा प्रस्तुत संशोधन को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हूँ क्योंकि इसमें जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है, वे या तो काफी विस्तृत है या कुछ मामलों में बहुत ही संकीर्ण हैं। मैं प्रारूप समिति को यह सिफारिश करने को तैयार हूँ कि इस मुद्दे पर विचार किया जाना चाहिए। उस आश्वासन के आधार पर मैं उनसे अपना संशोधन वापस लेने का अनुरोध करता हूँ।

श्री जसपतराय कपूर : मेरा यह अनुरोध है कि इस खण्ड पर कल तक कोई निर्णय नहीं लिया जाए क्योंकि हममें से बहुत सारे लोग इसका सावधानीपूर्वक अध्ययन करना चाहेंगे।

माननीय सभापति : डॉ. अम्बेडकर हम लोगों को यह बता चुके हैं कि वह इस बारे में विचार करने के लिए प्रारूप समिति को भेजे जाने के इच्छुक हैं।

श्री जसपतराय कपूर : यह मामला समाप्त हो जाना चाहिए।

माननीय सभापति : जब इसे प्रारूप समिति को सौंप दिया गया है तो इसका अर्थ यह है कि यह मामला समाप्त हो चुका है क्योंकि जब यह मामला फिर से वापस आएगा तो यह उसी रूप में वापस आएगा जिस रूप में प्रारूप समिति अनुमोदित करेगी।

* * * * *

अनुच्छेद १०४

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : (बम्बई : जनरल) :** महोदय मेरा अनुरोध है कि अनुच्छेद 104 को स्थगित रखा जाए।

* * * * *

अनुच्छेद १०६

#माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं दोनों संशोधनों – सूची संख्या ट‍ की संख्या 124 और संशोधन संख्या 1883 को स्वीकार करता हूँ।

माननीय सभापति : दो संशोधन प्रस्तुत किए गए हैं। दोनों को ही डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। अब मैं उन पर मत लूँगा।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 24 मई, 1949, पृ. 375

\# वही, पृष्ठ 377

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1883 के संदर्भ में, अनुच्छेद 106 के खण्ड (1) में 'मुख्य न्यायाधीश' शब्दों के बाद 'राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से' शब्द अन्तःस्थापित किए जाएँ।"

"कि अनुच्छेद 106 के खण्ड (1) में, 'उच्च न्यायालय शब्दों के बाद जहाँ दूसरी बार वे शब्द आए हों, अर्हित है' शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।

निम्नलिखित संशोधन स्वीकृत हुए।

[उपर्युक्त दोनों संशोधन स्वीकृत हुए। अनुच्छेद 106, यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।]

अनुच्छेद १०७

माननीय सभापति : संशोधन संख्या 1884। यह एक नकारात्मक संशोधन है। अतः मैं इसे खारिज करता हूँ।

संशोधन संख्या 1885। इस प्रश्न पर निर्णय लिया जा चुका है। अतः प्रस्तुत करने की जरूरत नहीं है।

श्री जसपतराय कपूर : मैं संशोधन संख्या 1886 प्रस्तुत नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि उसी तर्ज पर दूसरा संशोधन प्रस्तुत किया गया है।

माननीय सभापति : संशोधन संख्या 1887 कमोवेश एक शाब्दिक संशोधन है। अतः इसे प्रस्तुत किए जाने की जरूरत नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 107 में इस अनुच्छेद के उपबंधों के विषयाधीन शब्दों का लोप किया जाए।"

वे शब्द बिल्कुल अनावश्यक हैं।

श्री टी.टी. कृष्णामाचारी : मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 107 में पंक्ति 3 में 'किसी समय' शब्दों के बाद 'राष्ट्रपति की पूर्व सहमति के साथ' शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।"

(संशोधन संख्या 1889 और 1890 प्रस्तुत नहीं किए गए।)

* * * * *

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 27 मई, 1949, पृ. 377

#**माननीय सभापतिः** अब हमारे पास चर्चा के लिए संशोधन और अनुच्छेद मौजूद हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 125 को स्वीकार करता हूँ।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

* * * * *

अनुच्छेद १०८

*****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** सभापति महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1891 के लिए निम्नलिखित प्रतिस्थापित किए जाएं:

"कि अनुच्छेद 108 के लिए निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किए जाएं:

108 उच्चतम न्यायालय अभिलेख न्यायालय होगा और उसको अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति सहित ऐसे न्यायालय की सभी शक्तियां होंगी।

108क उच्चतम न्यायालय दिल्ली में अथवा ऐसे अन्य स्थान या स्थानों में अधिविष्ट होगा जिन्हें भारत का मुख्य न्यायमूर्ति राष्ट्रपति के अनुमोदन से समय-समय पर नियत करें।

महोदय, सामान्य बहस के बाद, मैं यह बताऊंगा कि मैं जो संशोधन प्रस्तुत कर रहा हूँ, वह क्यों जरूरी है।

****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** सभापति महोदय, मैंने जो संशोधन प्रस्तुत किया है, उसमें व्यावहारिक तौर पर श्री कामत तथा श्री जसपतराय कपूर दोनों के द्वारा उठाए गए सभी मुद्दे शामिल हैं।

महोदय, नया अनुच्छेद 108 आवश्यक है क्योंकि हमने प्रारूप संविधान में उच्चतम न्यायालय के दर्जे को परिभाषित करने हेतु कोई उपबंध नहीं किया है। यदि सभा अनुच्छेद 192 पर गौर करें तो उसे भारत के उच्च न्यायालयों के संबंध में बिल्कुल वैसा ही अनुच्छेद नजर आएगा। इसलिए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि उच्चतम न्यायालय की स्थिति को परिभाषित करने के लिए ठीक उसी प्रकार का उपबंध संविधान में किया जाना चाहिए। मैं सभा को यह बताने में अधिक समय नहीं लेना चाहता कि 'न्यायालय के अभिलेख' का क्या अर्थ है। मैं संक्षेप में यह बता सकता हूँ कि अभिलेख न्यायालय

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 27 मई, 1949, पृ. 377

\# पूर्वोक्त पृष्ठ 377

वह न्यायालय होता है जिसके अभिलेख को साक्ष्य मूल्य के रूप में स्वीकृत किया जाता है और किसी न्यायालय के समक्ष उन्हें प्रस्तुत किया जाता है तो उसके बारे में कोई और प्रश्न नहीं पूछा जाता। अभिलेख न्यायालय का अर्थ यही है। फिर अनुच्छेद 108 के दूसरे भाग में कहा गया है कि अवमानना के दोषी के लिए न्यायालय को ही सजा देने की शक्ति होगी। तथ्यात्मक रूप से, एक बार आप सांविधिक तौर पर अभिलेख न्यायालय गठित कर देते हैं, तो अवमानना के लिए दोषी को सजा देने की शक्ति उस स्थिति से आवश्यक तौर पर उसे प्राप्त हो जाती है। लेकिन, इस तथ्य के दृष्टिगत यह महसूस किया गया कि इंग्लैंड में यह शक्ति मुख्यत: कॉमन लॉ से प्राप्त होती है और इस देश में हमारे यहाँ कॉमन लॉ जैसी कोई चीज नहीं है, इसलिए हमने महसूस किया कि सांविधिक में ही पूरी स्थिति का उल्लेख किया जाना बेहतर होगा। यही कारण है कि अनुच्छेद 108 का प्रावधान किया गया है।

श्री कामत ने अनुच्छेद 108-क के संबंध में एक मुद्दा उठाया है कि, इसमें दिल्ली शब्द क्यों दिया जाना चाहिए। इसका उत्तर बड़ा ही सरल है। न्यायालय का एक निश्चित स्थान होना चाहिए जहाँ वह बैठेगा और मुकदमा लड़ने वालों को इस बारे में जानकारी होनी चाहिए कि उन्हें किस स्थान पर जाना है और किसके पास पहुँचना है। परिणामत: संविधान में ही न्यायालय के बैठने के स्थान के बारे में उल्लेख करना जरूरी है और यही कारण है कि दिल्ली शब्द जरूरी है और इसलिए इस प्रयोजनार्थ इसका उल्लेख करना है। अनुच्छेद 108-क में उल्लिखित अन्य शब्द इसलिए दिए गए हैं क्योंकि अभी तक यह परिभाषित किया जाना बाकी है कि क्या भारत की राजधानी दिल्ली ही बनी रहेगी या नहीं। यदि आप इसमें उपयुक्त शब्द नहीं डालेंगे तो इसका आशय यह निकलेगा, "या किसी अन्य स्थान या स्थानों पर जहाँ कि भारत के मुख्य न्यायाधीश राष्ट्रपति के अनुमोदन से समय-समय पर तय करते रहे हैं।" फिर इससे यह होगा। मान लो कि भारत की राजधानी में बदलाव हो जाता है तो फिर हमें संविधान में इस आशय का संशोधन करना पड़ेगा कि उच्चतम न्यायालय ऐसे किस अन्य स्थान पर जहाँ कि जिसे संसद राजधानी बनने का निर्णय लेती है, बैठेगा। इसलिए मैं समझता हूँ कि इसके बाद इस शब्द का उल्लेख होना आवश्यक है। मेरे मित्र माननीय श्री कपूर द्वारा उठाए गए मुद्दे के संबंध में मैं समझता हूँ कि मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी द्वारा दिया गया उत्तर पर्याप्त है और मैं और कुछ नहीं कहना चाहता।

* * * * *

श्री जसपतराय कपूर : क्या मैं डॉ. अम्बेडकर से छोटा सा स्पष्टीकरण मांग सकता हूँ? क्या उच्चतम न्यायालय जब तक यह दिल्ली में बैठता है, उसके लिए इस देश में किसी और स्थान पर साथ-साथ इजलास लगाने का विकल्प है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हाँ, बिल्कुल है। सर्किट न्यायालय पीठ ही होती है।

[डॉ. अम्बेडकर के संशोधन स्वीकृत हुए। शेष संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 108 और 108-क, यथासंशोधित संविधान में जोड़े गए।]

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं चाहता हूँ कि अनुच्छेद 109 से 114 तक स्थगित रखे जाएं। मैं इन अनुच्छेदों को स्थगित इसलिए रखना चाहता हूँ क्योंकि इन अनुच्छेदों में जहाँ सामान्य नियमों के बारे में बताया गया है, वहीं इनमें अनुसूची 1 के भाग III में उल्लिखित राज्यों के संबंध में कतिपय आपत्तियाँ की गई हैं। इस बात की संभावना है कि भाग ए्ए्ए में उल्लिखित राज्यों की स्थिति के बारे में पुनर्विचार किया जा रहा है। ताकि इस राज्यों को भाग ए में उल्लिखित राज्यों के समान स्तर और स्थिति में लाया जा सके। यदि वैसा होता है तो इन अनुच्छेदों अर्थात् 109 से 114 में इन आपत्तियों को दर्ज कराने की जरूरत नहीं पड़ेगी। मेरा सुझाव है कि इन अनुच्छेदों को स्थगित रखा जाए।

माननीय सभापति : वर्तमान में हम उनको छोड़ देते हैं।

* * * * *

****माननीय सभापति :** संशोधन 1939 जो डॉ. अम्बेडकर के नाम से है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"अनुच्छेद 115 में, ये शब्द और कोष्ठक '(जो मूलाधिकारों को लागू किए जाने से संबंधित हैं)' हटा दिए जाएं।" ये फालतू शब्द हैं।

माननीय सभापति : संशोधन संख्या 1940 अभी-अभी प्रस्तुत संशोधन से बिल्कुल मेल खाता है इसलिए इसे प्रस्तावित करने की जरूरत नहीं है। संख्या 1941 श्री नजरुद्दीन अहमद के नाम से है और उसका भी स्वरूप प्रारूप से संबंधित है और उसे प्रस्तावित करने की जरूरत नहीं है। संख्या 1942 का प्रस्ताव नहीं किया जाना है।

मेरे विचार से हमारे पास यही संशोधन है।

क्या किसी सदस्य को कुछ और कहना है?

अब हम संशोधनों पर चर्चा शुरू करेंगे।

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 27 मई, 1949, पृ. 383

** पूर्वोक्त, पृष्ठ 383-84

मैं सबसे पहले डॉ. अम्बेडकर के संशोधन संख्या 1939 (ऊपर में उल्लिखित) को लूँगा। (संशोधन स्वीकृत हुआ।)

[डॉ. बख्शी टेक चन्द के संशोधन में संशोधन संख्या 1938 जैसा कि नीचे दिया गया है, भी स्वीकृत हुआ।]

"अनुच्छेद 115 में, या 'याचिकाओं के रूप में आदेशों' शब्दों के स्थान पर 'याचिकाओं सहित आदेश या याचिकाएं' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएँ।"

[अनुच्छेद 115 यथासंशोधित संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद ११७

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं एक मुद्दे का उल्लेख करना चाहूँगा। प्रस्तावित अनुच्छेद की मंशा कतिपय यह नहीं है कि उच्चतम न्यायालय को अपने ही निर्णय से बंधने के लिए बाध्यकारी होना चाहिए। जैसा कि हाउस ऑफ लॉर्ड्स के मामले में है। उच्चतम न्यायालय अपने निर्णय को बदलने तथा पूर्व में दिए गए निर्णय से अलग विचार अपनाने के लिए स्वतंत्र होगा। जहाँ तक भाषा का संबंध है, मैं बिल्कुल संतुष्ट हूँ कि यह सही मंशा को व्यक्त करती है।

श्री एच.वी. कामत : तो फिर हम यह क्यों नहीं कहें। 'सभी अन्य न्यायालय?'

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : "सभी न्यायालय" का अर्थ है "सभी अन्य न्यायालय"।

[अनुच्छेद 117 बिना संशोधन के स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद ११९

****माननीय सभापति :** संशोधन संख्या 1951 को खारिज कर दिया गया।

श्री एच.वी. कामत : महोदय मैं अपने संशोधन 1952 के बारे में कहना चाहता हूँ कि यह एक साधारण संशोधन है। इस अनुच्छेद में यह कहा गया है कि उच्चतम न्यायालय राष्ट्रपति को अपनी राय से अवगत कराएगा या फिर उसे अपनी राय को रोक कर रखने का विवेक प्राप्त होगा। मेरा मानना है कि इसका अर्थ यह है कि जब

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 27 मई, 1949, पृ. 386

++ पूर्वोक्त पृष्ठ 387

**· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 27 मई, 1949, पृ. 386

राष्ट्रपति किसी मामले को उच्चतम न्यायालय के पास उसकी राय के लिए भेजता है, तो उच्चतम न्यायालय के पास राय देने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता। यदि इसका अर्थ यह नहीं है तो इसकी भाषा सही है। लेकिन, यदि इसका अर्थ यह है कि एक बार राष्ट्रपति किसी मामले को उच्चतम न्यायालय के पास भेज दे, तो उसे राष्ट्रपति को उस पर अपनी राय देना जरूरी है, तो फिर "शैल" शब्द आना चाहिए था। मैं उस मुद्दे पर स्पष्टीकरण चाहता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उच्चतम न्यायालय के लिए ऐसा करना बाध्यकारी नहीं है।

श्री एच.वी. कामत : तो फिर मैं अपना संशोधन प्रस्तुत नहीं करता।

* * * * *

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मेरा इस अनुच्छेद 119 को स्थगित करने का अनुरोध है क्योंकि यह भी अनुच्छेद 109 से 114 के संदर्भ में है। जिन्हें हमने स्थगित रखने का निर्णय लिया है।

श्री एच.वी. कामत : महोदय तो फिर बाद में मुझे अपना संशोधन प्रस्तुत करने का अधिकार सुरक्षित रखना चाहिए।

* * * * *

अनुच्छेद १२१

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ महोदय, मेरा अनुरोध है कि इस अनुच्छेद को स्थगित रखा जाए।

* * * * *

अनुच्छेद १२२

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि विद्यमान अनुच्छेद 122 के स्थान पर, निम्नलिखित प्रस्थापित किए जाएं:-

१२२. उच्चतम न्यायालय के अधिकारी और सेवक तथा व्यय -(1) उच्चतम न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की नियुक्तियाँ भारत का मुख्य न्यायमूर्ति करेगा या उस न्यायालय का ऐसा अन्य न्यायाधीश या अधिकारी करेगा जिसे वह निर्दिष्ट करे:

---

* पूर्वोक्त पृष्ठ 387

\# सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 27 मई, 1949, पृ. 387

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 388

परंतु राष्ट्रपति नियम द्वारा यह अपेक्षा कर सकेगा कि ऐसी किन्हीं दशाओं में, जो नियम में विनिर्दिष्ट की जाएं, किसी ऐसे व्यक्ति को, जो पहले से ही न्यायालय से संलग्न नहीं है, न्यायालय से संबंधित किसी पद पर संघ लोग सेवा आयोग से परामर्श करके ही नियुक्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

(2)संसद द्वारा बनाई गई विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की सेवा की शर्तें ऐसी होंगी जो भारत के मुख्य न्यायाधीश या उस न्यायालय के ऐसे अन्य न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा, जिसे भारत के मुख्य न्यायाधीश ने इस प्रयोजन के लिए नियम बनाने के लिए प्राधिकृत किया है, बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाएं:

देय वेतन, भत्तों और पेंशन से संबंधित या ऐसे अधिकारी तथा सेवक के संबंध में वेतन, भत्ते और पेंशन भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा राष्ट्रपति से सलाह के बाद तय किए जाएं।

(3)उच्चतम न्यायालय के प्रशासनिक व्यय, जिनके अन्तर्गत उस न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों को या उनके संबंध में देय सभी वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, भारत की संचित निधि पर भारित होंगे और उस न्यायालय द्वारा ली गई फीसें और अन्य धनराशियाँ उस निधि का भाग होंगी।

इस प्रारूप का उद्देश्य उच्चतम न्यायालय की स्वतंत्रता के लिए बेहतर उपबंध बनाया जाना तथा यह भी उपबंध किया जाना है कि उच्चतम न्यायालय का प्रशासनिक खर्च भारत के राजस्व से प्रभारित होगा।

महोदय, इस संशोधन में एक संशोधन है, जिसे मैं प्रस्तुत करना चाहता हूँ:

परंतु इस खंड के अधीन बनाए गए नियमों के लिए, जहाँ तक वे वेतन, भत्ते, छुट्टी या पेंशन से संबंधित हैं, राष्ट्रपति के अनुमोदन की अपेक्षा होगी।

माननीय सभापति : इस संशोधन में श्री कपूर का एक संशोधन है।

श्री जसपतराय कपूर : इसे डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत नए संशोधन में अब शामिल कर लिया गया है। अतः मैं इसे प्रस्तुत करना अनावश्यक समझता हूँ।

(संशोधन संख्या 1968 और 1969 प्रस्तुत नहीं किए गए।)

माननीय सभापति : अब केवल डॉ. अम्बेडकर का ही एकमात्र संशोधन है। मैं पहले उनके द्वारा प्रस्तुत उन्हीं के संशोधन को लूँगा।

* * * * *

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ सभापति महोदय, मैं स्थिति स्पष्ट करने के लिए ही कुछ और समुक्तियाँ देना चाहूँगा। महोदय, इसमें कोई संशय नहीं है कि सभा

आमतौर पर इस बात से सहमत है कि न्यायपालिका की कार्यपालिका से स्वतंत्रता स्पष्ट और सुनिश्चित होनी चाहिए और इसकी व्यवस्था हम कानून द्वारा कर सकते हैं। साथ ही यह भी आशंका है कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता के नाम पर हम एक ऐसी स्थिति पैदा कर सकते हैं जिसे मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने बिल्कुल सही नाम दिया है, "इम्पीरियम इन इम्पीरियो"। हम लोग "इम्पीरियम इन इम्पीरियो" की स्थिति पैदा नहीं करना चाहते और साथ ही हम न्यायपालिका को पर्याप्त स्वतंत्रता भी प्रदान करना चाहते हैं ताकि वह कार्यपालिका के भय या उसके पक्षपात के बिना कार्यवाही कर सके। मेरे मित्रगण यदि नए संशोधन जिसे मैंने मूल अनुच्छेद 122 के स्थान पर प्रस्तुत किया है, के उपबंधों की सावधानीपूर्ण जांच करें, तो पाएंगे कि नए अनुच्छेद में मध्यम मार्ग अपनाने का उपबंध किया गया है। इसके अंतर्गत "इम्पीरियम इन इम्पीरियो" की स्थिति पैदा होने से बचा गया है और मेरे विचार से यह बिना भय या पक्षपात के न्याय का शासन प्रदान करने के उद्देश्य के लिए न्यायपालिका को आवश्यक स्वतंत्रता भी प्रदान करता है। इसलिए, मुझे इस नए अनुच्छेद 122 में अन्तर्विष्ट सभी उपबंधों के बारे में और विस्तार से बताने की जरूरत नहीं है, क्योंकि मैं यह पाता हूँ कि इस अनुच्छेद पर हुई बहस में जिन वक्ताओं ने भाग नहीं लिया है उनके बीच भी इस बात पर आम सहमति है कि नए अनुच्छेद 122 के कतिपय खण्ड जैसे कि खण्ड (1) खण्ड (3) और खण्ड (2) भी विलक्षण हैं। केवल खण्ड (2) के परन्तुक पर कुछ मतभेद दिखाई पड़ता है। मूल परन्तुक में, यह प्रावधान था कि न्यायाधीशों के वेतन, भत्तों और अन्य सारी चीजों के बारे में मुख्य न्यायाधीश राष्ट्रपति के परामर्श से निर्णय लेंगे। संशोधित परन्तुक यह उपबंध करता है कि मुख्य न्यायाधीश यह कार्य राष्ट्रपति के अनुमोदन से करेगा और वास्तव में जो प्रश्न है वह यह है कि मूल प्रावधान जिसके अनुसार इस कार्य को राष्ट्रपति के परामर्श से किया जाना चाहिए या फिर इसे राष्ट्रपति के अनुमोदन से किया जाना चाहिए, इन दो विकल्पों में से हमें किसका चुनाव करना चाहिए। इसमें कोई संशय नहीं है कि पूल मसौदों "राष्ट्रपति से सलाह-मशविरा" ऐसा लगता है और ऐसा है कि अंतिम फैसला लेने का अधिकार राष्ट्रपति को सौंपना चाहता है, महोदय इस विषय पर विचार करने से पहले दो विचारों को ध्यान में रखा जाना चाहिए। पहला यह है कि संघीय अदालत के बारे में वर्तमान में क्या प्रावधान है?" अगर माननीय सदस्य अंगीकार नहीं किए गए 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट, 1935' की धारा 216 की उप-धारा (2) पर नजर डालें तो वे पाएंगे कि वहाँ दिए गए प्रावधान इस पर 'मंजूरी का अधिकार' मैं खेदपूर्वक कहना चाहूँगा कि यह धारा 242 की उप-धारा (4) है - गवर्नर जरनल को दिया गया था। इस आधार पर हम वास्तव में वर्तमान स्थिति को ही बनाए रख रहे हैं। मेरे खयाल में हमारा विचार यह है कि जिसमें इसका समर्थन किया गया है कि हम इस मुहावरे को बनाए रखें कि "राष्ट्रपति की मंजूरी से" और यह

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 27 मई, 1949, पृ. 397-99

सही है। बिना किसी संदेह के यह होना चाहिए कि राज्य के कर्मचारियों के वेतन, भत्ते और पेंशन एक समान हों और लोक सेवा के संदर्भ में इनमें कोई अंतर नहीं होना चाहिए। इसमें सरकारी खजाने पर फालतू का बोझ पड़ सकता है। अब यदि आप इस मामले को मुख्य न्यायाधीश पर निर्णय के लिए छोड़ते हैं तो इस बात की बिल्कुल संभावना हो सकती है – मैं यह नहीं कहता कि ऐसा होगा ही – लेकिन इस बात की पूरी संभावना है कि मुख्य न्यायाधीश वेतन, पेंशन और भत्ते इस प्रकार से निर्धारित कर दें जो कि न्यायपालिका के अ लावा अन्य विभागों में कार्यरत सिविल सेवकों से बहुत ही भिन्न हों और मैं नहीं समझता कि इस प्रकार की स्थिति एक वांछनीय बात होगी और इसके परिणामस्वरूप मैंने अपने निर्णय से एक नया प्रारूप और नया संशोधन तैयार कराया है, जिसे मैंने सभापटल पर रखा है और जिसमें इस मामले का समुचित समाधान निकाला गया है और मुझे आशा है कि सभा मूल परन्तुक के स्थान पर इसे स्वीकार करेगी।

मैं एक अन्य मामले का भी उल्लेख करना चाहता हूँ। यद्यपि इसके बारे में मेरे संशोधन में प्रावधान नहीं किया गया है न ही इस बहस पर भाग लेने वाले सदस्यों ने इसका उल्लेख किया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि मेरे नए अनुच्छेद 122 के खण्ड (3) के द्वारा हमने यह उपबंध किया है कि उच्चतम न्यायालय के प्रशासनिक खर्चों पर भारत के राजस्व से प्रभारित किया जाएगा लेकिन, प्रश्न यह है कि खण्ड 3 में अन्तर्विष्ट यह उपबंध न्यायपालिका की स्वतंत्रता को सुरक्षित करने के उद्देश्य से पर्याप्त है। अब मैं स्वयं अपनी ओर से बोलते हुए यह कहना चाहता हूँ कि मेरे विचार से यह खण्ड न्यायपालिका की स्वतंत्रता को सुरक्षित करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। आखिरकार जब हम यह कहते हैं कि विशेष खर्चा राज्य की संचित निधि से प्रभारित होगा, तो उसका क्या अर्थ है? इसका जो कुल मिलाकर अर्थ है कि इसके बारे में मतदान कराने की जरूरत नहीं है। इसका और कोई अर्थ नहीं है। हमने स्वयं ही यह कहा है कि यदि किसी विशेष प्रभार को भारत के राजस्व से प्रभारित किए जाने वाले प्रभार के रूप में घोषित किया जाता है तो जो स्थिति पैदा होगी वह यह है कि इस पर मतदान कराने की जरूरत नहीं पड़ेगी यद्यपि इस पर विधानमंडल द्वारा चर्चा किए जाने का विकल्प रहेगा। इसलिए हमने जो उपबंध किए हैं उनके अनुसरण में अनुच्छेद 122 के खण्ड (3) को पढ़ने से यह अर्थ निकलता है कि न्यायपालिका से संबंधित बजट के भाग को विधानमंडल द्वारा वार्षिक तौर पर लेखानुदान कराने की जरूरत नहीं पड़ेगी। लेकिन, मेरे विचार में यह एक ऐसा प्रश्न है जो मामले की जड़ तक जाता है और इसे बात की प्राथमिकता मिलनी चाहिए कि इस बात का निर्धारण कौन करेगा कि उच्चतम न्यायालय की कया–क्या जरूरतें हैं। हमने इस प्रकार का कोई भी प्रावधान नहीं किया है। हमने इस मामले को निर्धारित करने के लिए पूरी तरह से कार्यपालिका पर छोड़ दिया है कि न्यायपालिका के लिए वर्ष–दर–वर्ष कितनी धनराशि आवंटित की जानी चाहिए। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह एक बड़ी ही कमजोर स्थिति है और इसमें सुधार किए जाने

की जरूरत है। इस चरण में मैं सिर्फ सभा का ध्यान भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 216 में अन्तर्विष्ट उपबंधों की ओर दिलाना चाहता हूँ जिनमें यह कहा गया है कि गवर्नर जनरल अपने द्वारा व्यय प्राक्कलन से संबंधित मामले को फैडरल विधानमण्डल के चैम्बरों के समक्ष प्रस्तुत करते समय फैडरल न्यायालय के प्रशासनिक खर्चों के संबंध में शामिल की जाने वाली धनराशि के बारे में व्यक्तिगत तौर पर अपना निर्णय लेगा। ताकि यदि कार्यपालिका फैडरल न्यायालय को समुचित रूप से चलाने के लिए आवश्यक धनराशि के बारे में मुख्य न्यायाधीश के आकलन से अलग मत व्यक्त करता है तो गवर्नर जनरल उस मामले में हस्तक्षेप करके यह निर्णय ले सके कि कितनी धनराशि आवंटित की जानी चाहिए। हम लोग जिस ढांचे पर अपने संविधान को अंगीकार कर रहे हैं, उस मामले में इस उपबंध का अब निश्चय ही कोई मतलब नहीं रह जाता है और इसलिए मेरे विचार से अब हमें मुख्य न्यायाधीश तथा उसके प्रशासन को चलाने के लिए पर्याप्त धनराशि सुरक्षित कराने के लिए कोई और अन्य तरीका ढूंढना चाहिए। मैं इस समय उस अनुच्छेद में और कोई विलम्ब नहीं करना चाहता। मैं तो सभा के समक्ष केवल इसका उल्लेख कर रहा हूँ ताकि यदि वह इस पर विचार करे तो उस मुद्दे को शामिल करने हेतु बाद में कुछ उपयुक्त संशोधन लाया जा सकता है जोकि एक वांछनीय स्थिति होगी।

[डॉ. अम्बेडकर के दोनों संशोधन स्वीकृत हुए। अनुच्छेद 122 यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १२४

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बंबई - जनरल) :** सभापति महोदय, मैं यह नहीं कर सकता कि प्रारूप संविधान में तथा इसके अनुच्छेदों में प्रस्तुत संशोधनों में से जो स्थिति बनी है, उससे मैं प्रसन्न हूँ। मेरी स्वयं की राय है कि यह गणमान्य व्यक्ति या अधिकारी भारत के संविधान में उल्लिखित सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अधिकारी है। उस व्यक्ति पर यह देखने की जिम्मेदारी है कि संसद द्वारा पारित खर्च से अधिक खर्च न हो या संसद द्वारा निर्धारित विनियोग अधिनियम में उल्लिखित खर्च और वास्तव में किए गए खर्च के बीच अंतर नहीं हो। यदि इस अधिकारी द्वारा अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन किया जाना अपेक्षित है, तो उसका कर्त्तव्य न्यायपालिका के कर्त्तव्यों से भी कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है - निश्चय ही इसे न्यायपालिका जितनी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। लेकिन उच्चतम न्यायालय से संबंधित अनुच्छेदों तथा लेखामहापरीक्षक से संबंधित अनुच्छेदों से इसकी तुलना करने पर मुझे यह कहने में हिचक नहीं है कि हमने उसे न्यायपालिका

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 30 मई, 1949, पृ. 407-08

जितनी अधिक स्वतंत्रता नहीं दी। यद्यपि निजी तौर पर मेरा मानना है कि उसे न्यायपालिका से भी अधिक स्वतंत्रता दी जानी चाहिए थी।

हमने न्यायपालिका को जो स्थिति प्रदान की है तथा लेखामहापरीक्षक की जो स्थिति प्रदान किए जाने का विचार है उसके बीच जो अंतर है उसके बारे में मैं बता सकता हूँ। पिछले सप्ताह ही हमने मूल अनुच्छेद 122 में एक संशोधन प्रस्तुत करके उच्चतम न्यायालय को अपने अधिकारियों और कर्मचारियों की नियुक्ति करने की शक्ति प्रदान की गई है। मैं यह पाता हूँ कि लेखामहापरीक्षक को ऐसी कोई शक्ति प्रदान नहीं की गई है। इस प्रकार की कोई शक्ति नहीं होने का अर्थ है कि महालेखापरीक्षक के कर्मचारियों की नियुक्ति कार्यपालिका करेगी। कार्यपालिका द्वारा नियुक्त किए जाने के परिणामस्वरूप अनुशासनिक कार्यवाही के लिए, कर्मचारी कार्यपालिका के विषयाधीन होंगे। मेरे मन में तनिक भी संशय नहीं है कि यदि किसी अधिकारी के पास अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के ऊपर अनुशासनिक नियंत्रण की शक्ति प्राप्त नहीं है, तो उसके प्रशासन का मनोबल कमजोर रहेगा। उस दृष्टि से मेरा यह विचार था कि महालेखापरीक्षक को इस प्रकार की शक्ति प्रदान किया जाना लोगों के हित में होता। लेकिन उसे इस प्रकार की शक्ति प्रदान किए जाने के मामले में सभा की भावना उसके विरुद्ध रही है। वर्तमान में मेरा मानना है कि आज की जो भावना व्याप्त है, उससे संतुष्ट रहने के अलावा और कुछ नहीं किया जा सकता। यह मेरा समान दृष्टिकोण है।

संशोधनों पर आते हुए मैं यह कहना चाहता हूँ कि श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तुत किए गए संशोधनों तथा श्री बी. दास द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 1975 को मैं स्वीकार करता हूँ। इन संशोधनों से निश्चय ही महालेखापरीक्षक की स्थिति में बहुत हद तक सुधार होगा जो कि उसे प्रारूप संविधान या विभिन्न संशोधनों के माध्यम से प्रदान की गई है। लेकिन मैं यह पाता हूँ कि इन संशोधनों के माध्यम से संशोधित किए गए अनुच्छेद के बावजूद श्री सिधवा को शिकायत है। यदि मैं उनकी बात को समुचित रूप से समझ पाया हूँ तो उनकी शिकायत है कि लेखामहापरीक्षक पर होने वाले खर्च समुचित निधि से प्रभारित नहीं होने चाहिएं, बल्कि उन्हें भी एक सामान्य पूर्ति और सेवाओं का एक अंग माना जाना चाहिए तथा उसे संसद से लेखानुदान प्राप्त कर लिया जाना चाहिए। उन्होंने इसका कोई सही कारण नहीं बताया कि संसद महालेखापरीक्षक पर होने वाले खर्चे के प्रभारों तथा प्रशासनिक खर्चों पर चर्चा करने से वंचित क्यों रहे। मैं समझता हूँ कि मेरे माननीय मित्र श्री सिंधवा भारत के राजस्व से प्रभारित किए जाने वाले कतिपय खर्चों से क्या अर्थ है, उसको पूरी तरह से गलत समझ बैठे हैं। यदि मेरे माननीय मित्र श्री सिंधवा अनुच्छेद 93 जो कि इस मामले से संबंधित है, पर गौर करें तो पाएंगे कि यद्यपि कतिपय खर्च भारत के राजस्व से प्रभारित किए जा सकते हैं, केवल इस तथ्य के आधार पर ऐसा किया गया है, संसद उन प्रभारों पर खर्चा करने के अधिकार से वंचित नहीं हो जाती। उसे यह चर्चा करने

का अधिकार है, केवल यह किया गया है कि से इस पर मतदान करने का अधिकार नहीं दिया गया है। यह गैर मतदान योग्य मद है। ऐसा करने के पीछे यह कारण मौजूद है कि हम लेखामहापरीक्षक की जरूरतों के मामलों में जिस प्रकार से कार्यपालिका का अत्यधिक हस्तक्षेप नहीं चाहते, उसी प्रकार से हम यह नहीं चाहते कि विधानमंडल के सदस्य इस मामले में अधिक हस्तक्षेप करें क्योंकि वे लोग इस प्रकार के अर्थतंत्र से असंतुष्ट हो सकते हैं और महालेखापरीक्षक के अच्छे और कुशल प्रशासन के मामले में हस्तक्षेप कर सकते हैं। इसलिए यह उपबंध किया गया है मेरे मित्र श्री सिधवा भी यह महसूस करेंगे कि यह उपबंध किसी भी रूप में असाधारण नहीं है। यह वास्तव में उच्चतम न्यायालय के संबंध में जो उपबंध किए गए हैं उसके समकक्ष हैं। इसलिए मेरे विचार में श्री सिधवा ने जो इस मुद्दे की आलोचना की है उसमें स्वीकार करने का अच्छा आधार मौजूद नहीं है।

महोदय! मैं यह प्रस्ताव करता हूँ कि इस अनुच्छेद को संशोधित रूप में स्वीकार किया जाए। मैं श्री बी. दास के संशोधन संख्या 25, सूची एन. 1975, श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन संख्या 1131 और श्री कृष्णमाचारी के भी सूची 1 में संशोधन 29-ग को स्वीकार करता हूँ।

माननीय सभापति : अब मैं संशोधनों पर मत लूँगा।

[निम्नलिखित संशोधन स्वीकृत हुए।]

1. "संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1975 के संदर्भ में अध्याय V के भाग V में जहाँ कहीं भी (शीर्षक सहित) 'महालेखा परीक्षक' शब्द आया हो, उसके स्थान पर 'नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।"

2. "कि अनुच्छेद 124 के खण्ड (1) में 'राष्ट्रपति' शब्द के बाद 'अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र' शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।"

3. "संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1975 के संदर्भ में अनुच्छेद के खण्ड (1) के बाद, निम्नलिखित नया खण्ड अन्तःस्थापित किया जाए:

(1-क) प्रत्येक व्यक्ति जो भारत का नियंत्रण एवं महालेखापरीक्षक नियुक्त किया जाता है अपना पद ग्रहण करने से पहले, राष्ट्रपति या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त व्यक्ति के समक्ष, तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्रारूप के अनुसार, शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा।"

4. "कि संशोधनों के संशोधन की सूची - 1 के संशोधन संख्या 25-क (तीसरे सप्ताह), दिनांक 28 मई, 1949 के संदर्भ में निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:

संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1980 के संदर्भ में, अनुच्छेद 124 के खण्ड

(5) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड अंत:स्थापित किया जाए।

(4) संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, नियंत्रण-महालेखापरीक्षक के कर्मचारियों की सेवा शर्तें नियंत्रण-महालेखापरीक्षक द्वारा बनाए गए नियम द्वारा विहित होगी:

परंतुक इस खण्ड के अधीन वेतन, भत्ते, छुट्टी या पेंशन से संबंधित बनाए गए नियम के लिए राष्ट्रपति से अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक होगा।"

5. "संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1981 के सदंर्भ में, अनुच्छेद 124 के खण्ड (5) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड अन्त:स्थापित किया जाए।

(5) नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक के कार्यालय के प्रशासनिक व्यय जिनके अन्तर्गत उस कार्यालय में सेवा करने वाले व्यक्तियों को या उनके संबंध में देय सभी वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, भारत की संचित निधि पर भारित होंगे।"

अनुच्छेद 124, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।

* * * * *

अनुच्छेद १२५

***माननीय सभापति** : डॉ. अम्बेडकर द्वारा संशोधन संख्या 1986 :

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बंबई - जनरल) : सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 125 के स्पष्टीकरण के स्थान पर निम्नलिखित स्पष्टीकरण प्रतिस्थापित किया जाए:

स्पष्टीकरण - इस अनुच्छेद में प्रयुक्त अभिव्यक्ति 'संसद द्वारा बनाई गई विधि' में संविधान के लागू होने से पूर्व पारित या बनाई गई कोई विधि, अध्यादेश, आदेश, उपनियम, नियम या विनियम शामिल हैं और जो भारत के भू-भाग में इस समय प्रभावी हैं।

"सभा को संभवत: यह याद होगा कि लेखा महापरीक्षक कार्य संसद द्वारा बनाए गए कानून से विनियमित होकर भारत सरकार अधिनियम, 1935 के द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अधीन गवर्नर जनरल द्वारा जारी अध्यादेश, आदेश, उपनियम, नियम या विनियम द्वारा विनियमित होते हैं। इसके परिणामस्वरूप, गवर्नर जनरल द्वारा जारी किए गए अध्यादेशों, आदेशों, उपकानूनों, नियमों और विनियमों को बनाए रखने के लिए इस प्रकार का स्पष्टीकरण दिया जाना जरूरी है ताकि इन आदेशों को भी शामिल किया जा सके।

* * * * *

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 30 मई, 1949, पृ. 412

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं मेरे मित्र श्री कुंजरू का संशोधन स्वीकार करने को तैयार हूँ बशर्ते वह "यह किसी स्थानीय" शब्दों को हटाने के लिए तैयार हैं।......+

पंडित हृदयनाथ कुंजरू : मैंने उन्हें हटा दिया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : चूँकि स्थानीय लेखा परीक्षण प्रान्तीय सरकारों के नियंत्रण के अधीन होता है। इसलिए, मेरी राय में "अन्य प्राधिकार" शब्दों को जोड़ना आवश्यक ओर उपयोगी हो सकता है। जैसा कि उन्होंने स्वयं ही कहा है कि आज भारत सरकार की नीति इन उपकरणों को प्रबंधित करने के लिए बहुत सारे निगम बनाए जाने की है क्योंकि विभागीय तौर पर उनका प्रबंधन किया जाना संभव नहीं है और इसके परिणामस्वरूप यह आवश्यक है कि भारत सरकार इन निगमों के लेखापरीक्षण के लिए कुछ प्रावधान करे। ऐसी स्थिति में मेरे विचार से केन्द्रीय सरकार को महालेखा परीक्षक को इन सभी प्राधिकरणों के लेखाओं का लेखापरीक्षण करने की अनुमति दिया जाना वांछनीय है। मैंने यह सुझाव दिया है, जिसमें संशोधन किया जा सकता है और मैं उस संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ।

मेरे मित्र श्री सिंधवा ने जो मुद्दा उठाया है कि महालेखापरीक्षक के कर्त्तव्यों से संबंधित थे, अधिकार नियम कार्यपालिका द्वारा बनाए जाते हैं और जो संशोधन मैंने सुझाया है वह उन्हीं व्यवस्था को जारी रखने की शक्ति प्रदान करती हैं जोकि पहले से लागू हैं और इस प्रकार से हम व्यावहारिक तौर पर कार्यपालिका को महालेखापरीक्षक के कर्त्तव्य करने का प्राधिकार दे रहे हैं। स्पष्ट है कि यह एक असंगत स्थिति है कि वित्त प्रशासन के मामले में कार्यपालिका सरकार पर नियंत्रण रखने की जिम्मेदारी जिस अधिकारी को दी जाती है उसके ही कर्त्तव्यों का निर्धारण कार्यपालिका द्वारा बनाए गए नियमों से हो। अब मैं अपने माननीय मित्र श्री सिधवा को लेकर यही उत्तर दे सकता हूँ कि यह उपबंध बहुत हद तक विद्यमान भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 151 से सीधे ले लिया गया है जो कि सरकारी धन के संरक्षण से संबंधित है, तथा धारा 166 जो कि महालेखापरीक्षक के कर्त्तव्यों के संबंध में गवर्नर जनरल द्वारा बनाए गए नियमों से संबंधित है, से सीधे ले लिया गया है। उस अधिनियम की योजना के अधीन गवर्नर जनरल द्वारा अपने स्वविवेक का निर्णय करते हुए नियम बनाया जाना अपेक्षित है अर्थात् इन नियमों को बनाने में उसे अपने मंत्रालय से परामर्श लेना आवश्यक नहीं है। उस हद तक महालेखापरीक्षक के कर्त्तव्यों को निर्धारित करने वाले उसके द्वारा बनाए गए नियम निःसंदेह कार्यपालिका से स्वतंत्र होंगे। आज हम राष्ट्रपति को स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 30 मई, 1949, पृ. 414-15

\# डाट्स व्यवधान को दर्शाता हैं।

की ऐसी कोई शक्ति नहीं देने जा रहे हैं ताकि यदि उसके द्वारा इन नियमों में कोई संशोधन किया जा सके क्योंकि इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह वर्तमान में विद्यमान मंत्रालय अर्थात् कार्यपालिका की सलाह पर कार्य करेगा। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि उस हद तक इसमें विसंगति विद्यमान है लेकिन मैं आशा करता हूँ कि मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा जो कि नई संसद के गठन होने के समय भी सदस्य के रूप में कार्य करतें रहेंगे; स्वयं ही सबसे पहले संसद से यह आग्रह करेंगे कि इस स्थिति में बदलाव किया जाए और इन नियमों के स्थान पर संसद द्वारा कानून बनाए जाएँ।

[डॉ. अम्बेडकर द्वारा पूर्व में उल्लिखित संशोधन के अलावा पंडित कुंजरू का निम्नलिखित संशोधन स्वीकृत हुआ।]

"कि अनुच्छेद 130 के खण्ड (1) में, शब्द के बाद 'राज्य के लोगों की ओर से शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।"

(अनुच्छेद 125, यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद १२७

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बंबई - जनरल):** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 127 में 'संसद' शब्द के स्थान पर 'संसद के दोनों सदन' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएँ।"

यह सिर्फ औपचारिक संशोधन है।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

* * * * *

अनुच्छेद १३०

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, यह अनुच्छेद 42 जोकि संघ की कार्यपालक शक्ति से संबंधित है, की हू-ब-हू पुनरावृत्ति है। इसमें बिल्कुल भी परिवर्तन नहीं किया गया है। यह अनुच्छेद 42 की अक्षरशः नकल है। मैंने संशोधनों की पुस्तिका में यह पाया है कि अनुच्छेद 42 में बिल्कुल वही संशोधन रखे गए थे और उन पर विस्तार से बहस हुई थी। मैं नहीं समझता कि मैं अनुच्छेद 42 पर हुई बहस के दौरान कही गई बातों को उपयोगी ढंग से जोड़ सकता हूँ और उन पर कोई संशोधन प्रस्तुत कर

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 30 मई, 1949, पृ. 415

सकता हूँ। इसलिए, मेरा निवेदन है कि मैं यहाँ प्रस्तुत किसी भी संशोधनों को स्वीकार करने हेतु तैयार नहीं हूँ।

[प्रो. के.टी. शाह, श्री मोहम्मद ताहिर और श्री नजरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत सभी तीनों संशोधन सभा द्वारा अस्वीकृत किए गए।]

* * * * *

अनुच्छेद १३१

#**माननीय सभापति :** यह केवल संशोधनों को क्रम में रखे जाने का प्रश्न है। मैं सबसे पहले चुनाव के प्रश्न को निपटाना चाहता हूँ।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : इसका विकल्प प्रस्तुतकर्ता पर छोड़ा जा सकता है। डॉ. अम्बेडकर को यह कहने दें कि वह कौन-सा प्रस्ताव प्रस्तुत करना चाहते हैं। सामान्य प्रक्रिया तो विशेष अनुच्छेद प्रस्तुत करने की होगी। प्रारूप समिति के अध्यक्ष ही विकल्प का चुनाव करेंगे, यदि आप उन्हें ऐसा करने की अनुमति दें, तो समस्या का समाधान हो जाएगा। वह इन विकल्पों में से एक को प्रस्तुत कर सकते हैं। बाद में यह प्रक्रिया सामान्य प्रक्रिया के रास्ते में आड़े आएगी। अत: मेरे विचार से सबसे अच्छी बात यही होगी कि इसे प्रस्तुतकर्ता के विवेक पर छोड़ दिया जाए। यदि आप डॉ. अम्बेडकर को प्रस्तावक के रूप में मान्यता देते हैं, तो उन्हें एक या दूसरे विकल्प को प्रस्तुत करने के लिए कहा जा सकता है।

माननीय सभापति : क्या डॉ. अम्बेडकर अन्य विकल्पों में से किसी एक को स्वीकार करने को तैयार हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के संबंध में कुछ कहना चाहता हूँ। अनुच्छेद 131 को यथास्थिति के रूप में लेते हैं, तो उसमें कोई संशय नहीं है कि इसे वैकल्पिक तौर पर प्रस्तुत करना पड़ेगा। दोनों विकल्पों में एक बात समान है वह यह है कि दोनों में राज्यपाल का चुनाव किए जाने का प्रस्ताव किया गया है। चुनाव किस तरीके से कराया जाए, फिलहाल एक गौण मुद्दा है। उसके बारे में यहाँ पर तीन या चार संशोधन प्रस्तुत किए गए हैं। उसमें एक सिद्धांत तय किया गया है जो दो वैकल्पिक प्रारूपों 131 की पूरी तरह से विरोध में है और उनमें यह सुझाव दिया गया है कि राज्यपाल को नामांकित किया जाना चाहिए। यदि उस संशोधन को सभा द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है जिसमें राज्यपाल को नामांकित करने की बात कही गई है, तो ये दोनों ही विकल्प समाप्त हो जाएंगे और सभा के लिए उनके बारे में

---

* पूर्वोक्त पृष्ठ 423

सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 30 मई, 1949, पृ. 425

विचार करना अनावश्यक हो जाएगा। इसलिए, मेरा सुझाव यह होगा कि अभी श्री गुप्ते का संशोधन संख्या 2010 और उसके बाद श्री कामत का संशोधन तथा फिर संशोधन संख्या 2015 को लेना वांछनीय होगा। यदि यह मामला पहले लिया जाता है और सभा इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि क्या राष्ट्रपति की नियुक्ति किए जाने का सिद्धांत स्वीकार किया जाना चाहिए तो स्पष्ट है कि अनुच्छेद 131 से संबंधित इन वैकल्पिक तरीकों के बारे में चर्चा करने से किसी उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होगी। मेरा तो यही सुझाव है जोकि आपके विनिर्णय पर निर्भर करता है।

माननीय सभापति : बहुत सारे संशोधन प्रस्तुत किए गए हैं जिनमें राष्ट्रपति के चुनाव या नियुक्ति के विचार का समर्थन किया गया है। अन्य संशोधन चुनाव के तरीके से संबंधित हैं। सबसे पहले मैं चुनाव के प्रश्न से छुटकारा पाना चाहता हूँ ताकि चुनाव के तरीके से संबंधित सभी संशोधनों को लिया जा सके। फिर हम नियुक्ति के प्रश्न को ले सकते हैं और उस स्थिति में नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जा सकेगी।

श्री अलादी कृष्णस्वामी अय्यर (मद्रास : जनरल) : यदि नियुक्ति की जाए या नहीं, के प्रश्न को पहले नहीं लिया जाता है, तो उससे स्वतः ही चुनाव का प्रश्न समाप्त हो जाएगा। मैं इस मामले में डॉ. अम्बेडकर के विचार से सहमत हूँ।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई : जनरल) :** सभापति महोदय, संशोधन पर इतनी लम्बी बहस होने के बाद मैं समझता हूँ कि सभा में अब लम्बा भाषण देकर सभा का समय लेना बिल्कुल अनावश्यक है। मैं केवल दो बातें स्पष्ट करना चाहता हूँ; एक तो सभा को उसके समक्ष प्रारूप समिति द्वारा रखे गए दो विकल्पों तथा संशोधन संख्या 2015 जिस पर कल से बहस चल रही है, के बीच क्या अन्तःसंबंध हैं, उसके बारे में बताना चाहूँगा। मेरा दूसरा प्रयोग यह है कि सभा को यह बताया जाए कि उसके समक्ष वास्तविक मुद्दा क्या है ताकि सभा यह जान सके कि प्रारूप समिति तथा नए संशोधन द्वारा प्रस्तुत विकल्पों के बारे में निर्णय लेते समय ये सब बातें उसके ध्यान में हों।

महोदय, प्रारूप समिति ने जो पहला विकल्प प्रस्तुत किया है, वह इस सभा द्वारा कुछ समय पहले लिए गए निर्णय के अनुसरण में लिया गया है कि प्रान्तीय संविधान को शासित करने वाले सिद्धांतों पर निर्णय लेने के लिए गठित की गई समिति की सिफारिशों के अनुरूप निर्णय लिया जाएगा। प्रारूप समिति के सामने उस मामले में कोई विकल्प नहीं था क्योंकि उसे दिए गए निर्देशों के अनुसार वह उस सिद्धांत को स्वीकार करने के लिए बाध्य था जिसे सभा ने स्वयं ही मंजूर किया हुआ था। इसलिए, प्रश्न यह उठता

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 31 मई, 1949, पृ. 467-69

है : कि प्रारूप समिति एक विकल्प प्रस्तुत किए जाने को उपयुक्त क्यों मानती है? अब प्रारूप समिति ने जो एक विकल्प प्रस्तुत किया था उसका कारण यह है। प्रारूप समिति ने यह महसूस किया जैसा कि इस सभा में प्रत्येक व्यक्ति को जानकारी है कि राज्यपाल के पास करने के लिए कोई कार्य नहीं होता है – इस बारे में एक जानी-पहचानी कहावत-सी बन गई है कि "उसे अपने विवेक या अपने निर्णय के अनुरूप कोई भी कार्य करने की जरूरत ही नहीं है।" नए संविधान के सिद्धान्तों के अनुसार, उसके लिए सभी मामलों में अपने मंत्रालय की सलाह मानना आवश्यक है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह महसूस किया गया है कि क्या मतदाताओं पर किसी एक चुनावी प्रक्रिया में भाग लेने का बोझ डालना वांछनीय है, जिसमें काफी समय बर्बाद होगा, बहुत सारी दिक्कतें आएंगी और बहुत सारे पैसे भी खर्च होंगे। यह भी महसूस किया गया कि किसी को भी इस बात की पूरी जानकारी नहीं होगी कि चुनाव लड़ने के बाद उसे संविधान के अंतर्गत क्या शक्ति प्राप्त होने की संभावना है। हमने यह महसूस किया कि राज्यपाल की शक्तियाँ इतनी सीमित और इतनी कम हैं तथा उसकी स्थिति इतनी अधिक आडम्बरपूर्ण है कि संभवतः उस पद पर चुनाव लड़ने के लिए बहुत कम लोग आएंगे। यही कारण था कि प्रारूप समिति ने दूसरे विकल्प अपनाने का सुझाव दिया।

बहस के दौरान चुनाव कराए जाने के विरोध में यह तर्क दिया गया कि इससे प्रधानमंत्री और राज्यपालों के बीच एक प्रकार की प्रतिद्वन्दिता की स्थिति पैदा होगी क्योंकि दोनों ही लोग जनादेश प्राप्त करके आएंगे। जहाँ तक मेरी सोच का प्रश्न है मैं उस तर्क से प्रभावित नहीं हुआ क्योकि मैं इस बात को स्वीकार नहीं करता हूँ कि चुनाव होने की स्थिति के अन्तर्गत भी प्रधानमंत्री और राज्यपाल के बीच किसी प्रकार की प्रतिद्वन्दिता की स्थिति पैदा होगी। क्योंकि इसका एक साधारण कारण यह है कि प्रधानमंत्री किसी नीति के आधार पर जबकि राज्यपाल नीति के आधार पर नहीं चुना जाएगा। क्योंकि यदि उसके पास कोई नीति नहीं होगी तो उसे किसी प्रकार की शक्ति भी प्राप्त नहीं होगी। जहाँ तक मैं सोच पा रहा हूँ, राज्यपाल का चुनाव उसके व्यक्तित्व के आधार पर होगा : अपने दर्जे, अपने चरित्र, अपनी शिक्षा, लोगों के बीच अपनी स्थिति आदि के आधार पर वह राज्यपाल के पद को भरने के लिए क्या सही व्यक्ति है? प्रधानमंत्री के मामले में स्थिति यह होगी; क्या उसका कार्यक्रम उपयुक्त है, क्या उसका कार्यक्रम सही है? इसलिए यदि हम चुनाव के सिद्धांत को भी स्वीकारते हैं तो किसी प्रकार का विवाद पैदा नहीं हो सकता।

दूसरा तर्क है, यदि हम ऐसा राज्यपाल बनाने का प्रावधान रखने जा रहे हैं जोकि पूरी तरह से सजावटी पद है, तो क्या ऐसे पद के लिए इतने अधिक खर्च और इतनी अधिक कठिनाई झेलकर चुनाव कराना आवश्यक है? इसी भावना के कारण प्रारूप समिति ने दूसरा विकल्प सुझाया है। अब इस संभा में जो बहस हुई है, उससे मेरे मन में यह धारणा

बनी है कि अधिकतर वक्ताओं का यह मानना है कि प्रारूप समिति द्वारा सुझाए गए दूसरे विकल्प तथा इस विशेष संशोधन के बीच काफी गुणात्मक और मौलिक भिन्नता है। मेरे विचार से दूसरे विकल्प तथा इस संशोधन के बीच कोई मौलिक अन्तर नहीं है। प्रारूप समिति द्वारा सुझाए गए दूसरे विकल्प में भी नाम-निर्देशित किए जाने का प्रस्ताव किया गया है। केवल एक बात है कि इसमें कतिपय योग्यताएं रखी गई हैं। अर्थात् राष्ट्रपति प्रान्तीय विधानमंडल द्वारा चुने गए पैनल के व्यक्तियों में से ही इस पद के लिए नाम-निर्देशित करें। लेकिन, मूलतः यह नाम-निर्देशित किए जाने का ही प्रस्ताव है। उस अर्थ में प्रारूप समिति द्वारा प्रस्तुत किए गए दूसरे विकल्प तथा श्री बृजेश्वर प्रसाद द्वारा सभापटल पर रखे गए संशोधन के बीच कोई महत्त्वपूर्ण और मौलिक अन्तर मौजूद नहीं है। यदि दूसरे शब्दों में कहूँ तो सभा के समक्ष दूसरे विकल्प तथा इस संशोधन के बीच किसी एक को चुनने का विकल्प मौजूद है। संशोधन में कहा गया है कि नाम-निर्देशन के लिए कोई योग्यता निर्धारित नहीं की जानी चाहिए। दूसरे विकल्प में कहा गया है कि नाम-निर्देशन में योग्यता निर्धारित की जानी चाहिए, जिसे कतिपय शर्तों के विषयाधीन रखा जाना चाहिए। कतिपय दृष्टि से विचार करने पर मुझे भी यह प्रतीत होता है कि प्रारूप समिति का जो प्रस्ताव है अर्थात् नाम-निर्देशन के साथ योग्यता निर्धारित की जानी चाहिए, वह साधारण नाम-निर्देशन की तुलना में एक बेहतर विकल्प है। साथ ही मैं सभा को सावधान करना चाहता हूँ कि सभा के समक्ष वास्तविक मुद्दा वस्तुतः नाम-निर्देशन या चुनाव का नहीं है – क्योंकि मैं यह कह चुका हूँ कि यह पद पूरी तरह से सजावटी पद बनने जा रहा है; इस पद पर किसी व्यक्ति की नियुक्ति किस प्रकार होती है, उसकी नियुक्ति नाम-निर्देशन से होती है अथवा किसी अन्य तरीके से, यह एक पूरी तरह से मनोवैज्ञानिक प्रश्न है – अधिकतर लोगों को कौन-सी स्थिति अच्छी लगेगी – कोई नाम-निर्देशित व्यक्ति या फिर ऐसे व्यक्ति का नाम-निर्देशन जिसमें विधानमण्डल ने किसी रूप में भाग लिया हो। उसके आगे मुझे नहीं लगता कि इसका और कोई निहितार्थ है। इसलिए, मैं सभा को यह कहना चाहता हूँ : कि सभा के समक्ष वास्तविक मुद्दा नाम-निर्देशन या चुनाव का नहीं है बल्कि मुद्दा यह है कि आप अपने राज्यपाल को क्या शक्ति देने का प्रस्ताव करते हैं। यदि राज्यपाल का पद विशुद्ध रूप से एक संवैधानिक राज्यपाल बनाए जाना है जिसे उससे अधिक शक्ति नहीं प्रदान की जानी है। जितनी कि हमने अधिनियम में उसे प्रदान करने का विचार किया है और उसे प्रान्तीय मंत्रालय के आन्तरिक प्रशासन में हस्तक्षेप करने की कोई शक्ति नहीं दी जानी है, तो निजी तौर पर मुझे नाम-निर्देशन के सिद्धांत पर कोई मौलिक आपत्ति नहीं है। इसलिए, मेरा यह निवेदन है ...

श्री रोहिणी कुमार चौधरी : क्या वह किसी ऐसी स्थिति पर विचार कर सकते हैं जहां कोई राज्यपाल जिसे आप महज प्रतीक समझें या नहीं, उसे मंत्रालय गठित करने

की शक्ति नहीं होगी? क्या वह किसी भी व्यक्ति को सरकार गठित करने के लिए आमंत्रित करने में सक्षम नहीं होगा चाहे उस व्यक्ति के पास बड़ा बहुमत हो या नहीं हो? और वह एक बड़ी शक्ति है जिससे उसे किसी भी परिस्थितियों के अधीन वंचित नहीं किया जा सकता।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ठीक है वह शक्ति तो उसे प्राप्त होगी, चाहे वह चुना हुआ राज्यपाल हो या नाम-निर्देशित राज्यपाल। यदि वह किसी गलत व्यक्ति को सरकार गठित करने के लिए आमंत्रित करता है, तो उसे उसकी कीमत शीघ्र चुकानी होगी, जब वह पाएगा कि उसने एक गलत विकल्प चुना है। और वह कोई ऐसी बात नहीं है जिसे कोई चुना हुआ राज्यपाल नहीं कर सकता। ऐसे किसी राज्यपाल का अपना कोई मित्र हो सकता है जिसे वह सरकार गठित करने के लिए आमंत्रित कर सकता है और उस मुद्दे को सभा द्वारा स्वयं ही अविश्वास अथवा विश्वास प्रस्ताव के माध्यम से निपटाया जा सकता है। लेकिन प्रश्न का यह पहलू कोई महत्त्वपूर्ण नहीं है। प्रश्न का महत्त्वपूर्ण पहलू है कि क्या राज्यपाल को सरकार, जिसे स्थानीय विधानमंडल में बहुमत प्राप्त है, के कामकाज में हस्तक्षेप करने की कोई शक्ति प्रदान की जाएगी? यदि उस राज्यपाल के पास उस सरकार, जिसके पास बहुमत है, के आन्तरिक प्रशासन में हस्तक्षेप करने की कोई शक्ति नहीं होगी तो मुझे लगता है कि यह जो प्रश्न है कि उसका नाम-निर्देशन होना चाहिए या चुनाव होना चाहिए, पूरी तरह से अप्रासंगिक है। मैं इसको इसी नजरिए से देखता हूँ और मैं सभा को बताना चाहता हूँ कि वह इस बारे में निर्णय लेते समय इस बारे में अधिक नहीं सोचें कि राज्यपाल के पद पर चयन नाम-निर्देशन के माध्यम से होना चाहिए या चुनाव के माध्यम से, क्योंकि वह कमोबेश एक शैक्षणिक प्रश्न है - उन लोगों को अपने मन में इस प्रश्न को रखना चाहिए : राज्यपाल को कौन-सी शक्ति देने जा रहे हैं? मैं समझता हूँ कि हमारे सामने आज यह मामला नहीं है। हम बाद में इसे लेंगे जब हम अनुच्छेद 175 और 188 के प्रश्न पर आएंगे और संभवत: संशोधन के द्वारा अथवा कुछ अन्य खण्ड को जोड़कर उसे शक्ति प्रदान करेंगे। सभा को इन नई धाराओं के बारे में सतर्क तथा सावधान रहना चाहिए जब बाद में ये उनके समक्ष लाई जाएंगी। लेकिन आज मुझे लगता है कि यदि संविधान उसी सिद्धांत को स्वीकार करता है जो हमारी मंशा रही है कि राज्यपाल का पद विशुद्ध रूप से संवैधानिक राज्यपाल का होना चाहिए, जिसके पास प्रान्त के प्रशासन में हस्तक्षेप करने की शक्ति नहीं होनी चाहिए तो मुझे यह प्रश्न बिल्कुल अर्थहीन लगता है कि उसका चयन नाम-निर्देशन के आधार पर होना चाहिए अथवा चुनाव के माध्यम से।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : क्या माननीय संशोधन को स्वीकार कर रहे हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं इसे सभा के विवेक पर छोड़ रहा हूँ।

माननीय सभापति : मैं फिर श्री बृजेश्वर प्रसाद द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 2015 पर मत लूँगा।

प्रस्ताव है:

"कि अनुच्छेद 131 के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:-

"131, राज्य के राज्यपाल को राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा नियुक्त करेगा।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

माननीय सभापति : मैं समझता हूँ कि इसके बाद इस अनुच्छेद के लिए प्रस्तुत सभी दूसरे संशोधन समाप्त हो गए हैं और इसलिए मैं यथासंशोधित अनुच्छेद को मत के लिए रखूँगा।

अनुच्छेद 131, यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।

* * * * *

अनुच्छेद १३२

***माननीय सभापति :** डॉ. अम्बेडकर का एक संशोधन है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 2033 और 2041 के सदंर्भ में अनुच्छेद 132 के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाए।

राज्यपाल की पदावधि - 132 :

(1) राज्यपाल, राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत पद धारण करेगा।

(2) राज्यपाल, राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद के पूर्वगामी उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्यपाल अपने पदग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा:

परंतु राज्यपाल अपने पद की अवधि समाप्त हो जाने पर भी, तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक उसका उत्तराधिकारी अपना पद ग्रहण नहीं कर लेता।

महोदय, अब, यह अनुच्छेद ...।#

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना : मेरा एक प्रश्न है। संशोधन संख्या 2033 प्रस्तुत नहीं

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 31 मई, 1949, पृ. 470

\# डाट्स व्यवधान दर्शाता है।
पूर्वोक्त पृष्ठ 474

किया गया है। एक दूसरा संशोधन 2041 है जिसके बारे में यह संशोधन है। लेकिन उसे भी प्रस्तुत नहीं किया गया है।

माननीय सभापति : लेकिन उस संशोधन को प्रस्तुत नहीं किया गया है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : संशोधन संख्या 2041 डॉ. अम्बेडकर के नाम से है।

माननीय सभापति : ठीक है, वह इसे औपचारिक तौर पर प्रस्तुत कर सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं यह कह चुका हूँ कि मैं उस संशोधन के स्थान पर इसे प्रस्तुत कर रहा हूँ।

माननीय सभापति : डॉ. अम्बेडकर संशोधन संख्या 2041 प्रस्तुत कर रहे हैं।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, स्थिति इस प्रकार है:

राष्ट्रपति को सामान्य अर्थों में उसे हटाने की यह शक्ति दी गई है। प्रो. शाह यह चाहते हैं कि राज्यपाल को हटाए जाने के लिए संविधान में ही कतिपय आधारों का उल्लेख किया जाना चाहिए। मुझे ऐसा लगता है कि जब आपने राष्ट्रपति को एक सामान्य शक्ति प्रदान कर दी है, तो आप राज्यपाल को भ्रष्टाचार, संविधान का उल्लंघन या किसी अन्य कारण से जिसे राष्ट्रपति को यह मानने में तनिक भी संदेह नहीं हो कि राज्यपाल को हटाने के लिए वह एक वैध आधार है, के कारण से हटाने की शक्ति भी प्रदान कर देते हैं। इसलिए, मुझे लगता है कि संविधान में इतनी सारी सीमाओं का उल्लेख करके उसे अनावश्यक रूप से बोझिल बनाना होगा जबकि उस सूत्र के अधीन कि राज्यपाल राष्ट्रपति की समुक्ति पर पद पर बना रहेगा, के आधार पर राष्ट्रपति के लिए कार्यवाही कर पाना पूरी तरह से संभव होगा। इसलिए, मेरे विचार से इन शर्तों को वर्गीकृत करना अनावश्यक है जिसके अधीन राष्ट्रपति राज्यपाल को हटा सकता है।

[डॉ. अम्बेडकर का उपर्युक्त संशोधन स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 132, यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।]

अनुच्छेद १३४

****माननीय सभापति :** हमने पहले विकल्प को छोड़ दिया है और हमें केवल दूसरे विकल्प के मामले में संशोधन लेने हैं और मैं समझता हूँ कि संशोधन संख्या 164 जो डॉ. अम्बेडकर के नाम से है। इस मामले को कवर कर लेगा।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 31 मई, 1949, पृ. 470
डाट्स व्यवधान दर्शाता है
पूर्वोक्त पृष्ठ 474

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2061 के संदर्भ में अनुच्छेद 134 के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:

राज्यपाल नियुक्त होने के लिए अर्हताएं – कोई व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त होने का पात्र तभी होगा जब वह भारत का नागरिक हो और पैंतीस वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

महोदय, क्या मैं संशोधन को प्रस्तावित होना मान लूँ?

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : सभापति महोदय सभापीठ तथा सभा किसी संशोधन के प्रतिस्थापन की अनुमति दे सकती है।

माननीय सभापति : आपको पूरे संशोधन पढ़ने की जरूरत नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं संशोधन संख्या 2061 प्रस्तुत करता हूँ। महोदय, मैं संशोधन संख्या 2061 के मामले में यह भी संशोधन प्रस्तुत करता हूँ कि निम्नलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2061 के संदर्भ में अनुच्छेद 134 के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:

"कोई व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त होने का पात्र तभी होगा जब वह भारत का नागरिक है और पैंतीस वर्ष की आयु पूरी कर चुका है।"

[प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 134 संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १३५

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 135 के खण्ड (1) में 'संसद के किसी अथवा' शब्दों के स्थान पर 'संसद के किसी सदन अथवा किसी सदन' शब्द किए जाएँ।"

यह एक औपचारिक संशोधन है।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 135 के खण्ड (1) में :

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 31 मई, 1949, पृ. 475

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 476

(क) 'संसद के किसी अथवा' शब्दों के स्थान पर 'संसद के किसी सदन अथवा किसी सदन' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएँ।

(ख) 'संसद या ऐसे विधानमंडल, जो भी स्थिति हो में' शब्दों के स्थान पर 'उस सदन में' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएँ।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 135 के खण्ड (2) में 'परिलब्धि की स्थिति या' शब्दों के स्थान पर 'लाभ के' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।

श्री एच.वी. कामत : (मध्य प्रान्त बेरार - जनरल) : सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 135 के खण्ड (3) में 'राज्यपाल शासकीय निवास का हकदार होगा और' शब्द हटा दिए जाएँ।

माननीय सभापति : "वहाँ" शब्द का भी लोप किया जाना चाहिए।

श्री एच.वी. कामत : "वहाँ" शब्द बना रहेगा ... मुझे नहीं मालूम कि डॉ. अम्बेडकर और प्रारूप समिति के उनके सहयोगियों को किस संविधान से प्रेरणा मिली है।

एक माननीय सदस्य : आयरलैण्ड के संविधान से।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हमने राष्ट्रपति के संदर्भ में बिल्कुल उन्हीं शब्दों में अनुच्छेद 48 पारित किया है। यहाँ हम केवल अनुच्छेद 48 का ही अनुसरण कर रहे हैं।

* * * * *

[डॉ. अम्बेडकर के सभी संशोधन स्वीकृत हुए। अन्य अस्वीकृत हुए।]

* * * * *

[अनुच्छेद 135, यथासंशोधित रूप में स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ा गया।]

***माननीय सभापति :** अनुच्छेद 135 के बाद एक नया अनुच्छेद जोड़े जाने का सुझाव देने वाले प्रो. शाह के संशोधन के संबंध में सूचना मिली है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हम लोग अगला संशोधन लें उससे पहले मेरा

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 31 मई, 1949, पृ. 482

+ पूर्वोक्त पृष्ठ 484

यह सुझाव है कि अनुच्छेद 135 में, "निर्वाचित" शब्द का लोप किया जाए।

माननीय सभापति : वह तो स्पष्ट है।

* * * * *

अनुच्छेद १३६

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 136 में 'राज्य विधानमंडल के सदस्यों की उपस्थिति में' शब्दों के स्थान पर 'उस राज्य की अधिकारिता वाले उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति या उसकी अनुपस्थिति में उस न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश के समक्ष' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएँ।"

* * * * *

माननीय सभापति : चूंकि संशोधन संख्या 2107, 2108, और 2109 प्रस्तुत नहीं किए गए हैं। अत: मैं यह मान लेता हूँ कि उन्हें प्रस्तुत कर दिया गया है। क्या डॉ. अम्बेडकर प्रस्तुत संशोधनों पर कोई उत्तर देना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तुत संशोधन तथा मेरे मित्र श्री कामत द्वारा प्रस्तुत एक संशोधन को स्वीकार करता हूँ।

(वे संशोधन जिन्हें डॉ. अम्बेडकर ने स्वीकार किया, निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किए गए थे):

कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2104 में निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:

"कि अनुच्छेद 136 में 'राज्य विधानमंडल के सदस्यों की उपस्थिति में' शब्दों के स्थान पर 'उस राज्य की अधिकारिता वाले उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति या उसकी अनुपस्थिति में उस न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश के समक्ष' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएँ।"

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2106 में, निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:-

"कि अनुच्छेद 136 में 'अमुक सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूँ (या शपथ लेता हूँ)' शब्दों के स्थान पर निम्नलिखित शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं:

'मैं अमुक ईश्वर की शपथ लेता हूँ सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूँ'

पंडित हृदयनाथ कुंजरू (संयुक्त प्रान्त जनरल) : शपथ किस प्रकार पढ़ी जाएगी?

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 31 मई, 1949, पृ. 484

क्या इसे ऐसे पढ़ा जाएगा, "मैं भगवान के नाम पर शपथ लेता हूँ या मैं प्रतिज्ञान लेता हूँ" या नहीं? प्रश्न यह है कुछ लोग ऐसा मान सकते हैं कि राज्यपाल को भगवान के नाम पर शपथ लेनी चाहिए। जबकि इस देश में कुछ लोग नास्तिक हो सकते हैं (व्यवधान) सभापति महोदय ने शपथ को पढ़कर सुनाया (मैं इसमें एक विकल्प देख रहा हूँ।) मैं यह जानना चाहता था यदि कोई भगवान के नाम पर शपथ नहीं लेना चाहता हो तो उसे ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिए।

माननीय सभापति : नहीं, नहीं।

प्रस्ताव है:

"कि अनुच्छेद 136, यथासंशोधित रूप में संविधान का भाग बने।"

(प्रस्ताव स्वीकृति हुआ।)

अनुच्छेद 136 यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।

तत्पश्चात् सभा बुधवार, 1 जून, 1949 मध्याह्न पूर्व 8.00 बजे तक के लिए स्थगित हुई।

अनुच्छेद १३७

***माननीय सभापति :** आज हम अनुच्छेद 137 से शुरू करतें हैं। इसमें एक संशोधन है जिसके बारे में श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने सूचना दी हुई है लेकिन, वह एक नकारात्मक संशोधन है।

(संशोधन संख्या 2111 प्रस्तुत नहीं किया गया।)

श्री टी.टी. कृष्णामाचारी (मद्रास : जनरल) : पूर्व में लिए गए निर्णय के दृष्टिगत इस अनुच्छेद को प्रस्तुत नहीं किया जा सकता।

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद (बिहार - जनरल) : इस पर सभा में मत लिया जाना चाहिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई : जनरल) : इस पर मत लिया जाए।

माननीय सभापति : अन्य कोई भी संशोधन प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है। मैं ऐसा मानता हूँ। ***[अनुच्छेद 137 संविधान से हटाया गया।]***

अनुच्छेद १४३

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** सभापति महोदय, मैं नहीं समझता कि मेरे

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 1 जून, 1949, पृ. 487

मित्र श्री टी.टी. कृष्णामाचारी ने श्री कामत के इस संशोधन के बारे में जो कुछ कहा है उसके बाद मेरे लिए इस पर बोलना तथा इसमें भाग लेना जरूरी है। लेकिन, चूंकि मेरे मित्र पंडित कुंजरू ने बार-बार मुझसे प्रश्न पूछा है और उस पर उत्तर दिए जाने की मांग की है, इसलिए शिष्टाचारवश मुझे दो शब्द कहने चाहिए। महोदय, मुख्य और महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या राज्यपाल को विवेकाधीन शक्तियां दी जानी चाहिए? यही एक मुख्य और प्रमुख प्रश्न है। इसके बाद हम इस प्रश्न के बारे में लिए गए कुछ निर्णय पर आते हैं, दूसरा प्रश्न यह है कि क्या अनुच्छेद 143 के खण्ड (1) के अन्तिम भाग में प्रयुक्त किए गए शब्दों को उस अनुच्छेद में बनाए रखा जाना चाहिए या उन्हें कहीं अन्यत्र स्थानांतरित किया जाना चाहिए, उस बारे में विचार किया जा सकता है। पहली बात यह है और इसलिए मैं स्वयं को इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए प्रस्तुत करता हूँ जिसे मैं महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। बहस के दौरान यह कहा गया है कि राज्यपाल को विवेकाधीन शक्तियां बनाए रखना प्रान्तों में जिम्मेदार सरकार की भावना के विपरीत है। यह भी कहा गया है कि राज्यपाल की विवेकाधीन शक्तियों को बनाए रखे जाने में भारत सरकार अधिनियम, 1935 जो कि मुख्य तौर पर अलोकतांत्रित अधिनियम था, की बू आती है। अब अपनी ओर से मैं यह कहना चाहता हूँ कि मेरे मन में इस बारे में कोई शंका नहीं है कि राज्यपाल को कतिपय विवेकाधीन शक्तियाँ प्रदान किया जाना किसी भी मायने में जिम्मेदार सरकार के विपरीत नहीं है या ये शक्तियां दिया जाना उस अवधारणा पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं डालता है। मैं उस मुद्दे को नहीं लेना चाहता हूँ क्योंकि मैं इस मुद्दे पर सभा को कनाडा के संविधान तथा ऑस्ट्रेलिया के संविधान के उपबंधों का संदर्भ देकर संतुष्ट कर सकता हूँ। मेरे विचार से इस सभा में कोई भी ऐसा नहीं होगा जो इस पर विवाद खड़ा करेगा कि कनाडा की सरकार की प्रणाली पूरी तरह से जिम्मेदार प्रणाली नहीं है और न ही इस सभा में कोई इस बात को चुनौती देगा कि ऑस्ट्रेलिया की सरकार जिम्मेदार सरकार के रूप में कार्य नहीं करती है। यह कहते हुए मैं कनाडा के संविधान की धारा 55 को पढ़ता हूँ।

धारा 55 - जहाँ संसद के सदनों के द्वारा पारित किसी विधेयक को महारानी की स्वीकृति के लिए गवर्नर जनरल को प्रस्तुत किया जाता है, तो वह अपने विवेक के अनुसार और इस अधिनियम के उपबंधों के विषयाधीन महारानी के नाम पर विधेयक को स्वीकृति प्रदान कर देता है अथवा महारानी की स्वीकृति लेने के लिए उसे स्थगित रखता है अथवा महारानी के हस्ताक्षर के लिए विधेयक को अपने संरक्षण में रख लेता है।

पंडित हृदयनाथ कुंजरू : क्या मैं डॉ. अम्बेडकर से यह पूछ सकता हूँ कि ब्रिटिश उत्तरी अमेरिका अधिनियम कब पारित किया गया था?

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 1 जून, 1949, पृ. 500-02

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इससे बिल्कुल फर्क नहीं पड़ता है। अधिनियम की तिथि मायने नहीं रखती।

श्री एच.वी. कामत : लगभग एक शताब्दी पहले।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरा यही उत्तर है। कनाडा-वासियों तथा ऑस्ट्रेलिया वासियों ने इस चरण में भी इस उपबंध को हटाना जरूरी नहीं समझा है। वे लोग इस बात से पूरी तरह संतुष्ट हैं कि कनाडा अधिनियम की धारा 55 में उल्लिखित इस प्रावधान को बनाए रखना जिम्मेदार सरकार के बिल्कुल अनुरूप है। यदि उन लोगों ने ऐसा अनुभव किया होता कि यह उपबंध जिम्मेदार सरकार की संकल्पना के अनुरूप नहीं है तो वे लोग आज भी डोमेनियन के रूप में पूरे अधिकार से इस उपबंध को समाप्त कर सकते हैं। उन्होंने ऐसा नहीं किया है। इसिलए, पंडित कुंजरू के प्रश्न का उत्तर देते हुए मैं यह कह सकता हूँ कि कनाडावासियों तथा ऑस्ट्रेलियावासियों ने ऐसा नहीं सोचा है कि इस प्रकार का उपबंध जिम्मेदार सरकार का उल्लंघन करते हैं।

श्री लोकनाथ मिश्र (उड़ीसा - जनरल) : महोदय, मेरा एक औचित्य का प्रश्न है क्या हमें कनाडा या ऑस्ट्रेलिया का दर्जा मिलने जा रहा है? या हम एक गणराज्य का संविधान बनाने जा रहे हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उनकी बात को समझ नहीं सका। यदि सभा इस बात से संतुष्ट हो, जैसा कि मैं ऐसा करता हूँ कि राज्यपाल में कतिपय विवेकाधीन शक्तियाँ निहित किए जाने का विद्यमान उपबंध जिम्मेदार सरकार के विरुद्ध या असंगति में है, इस बारे में कोई विवाद नहीं हो सकता कि इस खण्ड को बनाए रखना वांछनीय है और मेरे विचार से तो यह आवश्यक है। एकमात्र प्रश्न यह उठता है ...

पंडित हृदयनाथ कुँजरू : ठीक है डॉ. अम्बेडकर आलोचना के मुद्दे को पूरी तरह से छोड़ चुके हैं। आलोचना का विषय यह नहीं है कि अनुच्छेद 175 में राज्यपाल को कुछ शक्तियां नहीं दी जानी चाहिएं, अनुच्छेद जिस पर चर्चा हो रही है, के अन्तर्गत सामान्य प्रकृति की कतिपय विवेकाधीन शक्तियाँ राज्यपाल में निहित किए जाने की आलोचना हो रही है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे विचार से उन्होंने अनुच्छेद को गलत पढ़ लिया है। मुझे खेद है कि मेरे पास इस समय प्रारूप संविधान की प्रति नहीं है। "जहां तक उसे या इस संविधान के अंतर्गत को छोड़कर" शब्दों का प्रयोग किया गया है। यदि इन शब्दों का प्रयोग किया गया होता तो उन स्थितियों को छोड़कर जब वह ऐसा सोचता हो कि उसे मंत्रियों की इच्छा के विरुद्ध या उनके द्वारा दी गई सलाह के विरुद्ध विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करना चाहिए "तो फिर मेरे विचार से मेरे माननीय मित्र पंडित कुँजरू द्वारा की गई आलोचना वैध होती। यह खण्ड बड़ा ही सीमित खण्ड है जिसमें

कहा गया है कि: "जहाँ तक उसे या इस संविधान के अंतर्गत को छोड़कर" इसलिए अनुच्छेद 143 को कुछ अन्य अनुच्छेदों के साथ मिलाकर पढ़ना होगा जिनमें राज्यपाल के लिए विशेष तौर पर शक्ति आरक्षित की गई है। यह कोई सामान्य खण्ड नहीं है, जिसमें राज्यपाल को किसी भी मामले में अपने मंत्रियों की सलाह की अवहेलना करने की शक्ति नहीं दी गई है जिसे वह मानता है कि उसे उसकी अवहेलना करनी चाहिए। इसलिए मैं समझता हूँ कि मेरे माननीय मित्र पंडित कुँजरू का तर्क सही नहीं है।

इसलिए, जैसा कि मैं बता चुका हूँ कि विनिर्दिष्ट मामलों में राज्यपाल में निहित विवेकाधीन शक्ति को बनाए रखना जिम्मेदार सरकार की प्रणाली के असंगत नहीं है। एकमात्र प्रश्न जो उठता है, वह यह है कि हम इस विवेकाधीन शक्ति का उल्लेख किस प्रकार से करें? मुझे ऐसा लगता है कि तीन तरीके से इसे किया जा सकता है। एक तरीका तो यह है कि अनुच्छेद 143 से इन शब्दों को हटा दिया जाए। जैसा कि मेरे माननीय मित्र पंडित कुँजरू और अन्य लोग चाहते हैं और उनके स्थान पर अनुच्छेद 175 या 188 या ऐसे कोई अन्य प्रावधान जो इसके बाद सभा पुन: स्थापित करे, जोड़ दिए जाएं। जिसमें राज्यपाल में विवेकाधीन शक्ति यह कहते हुए निहित की जाए कि अनुच्छेद 143 के होते हुए भी राज्यपाल के पास यह या वह शक्ति रहेगी। दूसरा तरीका अनुच्छेद 143 में यह उपबंध करना होगा "अनुच्छेदों में उपबंध किए गए या अनुच्छेदों 175, 188, 200 या जहाँ कहीं भी विशेष रूप् से इनका उल्लेख किया गया हो, को छोड़कर" लेकिन, मैं सभा के समक्ष जो बताने की कोशिश कर रहा हूँ वह यह है कि सभा इस बात का उल्लेख करने से नहीं बच सकती कि किसी न किसी तरीके से राज्यपाल के पास विवेकाधीन शक्ति बनी रहेगी।

मेरे माननीय मित्र पंडित कुँजरू और वे सभी लोग जिन्होंने किसी न किसी रूप में यह कहा है कि इन शब्दों को यहां से हटाकर कहीं अन्यत्र स्थानांतरित किया जाए या विशिष्ट अनुच्छेदों के बारे में अनुच्छेद 143 में उल्लेख कर दिया जाना चाहिए, का कुछ हद तक समर्थन किया जा सकता है। मुझे ऐसा लगता है कि यह तो महज प्रारूप तैयार करने का एक तरीका है। इसमें किसी विषय-वस्तु और सिद्धांत का कोई प्रश्न नहीं है। मैं स्वयं ही अनुच्छेद 143 के खण्ड (1) के अन्तिम भाग में संशोधन किए जाने का इच्छुक हूँ यदि मैं इस चरण में यह जान लूँ कि राज्यपाल को विवेकाधीन शक्ति निहित किए जाने के संबंध में संविधान सभा क्या उपबंध करने का प्रस्ताव करती है। मेरी कठिनाई यह है कि अभी हम न तो अनुच्छेद 175 और न ही 188 पर पहुँचे हैं और न ही हमने राज्यपाल को विवेकाधीन शक्ति निहित किए जाने के मामले में किए जा रहे अन्य उपबंधों की सभी सम्भावनाओं पर गौर किया है। यदि मैं यह जानता तो मैं अनुच्छेद 143 में संशोधन करने पर तथा विशेष अनुच्छेद का उल्लेख करने पर सहमत हो जाता लेकिन वैसा अभी नहीं किया जा सकता। इसलिए, मेरा यह कहना है कि यदि अनुच्छेद 143 में ये शब्द बने भी रहे तो इसमें कोई गलती नहीं होगी। वे निश्चित ही असंगत नहीं है।

श्री एच.वी. कामत : क्या राष्ट्रपति तथा उनके मंत्रियों से संबंधित अनुच्छेद 61 (1) तथा इस अनुच्छेद के बीच कोई विषयगत अन्तर्गत नहीं है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : निःसंदेह क्योंकि हम राष्ट्रपति में कोई भी विवेकाधीन शक्ति निहित नहीं करना चाहते। चूंकि प्रान्तीय सरकारों को केन्द्रीय सरकार के अधीनस्थ होकर कार्य करने की जरूरत पड़ सकती है और इसलिए यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रान्तीय सरकारें केन्द्रीय सरकार के अधीन होकर कार्य करें। राज्यपाल के लिए कतिपय चीजें आरक्षित करनी पड़ेंगी ताकि राष्ट्रपति को यह सुनिश्चित करने का अवसर प्राप्त हो सके कि जिन नियमों के अधीन प्रान्तीय सरकारों को संविधान के अनुरूप या केन्द्रीय सरकार के अधीनस्थ होकर कार्य चल रहे हैं।

श्री एच.वी. कामत : क्या इस प्रकार की सामान्य विवेकाधीन शक्तियाँ प्रदान करने के स्थान पर विवेकाधीन शक्तियों के संबंध में संविधान में ही कतिपय अनुच्छेदों को विनिर्दिष्ट कर दिया जाना बेहतर नहीं रहेगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं यह कह चुका हूँ कि मैं इसे बड़ी तत्परता के साथ करूँगा। यदि मुझे इस बात की जानकारी हो जाए कि यह सभा राज्यपाल में विवेकाधीन शक्तियाँ निहित किए जाने के संबंध में संविधान में किन अनुच्छेदों को शामिल करने जा रही है तो मैं विशिष्ट अनुच्छेदों का उपबंध करने के लिए तैयार हूँ।

श्री एच.वी. कामत : इसे स्थगित क्यों नहीं रख दिया जाए?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हम इसमें संशोधन कर सकते हैं। यह सभा अनुच्छेद 143 को संशोधित करने के लिए पूर्ण रूप से सक्षम है। यदि इस पर पूरी तरह से विचार करने के बाद सभा यह महसूस करती है कि अनुच्छेदों के बारे में विशिष्ट रूप से उल्लेख कर दिया जाना बेहतर रास्ता होगा तो वह ऐसा कर सकती है। यह तो पूरी तरह से तर्क की बात है।

[दो संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 143 संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १४४

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"अनुच्छेद 144 के खण्ड (1) के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए :"

144 (1) मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल करेगा और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राज्यपाल, मुख्यमंत्री की सलाह पर करेगा तथा मंत्री, राज्यपाल के प्रसादपर्यंत अपना पद

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 1 जून, 1949, पृ. 503

धारण करेंगे।

परंतु बिहार, मध्य प्रदेश और उड़ीसा राज्यों में जनजातियों के कल्याण का भारसाधक एक मंत्री होगा जो साथ ही अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के कल्याण का या किसी अन्य कार्य का भी भारसाधक हो सकेगा।

(1 क) मंत्री-परिषद राज्य की विधान सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : मेरा यह सुझाव है कि माननीय डॉ. अम्बेडकर अनुच्छेद 144 के खण्ड (1 क) में "मंत्रियों के" शब्दों के बाद "परिषद्" शब्द जोड़कर इसे बदल सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह बिल्कुल ठीक है। यह अनुच्छेद 62 के अनुरूप होगा। मैं वह संशोधन प्रस्तुत करता हूँ।

श्री महावीर त्यागी : मैं यह जानना चाहता हूँ कि बिहार और अन्य स्थानों के लिए विशेष मंत्री की नियुक्ति का क्या तरीका होगा? क्या मंत्री की नियुक्ति मुख्यमंत्री की सलाह पर राज्यपाल द्वारा की जाएगी - यह तो बिल्कुल ही स्पष्ट है कि ऐसा होगा, लेकिन जब आप कहते हैं "बशर्ते" तो इसका अर्थ यह हो जाता है कि इसमें जो कुछ पहले कहा जा चुका है वह इन मंत्रियों के मामले में लागू नहीं होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसमें यह कहा गया है कि खण्ड (1) के अधीन नियुक्त किए गए मंत्रियों के मामले में इसका अर्थ यह है कि उन लोगों की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा मुख्यमंत्री की सलाह पर की जाती है, एक मंत्री इस विभाग का प्रभारी होगा।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 144 के खण्ड (4) में 'अपने मंत्रियों को चुनने और उनके साथ अपने संबंध के मामले में' शब्दों के स्थान पर 'अपने मंत्रियों के चयन में और संविधान के अधीन अपने अन्य कृत्यों का प्रयोग करने में' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।"

महोदय, यह महज एक शाब्दिक संशोधन है।

* * * * *

+माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"अनुच्छेद 144 के खण्ड (6) का लोप किया जाए।"

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 1 जून, 1949, पृ. 506

++ पूर्वोक्त पृष्ठ 579

श्री बृजेश्वर प्रसाद : क्यों?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : क्योंकि कतिपय अनुच्छेदों में परिभाषित की गई शक्तियों से अधिक विवेकाधीन शक्ति हम प्रदान नहीं करना चाहते, हम आपकी मांग को पूरा करने की कोशिश कर रहे हैं।

* * * * *

***श्री जसपतराय कपूर :** यदि किसी सदस्य को तकनीकी आधार पर कोई आपत्ति हो तो वह अलग बात है लेकिन, यह एक ऐसा संशोधन है जो डॉ. अम्बेडकर तथा अधिकतर अन्य सदस्यों जिनके साथ मैंने परामर्श किया है, को स्वीकार्य है। इसे अनुमति दिए जाने में कोई नुकसान नहीं है। यदि डॉ. देशमुख इस संशोधन के विरोध में हैं तो निश्चय ही उन्हें इसके पक्ष में तर्क देने पड़ेंगे और उन्हें सभा को यह बताने का अवसर देना होगा कि सभा इसे अस्वीकृत कर दे।

माननीय सभापति : क्या उससे चर्चा फिर दुबारा शुरू नहीं हो जाएगी?

डॉ. पी.एस. देशमुख : जी हाँ। यदि डॉ. अम्बेडकर इसे स्वीकार करने को तैयार हों तो इसका दूसरा रास्ता भी है। परंतुक को अलग से रखा जा सकता है और यदि वह अस्वीकृत हो जाए तो उसका लोप कर दिया जाएगा।

माननीय सभापति : हाँ, वह एक तरीका हो सकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं परंतुक को हटाने की बात को स्वीकार नहीं कर रहा हूँ लेकिन मैं इस बात के लिए पूरी तरह से तैयार हूँ कि इस परंतुक को किस अनुच्छेद से अनुदेशों के साधन वाले स्थान पर रख दिया जाए।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मेरा यह प्रस्ताव है कि इस अनुच्छेद को स्थगित रखा जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इस पर इतनी लम्बी बहस करने के बाद ऐसा क्यों किया जाए?

माननीय सभापति : प्रश्न यह है कि क्या इसे यही बनाए रखा जाए या फिर इसे अनुदेशों के साधन वाले स्थान पर रखा जाए...

\+ पूर्वोक्त, पृष्ठ 507

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 1 जून, 1949, पृ. 506

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 507

++ पूर्वोक्त पृष्ठ 519

***माननीय सभापति :** ....डॉ. अम्बेडकर।

****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** सभापति महोदय, यहाँ प्रस्तत किए गए विभिन्न संशोधनों पर हुई इस बहस के दौरान मैंने इस बात पर गौर किया है कि इसमें केवल चार ही मुद्दे ऐसे हैं जिन पर जवाब दिए जाने की जरूरत है। बहस में पहला मुद्दा यह उठाया गया है कि इस उपबंध के तहत मंत्री गवर्नर की इच्छा पर्यन्त पद पर बने रहेंगे, के स्थान पर यह उपबंध किया जाना वांछित है कि वे अपने पद पर तब तक बने रहेंगे जब तक कि सभा में उन्हें बहुमत प्राप्त रहेगा। अब मुझे इस बारे में कोई संशय नहीं है कि इस संविधान की मंशा यही है कि मंत्रालय उस समय तक अपना कार्य करता रहेगा जब तक कि उसे बहुमत का विश्वास प्राप्त रहेगा। इसी सिद्धांत के आधार पर संविधान कार्य करेगा। हमने इसे बिल्कुल स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं किया है। इसका एक कारण है कि इसकी अभिव्यक्ति की शैली वही है या फिर संसदीय लोकतंत्र की प्रणाली वाली सरकार को विनिर्दिष्ट करने वाले किसी भी संविधान में उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया गया है। "प्रसाद पर्यन्त" से हमेशा यह आशय होता है कि बहुमत का विश्वास खो दिए जाने के बाद उस इच्छा का कोई मतलब नहीं रह जाएगा। सरकार जब बहुमत का विश्वास खो देती है तो उसी क्षण यह माना जाता है कि राष्ट्रपति उस सरकार को बर्खास्त करने में अपनी इच्छा का प्रयोग करेगी और इसीलिए इसमें जो पहले से बने बनाए शब्द रखे गए हैं उससे अलग मत रखना अनावश्यक है। क्योंकि सभी जिम्मेदार सरकारों में इन्हीं शब्दों का प्रयोग होता है। मेरे मित्र प्रो. सक्सेना का जो संशोधन है उसमें "निचले सदन" शब्दों को प्रतिस्थापित करने की बात कही गई है। मुझे खेद है कि इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि संविधान के उपबंधों के अधीन प्रधानमंत्री के लिए यह विकल्प खुला हुआ है कि वह न सिर्फ निम्न सदन से बल्कि उच्च सदन से भी अपने मंत्रियों का चयन कर सकता है। इसमें ऐसी कोई योजना नहीं है कि मंत्री केवल निम्न सदन से लिए जाएंगे, उच्च सदन से नहीं। परिणामत: यह जो उपबंध है कि मंत्री की नियुक्ति 6 महीने के लिए की जाएगी। यद्यपि उस समय वह निर्वाचित नहीं है लेकिन, इसे व्यापकता प्रदान करनी होगी ताकि दोनों ही स्थितियों को इसमें शामिल किया जा सके और उसी कारण से मैं उनके संशोधन को स्वीकार करने में असमर्थ हूँ।

तीसरे संशोधन जिस पर काफी बहस की गई है, मेरे मित्र श्री कामत और प्रो. शाह द्वारा प्रस्तुत किया गया है। छोटे-मोटे संशोधनों को छोड़ दिया जाए तो कमोबेश वे एक जैसे हैं। उस संबंध में मैं यह कहना चाहता हूँ कि सभा को यह याद होगा कि संशोधन संख्या 1332 जो कि अनुच्छेद 62 के मामले में प्रस्तुत किया गया है जो कि अनुच्छेद

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 1 जून, 1949, पृ. 520-21

** वही, पृष्ठ 520-21

144 के समदर्शी उपबंध है, और उसे प्रो. शाह द्वारा प्रस्तुत किया गया है उस पर व्यापक बहस हुई थी। उस अवसर पर मैंने उस विषय के बारे में जो मेरे विचार थे उसे प्रस्तुत किया था और इसलिए मुझे लगता है कि मैं उस समय जो कुछ कह चुका हूँ उसमें आगे और भी कुछ जोड़ना बिल्कुल अनावश्यक है।

श्री एच.वी. कामत : मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने उस अवसर पर उस संशोधन को स्वीकार नहीं किया था क्योंकि उनके विचार से वह व्यापक संशोधन नहीं था। अब यह कहीं अधिक व्यापक संशोधन है।

माननीय सभापति : आप यह सब बता चुके हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे मित्र श्री जयपाल सिंह द्वारा उठाया गया चौथा बिंदु वह है और कुछ हद तक श्री रोहिणी कुमार चौधरी द्वारा उठाया गया है। प्रारूप संविधान में इस विशेष खण्ड को रखे जाने का कारण यह रहा है कि संविधान सभा की अल्पसंख्यक समिति द्वारा नियुक्त जनजाति संबंधी उपसमिति द्वारा इसकी सिफारिशें की गई थीं। इसमें यह देखा जा सकता है कि इसमें एक परिशिष्ट लगा हुआ है जिसे "सांविधिक सिफारिश" का नाम दिया गया है। इस अनुच्छेद में जो परंतुक रखा गया है उसमें इस विशेष समिति द्वारा दिए गए सुझाव और सिफारिश को हू-ब-हू उतार दिया गया है। उसमें यह कहा गया है कि बिहार, मध्य प्रान्तों और बरार तथा उड़ीसा प्रान्तों के मामले में जनजाति कल्याण के लिए एक पृथक मंत्रालय रहेगा। बशर्ते मंत्री अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के कल्याण से संबंधित प्रभार या किसी अन्य कार्य का प्रभारी भी साथ में बना रहेगा। इसलिए, प्रारूप समिति के पास इस परंतुक को शामिल करने के अलावा कोई दूसरा विकल्प नहीं था क्योंकि जनजाति समिति के प्रतिवेदन के उस भाग में यह अन्तर्विष्ट किया गया था जिसका शीर्षक है "सांविधिक सिफारिश"। इस समिति की मंशा यह थी कि इस उपबंध को संविधान में ही रखा जाना चाहिए, इसे किसी अन्य भाग में स्थानांतरित नहीं किया जाना चाहिए। इसलिए प्रारूप समिति ने ऐसा किया है और उसने दूसरी समिति की सिफारिश का अनुपालन मात्र किया है।

मेरे मित्र श्री जयपाल सिंह ने जो यह सुझाव दिया है कि इसमें इस तथ्य के मद्देनजर बम्बई को शामिल किया जाना चाहिए क्योंकि बम्बई प्रेसीडेंसी में जो विलय किए गए हैं, उनके परिणामस्वरूप जनजाति लोगों की संख्या में वृद्धि हुई है, के संबंध में मुझे खेद के साथ यह कहना पड़ रहा है कि इस चरण में मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता। क्योंकि यह एक ऐसा मामला है जिस पर बम्बई मंत्रालय से परामर्श किया जाना आवश्यक है और दुर्भाग्यवश मेरे मित्र माननीय श्री खेर जो विगत के कुछ दिनों के दौरान संविधान सभा में उपस्थित दिखाई पड़ते थे, इस समय यहाँ उपस्थित नहीं है और इसीलिए मैं इस संशोधन को स्वीकार करने में समर्थ नहीं हूँ।

श्री एच.वी. कामत : अपने संशोधन के संदर्भ में यह जानना चाहता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर ने जो पहले अपने विचार प्रकट किए थे उस पर वह कायम हैं?

माननीय सभापति : मैं नहीं समझता कि इस प्रकार के वाद-विवाद करने की अनुमति दी जा सकती है। अब मैं संशोधनों को लूँगा।

श्री ताहिर और मोहम्मद इस्माइल द्वारा प्रस्तुत दो संशोधन जिनकी संख्या 2174 और 2175 है, जो कि इस अनुच्छेद 144, खण्ड (1) से संबंधित हैं।

यदि डॉ. अम्बेडकर के संशोधन संख्या 2165 को बनाए रखा जाता है तो संभवतः ये संशोधन स्वतः ही समाप्त हो जाएंगे। इसलिए, मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन पर मत लूँगा।

[पूर्व में उल्लिखित डॉ. अम्बेडकर के सभी संशोधन स्वीकृत हुए, अन्य शेष संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 144, यथासंशोधन रूप में संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १४५

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे विचार से जो बहस हो चुकी है उसमें और कुछ जोड़े जाने की जरूरत नहीं है। मुझे सिर्फ इतना कहना है : मैं श्री नजरुद्दीन अहमद के संशोधन संख्या 2210 को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ।

***माननीय सभापति :** फिर मैं संशोधन संख्या 2210 जिसमें 2211 को भी शामिल किया गया है, को मतदान के लिए रखता हूँ।

[श्री नजरुद्दीन अहमद के निम्नलिखित संशोधन को डॉ. अम्बेडकर और सभा द्वारा स्वीकार किया गया।]

"अनुच्छेद 145 के खण्ड (2) और (4) के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:

(3) महाधिवक्ता, राज्यपाल के प्रसाद पर्यंत पद धारण करेगा और ऐसा पारिश्रमिक प्राप्त करेगा जो राज्यपाल अवधारित करे।"

[अनुच्छेद 145, यथासंशोधन रूप में संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 1 जून, 1949, पृ. 528

\+ पूर्वोक्त, 2 जून, 1949, पृष्ठ 532

अनुच्छेद १४६

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) :** महोदय, मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं करता। अनुच्छेद 146 अनुच्छेद 130 की तार्किक परिणति मात्र है। अनुच्छेद 130 में कहा गया है कि राज्य की कार्यपालक शक्ति राज्यपाल में निहित रहेगी। ऐसी स्थिति में, इसका तार्किक निष्कर्ष यही है कि कार्यपालिका की कार्यवाही की सभी अभिव्यक्ति राज्यपाल के नाम से होनी चाहिए जैसा कि अनुच्छेद 146 में उपबंध किया गया है।

मेरे माननीय मित्र प्रो. के.टी. शाह द्वारा की गई इस समुक्ति कि पुरानी व्यवस्था के अंतर्गत सभी कार्यपालक कार्यवाही भारत सरकार के नाम से अभिव्यक्त की जाती थी, के संबंध में मेरा उत्तर यह है कि ऐसा इस तथ्य के कारण था कि पुरानी प्रणाली के अंतर्गत भारत सरकार की नागरिक और सैन्य शक्ति गवर्नर जनरल में निहित न होकर गवर्नर जनरल की परिषद् में थी और उसके परिणामस्वरूप सभी कार्यवाही भारत सरकार के नाम पर होती थी। आज जहाँ तक अनुच्छेद 130 का संबंध है, स्थिति पूरी तरह बदल चुकी है।

[कोई संशोधन स्वीकृत नहीं हुआ। अनुच्छेद 146, संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १४७

#माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : सभापति महोदय, मैं यह कहना चाहता हूँ कि इस सभा में अनुच्छेद 147 पर जो उत्तेजनापूर्ण बहस हुई है, उसको देखपकर मुझे काफी आश्चर्य हुआ है। प्रारंभ में ही मैं इस सभा को याद दिलाना चाहता हूँ कि अनुच्छेद 147, अनुच्छेद 65 का हू-ब-हू निरूपण है जो सभा पहले ही पारित कर चुकी है। अनुच्छेद 65 राष्ट्रपति को वही शक्ति प्रदान करता है जो अनुच्छेद 147 में राज्यपाल को दिए जाने का प्रस्ताव है। परिणामत: मैंने यह सोचा कि अनुच्छेद 65 के बारे में सभा में जो बहस हो चुकी है, वह अनुच्छेद 147 के प्रयोजनार्थ भी पर्याप्त होनी चाहिए।

श्री एच.वी. कामत : मैं माननीय डॉ. अम्बेडकर को ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि राष्ट्रपति का निर्वाचन होता है जबकि राज्यपाल का मनोनयन... (व्यवधान)।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : चूंकि बहस हो चुकी है और सभा के कई सदस्यों का मानना है कि अनुच्छेद 147 के पीछे कुछ ऐसा है, जिससे प्रान्तों में मंत्रियों तथा मंत्रिमंडल की स्थिति संकटपूर्ण हो जाएगी, मैं इस संबंध में कुछ स्पष्टीकरण देना चाहता हूँ।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1949, पृ. 532

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1949, पृ. 545-547

पहली बात यह है कि सभा को इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए कि संविधान के अंतर्गत राज्यपाल का कोई ऐसा कृत्य नहीं है जिसका वह स्वयं निर्वहन कर सकता है। जब उसके पास कोई कृत्य नहीं है, तो उसे कतिपय कर्त्तव्य का निर्वहन करना होता है और मेरे विचार से सभा यदि इस विशिष्ट स्थिति को ध्यान में रखे तो बेहतर होगा। इस तथ्य को निश्चित रूप से ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यह अनुच्छेद राज्यपाल को किसी विशेष मामले में मंत्रालय के किसी निर्णय को बदलने की शक्ति प्रदान नहीं करता। इस अनुच्छेद के अधीन भी, राज्यपाल मंत्रालय की सलाह को स्वीकार करने के लिए बाध्य है। मेरे विचार से इस तथ्य को नहीं भुलाया जाना चाहिए। इस अनुच्छेद में कहीं भी खण्ड (क) या खण्ड (ख) या खण्ड (ग) में यह नहीं कहा गया है कि किसी विशेष परिस्थिति में राज्यपाल मंत्रालय के निर्णय को बदल सकता है। इसिलए, यह जो आलोचना की गई है कि इस अनुच्छेद से कहीं न कहीं राज्यपाल को कैबिनेट के निर्णय में हस्तक्षेप करने या उसे बाधित करने में समर्थ बनाता है, पूरी तरह से निराधार है और इसे पूरी तरह से गलत समझा गया है।

श्री एच.वी. कामत : क्या वह इसे विलम्बित करने या बाधा डालने में सक्षम नहीं होगा ...?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं जब अपनी बात कर रहा हूँ तो मेरे मित्र उसमें व्यवधान न डालें। अन्त में वह कोई भी प्रश्न पूछ सकते हैं और यदि मैं उत्तर देने की स्थिति में होऊँगा तो उत्तर दूँगा।

राज्यपाल के कृत्यों और उसके द्वारा निर्वहन किए जाने वाले कर्त्तव्यों के बीच अन्तर किया गया है। मेरा यह कहना है कि यद्यपि राज्यपाल के पास कोई कृत्य नहीं है लेकिन संवैधानिक राज्यपाल होने के कारण, जो वह है कतिपय कर्त्तव्यों का निर्वहन करना होता है। मेरे अनुसार उसके कर्त्तव्यों को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है। एक तो यह कि उसे सरकार को बनाए रखना होता है। चूंकि सरकार उसकी इच्छापर्यन्त कार्यभार संभालती है। इसलिए उसे यह देखना होता है कि वह सरकार के विरुद्ध कब और किस प्रकार से अपनी उस इच्छा का प्रयोग करे। राज्यपाल का दूसरा कर्त्तव्य है, मंत्रालय को परामर्श देना, या उसे चेतावनी देना या किसी विकल्प के बारे में सूचना देना और किसी निर्णय पर पुनः विचार करने के लिए कहना आदि। मैं नहीं समझता कि इस सभा में कोई भी इस तथ्य पर प्रश्न उठाएगा कि राज्यपाल को इस कर्त्तव्य के बारे में बताया जाना चाहिए। अन्यथा वह पूरी तरह से एक अनावश्यक कार्यकारी बनकर रह जाएगा। ऐसा कोई बिल्कुल नहीं सोचेगा। वह एक प्रतिनिधि है, वह किसी दल का प्रतिनिधि नहीं है; वह पूरे राज्य के लोगों का प्रतिनिधि होता है। वह लोगों के नाम पर प्रशासन चलाता है। उसे यह देखना चाहिए कि प्रशासन का स्तर ऐसा हो जिसे एक अच्छा, कुशल और ईमानदार

प्रशासन माना जा सके। इसलिए, इन दो कर्त्तव्यों के संबंध में जो राज्यपाल के लिए निर्धारित हैं कि प्रशासन को पूरी तरह से पवित्र बनाकर रखा जाए और उसमें भ्रष्टाचार द्वारा कोई भी ऐसा प्रस्ताव नहीं तैयार किया जाए जो लोगों की इच्छा के विपरीत हो और इसलिए वह वैसी स्थिति में सरकार को उसके बारे में परामर्श दे सकता है, उसे चेता सकता है तथा उस पर पुनर्विचार करने के लिए कह सकता है – मैं सभा से पूछता हूँ कि यदि राज्यपाल को कतिपय सूचना नहीं दी जाएगी तो फिर वह किस प्रकार से अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन कर पाएगा? मेरा यह कहना है कि वह अपने संवैधानिक कृत्यों का निर्वहन तब तक नहीं कर सकता जब तक कि वह सूचना प्राप्त कर पाने की स्थिति में नहीं हो। उदाहरण के लिए मंत्रिमंडल द्वारा कोई संकल्प पारित किया जाता है – और मुझे मालूम है कि ऐसा कई मामलों में, कई प्रान्तों में आज हुआ है – कोई राज्यपाल को भेजे जाने की जरूरत नहीं समझी गई है तो फिर राज्यपाल अपने कृत्यों का निर्वहन किस प्रकार से कर पाएगा? हम जो राज्यपाल को सूचना प्राप्त करने की शक्ति प्रदान करना चाहते हैं उसका मकसद राज्यपाल को सूचना प्राप्त करने की शक्ति प्रदान करना चाहते हैं उसका मकसद राज्यपाल को अच्छे और साफ-सुथरा प्रशासन चलाने के संबंध में अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करने में सक्षम बनाता है। यदि मैं ऐसा कहूँ बल्कि मैं सभा को बताना चाहता हूँ कि केन्द्र में इस प्रकार से कार्य किए जाते हैं। जहां तक मुझे जानकारी है कि कैबिनेट के पत्र गवर्नर जनरल को भेजे जाते हैं। उसी प्रकार से लोक महत्त्व के मामलों से संबंधित महत्त्वपूर्ण विषय पर प्रत्येक मंत्रालय में लिए गए निर्णयों के बारे में प्रत्येक मंत्रालय द्वारा साप्ताहिक सारांश तैयार किए जाते हैं। ये सारांश मंत्रिमंडल में रखे जाते हैं और ये सारांश गवर्नर जनरल को भी भेजे जाते हैं। उदाहरण के लिए यदि गवर्नर जनरल विभागों द्वारा भेजे गए साप्ताहिक सारांशों को देखने पर यह पाता है कि कोई मंत्री बिना मंत्रिमंडल का संदर्भ लिए ही किसी खास विषय पर कोई निर्णय ले लेता है जो कि उसके विचार में अच्छा नहीं है तो क्या इसमें कुछ भी गलत होगा। यदि गवर्नर जनरल को यह कहने की शक्ति प्रदान की जाती है कि किसी मंत्री विशेष द्वारा अन्य मंत्रियों से परामर्श लिए बगैर कोई खास निर्णय ले लिए जाने की स्थिति में, उस पर कैबिनेट द्वारा पुनर्विचार किया जाना चाहिए। मुझे नहीं लगता कि ऐसा उपबंध किए जाने से कोई नुकसान हो सकता है। मुझे नहीं लगता कि इससे सरकार के प्रशासनिक कार्य में किसी प्रकार का हस्तक्षेप पैदा होगा। इसलिए, मेरा यह कहना है कि इस अनुच्छेद के विरुद्ध जो आलोचनाएं सामने आई हैं, वे इस अनुच्छेद की गलत व्याख्या करने या फिर लोगों के मन में व्याप्त कतिपय गलत धारणा के कारण की गई हैं कि यह अनुच्छेद राज्यपाल के प्रशासन में शक्ति प्रदान करता है। ऐसी कोई भी मंशा नहीं है और मुझे पूरा विश्वास है कि अनुच्छेद 147 में जिस भाषा का प्रयोग किया गया है उसके परिणामस्वरूप ऐसी कोई स्थिति सामने आएगी। इस अनुच्छेद में सिर्फ इतना किया गया है कि राज्यपाल अपने

दायित्व का निर्वहन कर सके इसके लिए उसे समर्थ बनाया गया है। मैं नहीं समझता कि उसके लिए कोई कृत्य का प्रावधान किया गया है लेकिन उसके कुछ कर्त्तव्य हैं जिसे प्रत्येक अच्छे राज्यपाल को पूरा करना चाहिए। (लोगों ने प्रसन्नता व्यक्त की)।

श्री एच.वी. कामत : मैं डॉ. अम्बेडकर से कुछ प्रश्न पूछना चाहता हूँ।

माननीय सभापति : अब प्रश्न पूछने का क्या फायदा? आपको मौका दिया गया था।

श्री एच.वी. कामत : डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि मैं उनके भाषण के बाद प्रश्न पूछ सकता हूँ।

माननीय सभापति : मैं चर्चा के अंत में प्रश्न पूछने की इस प्रथा को पसंद नहीं करता। सभी प्रश्नों का उत्तर दे दिया गया है। अब मैं अनुच्छेद पर मत लूँगा क्योंकि इसमें कोई संशोधन नहीं है।

माननीय सभापति : प्रस्ताव है: कि अनुच्छे 147 संविधान का भाग बने।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 147 संविधान में जोड़ा गया।

* * * * *

अनुच्छेद १५१

***माननीय सभापति :** 2308 – डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँ:

कि अनुच्छेद 151 के खण्ड 2 में 'तीसरे वर्ष' शब्दों के स्थान पर 'दूसरे वर्ष' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।

* * * * *

#माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अनुच्छेद पारित किया जा चुका है कि इसमें दूसरी सभा होगी। यह अनुच्छेद केवल इस बात का उल्लेख करता है कि सदस्यगण किस प्रकार से स्वयं को पुनर्निर्वाचित कराएंगे।

प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना : हमें यह निर्णय करना है कि उस विशेष परिषद् का कार्यकाल 9 वर्षों का होना चाहिए या 6 वर्षों का, और यह परिषद् की संरचना पर निर्भर करेगा। उसकी संरचना से उस अवधि का निर्धारण होगा जिसके अंत में एक तिहाई सदस्य सेवानिवृत्त हो जाएंगे।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1948, पृ. 548

\# वही, पृष्ठ 549–50

माननीय सभापति : यह परिषद् की संरचना पर निर्भर नहीं करता। सभा का कार्यकाल जितना भी हो, उसकी संरचना हमने जो अनुच्छेद 150 के संबंध में निर्णय लिया है, उसके अनुरूप होगी।

प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना : ठीक है महोदय। मैं आपके विनिर्णय का सम्मान करता हूँ...

फिर यह कहा गया है कि परिषद् के एक तिहाई सदस्य प्रत्येक तीसरे वर्ष सेवानिवृत्त होंगे। मुझे खुशी है कि डॉ. अम्बेडकर ने यह प्रस्ताव किया है कि वह अवधि तीन वर्षों के स्थान पर दो वर्षों की होगी। इससे परिषद् का काल 6 वर्षों का ही रहेगा जो कि लगभग इस सभा के कार्यकाल के बराबर ही है। इससे परिषद में अधिक नवीनता सुनिश्चित हो सकेगी। इसलिए मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का समर्थन करता हूँ।

माननीय सभापति : डॉ. अम्बेडकर, क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं श्री गुप्ते का संशोधन स्वीकार करता हूँ।

माननीय सभापति : अब मैं श्री गुप्ते के संशोधन, जिसे डॉ. अम्बेडकर स्वीकार कर चुके हैं, पर मत लूंगा। अब यह मूल संशोधन बन गया है।

प्रस्ताव है:

"संशोधन की सूची के संशोधन संख्या 2304 के संदर्भ में अनुच्छेद 151 के खण्ड (1) के बाद निम्नलिखित परंतुक अन्त:स्थापित किया जाएं:

परंतु उक्त अवधि का , जब आपात स्थिति की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, तब संसद विधि द्वारा ऐसी अवधि के लिए बढ़ा सकेगा, जो एक बार में एक वर्ष से अधिक नहीं होगी और उद्घोषणा के प्रवर्तन में न रह जाने के पश्चात् किसी भी स्थिति में उसका विस्तार छह मास की अवधि से अधिक नहीं होगा। (प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।)

माननीय सभापति : श्री बृजेश्वर प्रसाद का संशोधन। संशोधन, सभा की अनुमति से वापस लिया गया।

माननीय सभापति : फिर मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन संख्या 2308 को लेता हूँ।

[पहले से ही उल्लिखित]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 151 यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।

* * * * *

खण्ड १५२

माननीय सभापति : फिर हम अनुच्छेद 152 पर आते हैं। इस अनुच्छेद के बारे में डॉ. अम्बेडकर का संशोधन है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ।

"कि अनुच्छेद 152 के लिए, निम्नलिखित प्रतिस्थापित किए जाएं:

राज्य के विधानमंडल की सदस्यता के लिए अर्हता – कोई व्यक्ति किसी राज्य के विधानमंडल के किसी स्थान को भरने के लिए चुने जाने के लिए अर्हित तभी होगा जब–

(क) वह भारत का नागरिक है।

(ख) वह विधानसभा के स्थान के लिए कम से कम पच्चीस वर्ष की आयु का और विधानपरिषद् के स्थान के लिए कम से कम पैंतीस वर्ष की आयु का हो; और

(ग) उसके पास ऐसी अन्य अहर्ताएं हैं जो इस निमित्त राज्य के विधानमंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन विहित की जाएँ।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं श्रीमती पूर्णिमा बैनर्जी द्वारा प्रस्तुत संशोधन को स्वीकार करता हूँ। उन्होंने जो खण्ड (ग) के बारे में आशंका प्रकट की है कि इस खण्ड से संसद द्वारा उम्मीदवारों के लिए संपत्ति संबंधी अहर्ताएं तय किए जाने की संभावना बनेगी, के बारे में मैं निश्चित तौर पर यह कह सकता हूँ कि उप-खण्ड (ग) में ऐसी कोई मंशा अन्तर्निहित नहीं है। इस खण्ड का उपबंध करने के पीछे यही मंशा है कि दिवालियापन, दिमागी हालत ठीक नहीं होने, निर्वाचन-क्षेत्र विशेष में निवास होने और ऐसी ही अन्य प्रकार की निहर्ताओं का प्रावधान किया जाए। निश्चय ही ऐसी कोई मंशा नहीं है कि संपत्ति संबंधी अर्हता को उम्मीदवारों के लिए आवश्यक शर्त के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।

फिर, साक्षरता के बारे में मैं प्रो. के.टी. शाह के संशोधन के संबंध में मेरा यह विचार है कि यह ऐसा मामला है जिसे विधानमंडलों पर छोड़ा जा सकता है। यदि विधानमंडल अर्हताएं निर्धारित करने के समय ऐसा महसूस करता है कि साक्षरता एक आवश्यक अर्हता है, तो मेरे विचार से इसमें कोई शंका नहीं होनी चाहिए कि विधानमंडल ऐसा करेंगे।

---

* वही, पृष्ठ 553-554
सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1948, पृ. 550

महोदय, सिर्फ एक मुद्दा है जिसके बारे में मुझे विशेष उल्लेख करना चाहिए। उप-खण्ड (ग) कतिपय रूप में अनुच्छेद 290 और 291 से संबंधित है, जो कि चुनावी मामलों से जुड़े हैं। हमने उन अनुच्छेदों को पारित नहीं किया है।

यदि अनुच्छेद 290 और 291 के बारे में निर्णय लेने के दोरान सभा इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि खण्ड (ग) में अन्तर्विष्ट उपबंध संसद द्वारा बनाए गए कानून के द्वारा निर्धारित होने चाहिए तो मैं प्रारूप समिति के लिए यह अधिकार सुरक्षित रखना चाहूँगा कि वह उप-खण्ड (ग) के अन्तिम भाग पर पुनर्विचार करे। उसके विषयाधीन मेरे विचार से अनुच्छेद को, यथासंशोधित रूप में पारित किया जाना चाहिए।

[अनुच्छेद 152 यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १५३

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 153 के खण्ड (3) का लोप किया जाए।"

यह खण्ड संवैधानिक राज्यपाल के लिए बनी योजना से स्पष्टत: असंगत है।

* * * * *

#**श्री गोपाल नारायण (संयुक्त प्रांत : जनरल) :** सभापति महोदय, इस अनुच्छेद पर बोलने से पहले मैं एक शिकायत दर्ज कराना चाहता हूँ और आपसे उस शिकायत को दूर करने की मांग करता हूँ। मैं उन लोगों में से हूँ जिन्होंने इस सभा की सारी बैठकों में शिरकत की है और शुरू से अन्त तक बैठे रहे हैं। लेकिन अब मेरा धैर्य जवाब दे चुका है। मैं यह पाता हूँ कि इस सभा के कुछ माननीय सदस्यों ने सभी प्रकार की बहसों पर अपना एकाधिकार जमा रखा है, जिन्हें प्रत्येक अनुच्छेद, प्रत्येक संशोधन और प्रत्येक संशोधन के संशोधन पर भी बोलना ही बोलना है। महोदय, मैं जानता हूँ कि आपकी अपनी सीमाएं हैं और नियमों के तहत आप उन लोगों को ऐसा करने से नहीं रोक सकते, यद्यपि आपके चेहरे को देखकर मुझे लगता है कि आप भी कभी-कभी इन बातों से बोरियत महसूस करने लगते हैं। लेकिन आप उन लोगों को रोक नहीं सकते। महोदय, आपको मेरा यह सुझाव है कि कुछ सदस्यों पर कुछ समय-सीमा की पाबंदी लगाई जा सकती है। एक सदस्य को दो या तीन मिनट से अधिक समय तक बोलने की अनुमति नहीं होनी चाहिए। जहाँ तक इस अनुच्छेद का संबंध है, इस पर भी पन्द्रह मिनट

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1949, पृ. 555

\# वही, पृष्ठ 557

से अधिक का समय ले लिया गया है जबकि इसमें कुछ नई बात नहीं है और इसमें राज्यपाल को केवल विवेकाधीन शक्तियाँ प्रदान करने की बात कही गई है। फिर भी सदस्यगण एक-एक करके इसका विरोध कर रहे हैं। मैं आपसे इस समस्या का निवारण करने की मांग कर रहा हूँ, लेकिन यदि आप ऐसा नहीं कर सकते, तो आप कम से कम हम लोगों को अपनी सीट पर सोने की अनुमति दें या फिर इस सभा में बैठे रहने की बाध्यता से छूट दें। महोदय मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूँ।

माननीय सभापति : यदि मैं गलत नहीं हूँ तो मैं इस मामले में असहाय हूँ। मैं यह सदस्यों के विवेक पर छोड़ देता हूँ।

श्री बृजेश्वर प्रसाद : (बोलने के लिए खड़े हुए।)

माननीय सभापति : इतना होने के बाद भी आप बोलना चाहते हैं? (ठहाके)

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं नहीं समझता कि इस बारे में मेरा उत्तर दिया जाना जरूरी है। इस मामले पर बार-बार चर्चा की जा चुकी है।

[डॉ. अम्बेडकर के संशोधन को छोड़कर कोई भी अन्य संशोधन स्वीकृत नहीं हुआ। अनुच्छेद 153 संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १५३-क

***माननीय सभापति :** क्या इस संशोधन के बारे में कोई कुछ कहना चाहता है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं संशोधन को स्वीकार नहीं करता।

[प्रो. के.टी. शाह का संशोधन अस्वीकृत हुआ और अनुच्छेद 154 संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १६०

***माननीय सभापति :** डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे कुछ भी नहीं कहना है।

अनुच्छेद 160 स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ा गया।,

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1949, पृ. 558

नया अनुच्छेद १६३-क

****माननीय सभापति :** एक नया अनुच्छेद 163-क प्रस्तुत किया जाना है। यह संशोधन संख्या 39 है सूची I.

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, इसे स्थगित रखा जाए।

* * * * *

अनुच्छेद १६५

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : सभापीठ ने पूर्व में कई अवसरों पर डॉ. अम्बेडकर को ऐसा संशोधन प्रस्तुत करने की अनुमति दी है और मेरे विचार से वही प्रथा जारी रखी जा सकती है और इसे औपचारिक तौर पर प्रस्तुत किया जा सकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 165 में 'घोषणा' शब्दों के स्थान पर "प्रतिज्ञान या शपथ" शब्दों को प्रतिस्थापित किया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

* * * * *

अनुच्छेद १६६

*****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"अनुच्छेद 166 के खण्ड (1) के बाद निम्नलिखित खण्ड स्थापित किया जाए:

(1 क) कोई व्यक्ति पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट दो या अधिक राज्यों के विधानमंडलों का सदस्य नहीं होगा और यदि कोई दो या अधिक ऐसे राज्यों के विधानमंडलों का सदस्य चुन लिया जाता है तो ऐसी अवधि की समाप्ति के पश्चात् जो राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए नियमों में विनिर्दिष्ट की जाए, ऐसे सभी राज्यों के विधानमंडलों में ऐसे व्यक्ति का स्थान रिक्त हो जाएगा यदि उसने एक राज्य को छोड़कर अन्य राज्यों के विधानमंडलों में अपने स्थान को पहले ही नहीं त्याग दिया है।

यह खण्ड उस मामले के बारे में उपबंध करता है जहाँ कोई व्यक्ति दो राज्यों के

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1948, पृ. 558

पूर्वोक्त पृष्ठ 564

** पूर्वोक्त, पृष्ठ 566

***पूर्वोक्त, पृष्ठ 567

विधानमंडलों का सदस्य हो; पहले का खण्ड उस व्यक्ति के बारे में था जो किसी राज्य की विधायिका का सदस्य तथा संसद का सदस्य हो।

माननीय सभापति : श्री नजरुद्दीन अहमद का संशोधन है जिसकी संख्या 2403 है लेकिन वह अभी प्रस्तुत किए गए संशोधन संख्या 2404 से कवर हो जाता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 166 के खण्ड (2) का लोप किया जाए।"

* * * * *

*__माननीय सभापति :__ मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत किए गए संशोधनों पर एक-एक करके मत लूँगा।

श्री एच.वी. कामत : क्या डॉ. अम्बेडकर मेरे द्वारा उठाए गए मुद्दे का उत्तर नहीं देंगे?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं ऐसा करना जरूरी नहीं समझता।

[पूर्व उल्लिखित डॉ. अम्बेडकर के सभी संशोधन स्वीकृत हुए। अनुच्छेद 166 संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १६७

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 167 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (घ) के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:

(घ)यदि वह भारत का नागरिक नहीं है या उसने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित कर ली है या वह किसी विदेशी राज्य के प्रति निष्ठा या अनुषक्ति को अभिस्वीकार किए हुए हैं।

श्री महावीर त्यागी : अब जब हम लोग राष्ट्रमंडल के सदस्य हैं, तो इंग्लैंड के बारे में हमारी यथा स्थिति होगी? क्या राजा के प्रति राज्यभक्ति रखना भी निरर्हता मानी जाएगी?

माननीय सभापति : यह तो संविधान की व्याख्या का मामला है।

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1948, पृ. 568

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 570-71

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उस पर राष्ट्रीयता अधिनियम में विचार किया जाएगा।

(संशोधन संख्या 2420 से 2423 प्रस्तुत नहीं किए गए।)

श्री एच.वी. कामत : मैं समझता हूँ कि मेरा संशोधन संख्या 2424 पूरी तरह से एक शाब्दिक संशोधन है और मैं इसे प्रारूप पर छोड़ता हूँ।

माननीय सभापति : मैं समझता हूँ कि विषय-वस्तु की दृष्टि से भी यह महत्त्वपूर्ण है।

श्री एच.वी. कामत : यदि ऐसा है, तो मैं इसे प्रस्तुत करता हूँ। मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"अनुच्छेद 167 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (घ) में सेमीकॉलन के बाद "अथवा" शब्द जोड़ा जाए।"

'और' शब्द हटा दिया जाए या इसके स्थान पर 'अथवा' शब्द प्रतिस्थापित कर दिया जाए, कमोबेश वही अर्थ होगा, जैसा कि मेरा अप्रशिक्षित मस्तिष्क सोचता है। इसलिए मैंने यह कहा था कि मैं इसे प्रारूप समिति के बुद्धिमान व्यक्तियों पर छोड़ता हूँ क्योंकि इन मामलों में एकदम नया हूँ। मेरा यह मानना है कि 'अथवा' शब्द अधिक उपयुक्त होगा क्योंकि इन निरर्हताओं में किसी एक भी निरर्हता का प्रश्न उठता है - यदि कोई व्यक्ति इसमें किसी एक कारण से अयोग्य ठहरा दिया जाता है तो यह अनुच्छेद लागू होगा।

माननीय सभापति : डॉ. अम्बेडकर इस पर विचार करेंगे।

श्री एच.वी. कामत : जैसा कि मैं कह चुका हूँ, मैं इसका निर्णय प्रारूप समिति के बुद्धिमान व्यक्तियों पर छोड़ता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मेरे विचार से यह बिल्कुल ठीक है।

माननीय सभापति : क्या वे सब एक साथ नहीं पढ़े जाएंगे?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं महोदय, उन्हें एक साथ नहीं पढ़ा जाएगा।

माननीय सभापति : यदि 'अथवा' शब्द जोड़ दिया जाए, तो कोई संशय व्याप्त नहीं रहेगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं इसे जरूरी नहीं मानता हूँ।

(संशोधन संख्या 2425, 2426 और 2427 प्रस्तुत नहीं किए गए।)

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं अपने मित्र श्री त्यागी के खातिर ही उत्तर

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1948, पृ. 568

* वही, पृष्ठ 570-7

देने के लिए खड़ा हुआ हूँ क्योंकि उन्होंने मुझसे एक या दो मुद्दे आधारित प्रश्न पूछे हैं जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है कि वह एक निरक्षर व्यक्ति है, मैं 'पालन करने' शब्द को समझने में उनके समक्ष आ रही कठिनाई को समझता हूँ। इसलिए, मैं उन्हें यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि 'पालन करने' शब्द के क्या अर्थ हैं। जब कोई देश किसी दूसरे देश पर आक्रमण करता है, तो होता यह है कि स्थानीय निवासी या तो भय के कारण या फिर सैन्य शासन के कारण मिलिट्री गवर्नर जो आक्रमणकारी देश के नाम पर कार्य करता है द्वारा बनाए गए कानूनों का पालन करने लगते हैं। जब तक आक्रमण जारी रहता है और सैन्य शासकों का कब्जा बना रहता है, तो इस प्रकार के आचरण को अक्सर यहाँ माफ कर दिया जाता है। अक्सर ऐसा होता कि जब आक्रमणकारी या मिलिट्री गवर्नर की आज्ञा को मानना वास्तव में आवश्यक नहीं रह जाता क्योंकि नियंत्रण में ढील दे दी जाती है या फिर शत्रुता खत्म हो गई होती है, तो भी कतिपय लोग मिलिट्री गवर्नर या आक्रमणकारी की आज्ञा मानना जारी रखते हैं। कानून के अधीन उनके आचरण को 'अनुपालन' कहा जाता है। यह 'स्वीकार करने' से अलग है। इस प्रकार के मामले में संरक्षा प्रदान करने हेतु 'अनुपालन' शब्द का प्रयोग किया गया है।

मेरे मित्र श्री त्यागी भी इस प्रश्न पर काफी उत्तेजित रहे हैं कि किन देशों को विदेश माना जाए। मुझे इस बारे में पूरा विश्वास है कि मेरे मित्र श्री त्यागी की मंशा मुझे राष्ट्रमंडल के देशों के साथ संबंध पर चर्चा में मुझे शामिल करने की नहीं है, क्योंकि इस मामले पर सभा में पहले ही चर्चा हो चुकी है तथा सभा उसे निपटा चुकी है, लेकिन मैं उन्हें बताना चाहता हूँ कि यह परिभाषित करने हेतु कि किन देशों को विदेश माना जाए, अनुच्छेद 303 के उप-खण्ड (1) में संशोधन करने का मेरा प्रस्ताव है और यदि मेरे मित्र श्री त्यागी के पास संशोधनों की मुद्रित सूची का खण्ड प्प उपलब्ध हो, तो वह उसमें प्रस्तावित संशोधन देख सकते हैं। प्रस्तावित संशोधन राष्ट्रपति को यह घोषणा करने की शक्ति प्रदान करता है कौन-कौन से देश विदेश हैं और उसी घोषणा से यह शासित होगा कि कोई देश विदेश है अथवा नहीं। अपने मित्र श्री त्यागी के लाभ के लिए मैं एक शब्द का स्पष्टीकरण जोड़ना चाहता हूँ। कई लोग इस बात को लेकर चिंतित दिखाई पड़ते हैं कि प्रस्तावित संशोधन अथवा राष्ट्रमंडल समझौते के अधीन किसी देश को विदेश नहीं माना जाएगा तो उन देशों के ऐसे सभी लोगों जो इस देश में निवास करते हैं, को स्वत: ही नागरिकता संबंधी सभी अधिकार प्राप्त हो जाएंगे जो इस देश के लोगों को इस संविधान के द्वारा प्रदान किया जा रहा है। मैं अपने मित्रों को यह बताना चाहता हूँ कि ऐसा कुछ नहीं होने जा रहा। राष्ट्रमंडल देशों के बीच संबंध के बारे में स्थिति इस प्रकार होगी, सभी डोमिनियम देशों में, निवासियों को तीन श्रेणियों

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 2 जून, 1949, पृ. 573-74

में विभाजित किया जाएगा, नागरिक, विदेशी और तीसरी श्रेणी ऐसे व्यक्तियों की होगी जिन्हें डोमिनियन निवासी कहा जाएगा जो किसी देश विशेष में निवास कर रहे होते हैं। इस सबका अर्थ यही होगा कि भारत में निवास कर रहे डोमिनियम निवासियों को विदेशी नहीं माना जाएगा उन्हें कुछ ऐसे अधिकार मिलेंगे जो विदेशियों को नहीं होंगे लेकिन निश्चय ही उन्हें नागरिकता के पूरे अधिकार नहीं मिलेंगे जो हम अपने देश के लोगों को देने जा रहे हैं। मेरा तो यही मानना है। मुझे आशा है कि मेरे मित्र श्री त्यागी के मन में जो कुछ शंका मौजूद है, वह समाप्त हो जाएगी।

श्री महावीर त्यागी : आपने जो रोचक भाषण दिया, उसके लिए मैं आपका हृदय से धन्यवाद करता हूँ।

[डॉ. अम्बेडकर और श्री टी.टी. कृष्णामाचारी द्वारा प्रस्तुत संशोधन स्वीकृत हुए। अनुच्छेद 167, तद्नुरूप संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १६९

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई : जनरल) :** महोदय, कुछ दिन पहले इस मामले पर सभा में बहस की गई थी, जब हम लोग संसद के विशेषाधिकार पर चर्चा कर रहे थे और मैंने यह सोच लिया चूंकि सभा ने संसद के विशेषाधिकार और निरापदता से संबंधित अनुच्छेद को स्वीकार कर लिया इसलिए जब हम राज्य विधानमंडल के संबंध में वही उपबंध करने जा रहे हैं, तो आगे और बहस नहीं होगी। लेकिन जब बहस शुरू की जा चुकी है और जैसा कि मेरे मित्र श्री कामत कह चुके हैं कि प्रेस भी इस बात से उत्तेजित है, तो मेरे विचार से यह वांछनीय है कि मैं यह बताऊँ कि पिछली बार जब बहस हुई थी तो प्रारूप समिति ने जो तरीका अपनाया उसका वास्तविक कारण क्या था। मैंने स्थिति को स्पष्ट करने के लिए बहस में हस्तक्षेप नहीं किया था।

मैं नहीं जानता कि कितने सदस्य विशेषाधिकार का क्या अर्थ है, उसकी क्या संकल्पना है, के बारे में वास्तव में जानकारी रखते हैं। अब मेरे विचार से विशेषाधिकार की दो अलग-अलग श्रेणियाँ हैं सबसे पहले, तो सदस्यों के व्यक्तिगत विशेषाधिकार होते हैं, उदाहरण के लिए भाषण की स्वतंत्रता, अपने कर्त्तव्य के निर्वहन के दौरान गिरफ्तार नहीं किए जाने की संरक्षा। लेकिन विशेषाधिकार में सिर्फ इतनी ही बातें शामिल नहीं हैं।

डॉ. पी.एस. देशमुख : हम विशेषाधिकार का ब्यौरा नहीं चाहते और न ही इस बारे में कोई व्याख्यान सुनना चाहते हैं कि उनका किस प्रकार प्रयोग किया जाना चाहिए।

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 3 जून, 1949, पृ. 582-84

हम यह जानना चाहते हैं कि क्या उन्हें संविधान में विनिर्दिष्ट किया जाना संभव है या नहीं।

माननीय सभापति : वह इस बारे में बता रहे हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं इसकी कठिनाई का उल्लेख कर रहा हूँ। यदि हमारा संबंध केवल इन्हीं दो बातों अर्थात् भाषण की स्वतंत्रता और गिरफ्तारी से संरक्षा से हो, तो इन बातों का अनुच्छेद में ही आसानी से उल्लेख किया जा सकता था और हमें हाउस ऑफ कॉमन्स का उल्लेख करना ही नहीं पड़ता। लेकिन संसद के संबंध में जिन विशेषाधिकारों का हम उल्लेख करते हैं वे इन दो विशेषाधिकारों की तुलना में कहीं अधिक व्यापक हैं और वे सदस्यों से संबंधित हैं। उदाहरण के लिए, संसद का विशेषाधिकार जनता के विरुद्ध तक विस्तारित हो सकता है। दूसरे, उन अधिकारों को सदस्यों के विरुद्ध वैयक्तिक रूप से भी प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, हाउस ऑफ कॉमन्स के शक्ति और विशेषाधिकारों के मामले में संसद को किसी भी नागरिक को संसद की अवमानना के लिए सजा देने का अधिकार है और ऐसे विशेषाधिकारों का प्रयोग किए जाने के समय न्यायालय का क्षेत्राधिकार खत्म हो जाता है। यह एक महत्त्वपूर्ण विशेषाधिकार है। फिर, संसद किसी भी सदस्य के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र है, यदि उस सदस्य ने संसद के सम्मान को ठेस पहुँचाने वाला कार्य किया हो। व्यक्ति को जेल भेजने जैसे ये मामले काफी गंभीर हैं। संसद की अवमानना के मामले को किसी नागरिक को जेल भेजने जैसे मामले को परिभाषित करने जितना आसान नहीं है। न ही यह कहना आसान है कि किसी सदस्य के कौन-कौन से कृत्यों और कार्यों से संसद की प्रतिष्ठा धूमिल होती है।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : हमारा संबंध केवल सदस्यों के विशेषाधिकारों से है संसद के विशेषाधिकारों से नहीं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे बता लेने दें। जैसा कि मैंने बताया है यह परिभाषित करना कोई आसान नहीं है कि किन-किन कार्यों और कृत्यों से संसद की प्रतिष्ठा को ठेस पहुंच सकती है। उस पर काफी चर्चा करने और उसकी समीक्षा किए जाने की जरूरत है। एक कारण तो यही है कि हमने इन विशेषाधिकारों और संरक्षा को विनिर्दिष्ट करने पर विचार नहीं किया।

लेकिन मेरे मन में और प्रारूप समिति के मन में तनिक भी संशय नहीं है कि संसद के पास कतिपय विशेषाधिकार होने चाहिए, जब संसद की अत्यधिक बदनामी होने लगे और उसकी अनुचित आलोचना की जाने लगे, इस देश में संसदीय संस्था की अवमानना की जाने लगे और जिन नागरिकों के लाभ के लिए संसदीय संस्था कार्य कर रही हो, वही नागरिक उसका आदर करना छोड़ दें।

मैंने तो कठिनाई का उल्लेख किया है कि इसे वर्गीकृत किया जाना क्यों संभव नहीं हो पाया है। अब मैं कुछ अन्य कठिनाइयों के बारे में बताना चाहता हूँ जो हमने महसूस की है।

मुझे ऐसा लगता है कि यदि हम इस विचार को स्वीकार कर लें कि हमें अधिनियम में ही संसद के विशेषाधिकारों के बारे में विनिर्दिष्ट कर देना चाहिए तो हमें तीन मार्गों का अनुसरण करना होगा। एक तो यह हो सकता है कि संविधान में ही संसद और उसके सदस्यों के विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों के बारे में विस्तार से उल्लेख कर दिया जाए। मैंने लिखित पार्लियामेन्टरी प्रैक्टिस का काफी ध्यान से अध्ययन किया है जो संसद की उन्मुक्तियों और विशेषाधिकारों के बारे में जानकारी का स्रोत है। मैंने उस पुस्तिका की अनुक्रमणिका को देखा है और यह पाया है कि व्यावहारिक तौर पर 8 या 9 कॉलमों में संसद के विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों के बारे में बताया गया है। अतः यदि आप, मैंने जो इस बारे में लिखा है, उसके आधार पर विशेषाधिकारों और संरक्षाओं के बारे में पूर्ण संहिता लिखना चाहते हैं तो संसद के विशेषाधिकारों और संरक्षाओं के संबंध में कम से कम आपको 25 और पृष्ठ जोड़ने पड़ेंगे। मैं नहीं जानता कि इस सभा के सदस्य बीस से पच्चीस पृष्ठों में संसद के विशेषाधिकारों और संरक्षाओं के बारे में विस्तृत विवरण देना पसंद करेंगे या नहीं। एक कारण तो यह था कि हमने ऐसा नहीं किया।

दूसरा तरीका यह हो सकता है, जैसा कि संविधान में कई स्थानों पर यह कहा गया है कि संसद विशेष मामलों में उपबंध कर सकती है तथा जब संसद वह उपबंध नहीं करती, विद्यमान स्थिति बरकरार रहेगी। हम इस दूसरे रास्ते को अपना सकते थे। हम यह उपबंध कर सकते थे कि संसद सदस्यों और इस संस्था के विशेषाधिकार और उन्मुक्तियों को परिभाषित कर सकती है, और जब तक ऐसा नहीं किया जाता है, संविधान के लागू होने की तिथि तक विद्यमान विशेषाधिकार जारी रहेंगे। लेकिन हमारा दुर्भाग्य यह है जैसा कि माननीय सदस्य जानते होंगे कि 1935 के अधिनियम में संसद और इसके सदस्यों के विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों के बारे में कुछ भी उल्लेख नहीं है। उसमें केवल एकमात्र उपबंध यह किया गया है कि भाषण की स्वतंत्रता होगी और संसद में बहस के दौरान कही गई किसी बात के लिए सदस्य पर कोई मुकदमा नहीं चलाया जाएगा। इसके परिणामस्वरूप उस मार्ग को अपनाया जाना संभव नहीं था क्योंकि संसद या लेजिस्लेटिव असेम्बली के बारे में कोई विशेषाधिकार और संरक्षा के बारे में विवरण विद्यमान नहीं है।

तीसरा विकल्प जिसका हमने अनुसरण किया है, हमारे लिए यह था कि हम यह उपबंध कर दें कि संसद के विशेषाधिकार वही होंगे जो हाउस ऑफ कॉमन्स के विशेषाधिकार हैं। मुझे लगता है कि हाउस ऑफ कॉमन्स का उल्लेख किए जाने के

विरुद्ध भावनात्मक प्रतिक्रिया को छोड़कर प्रारूप समिति द्वारा अपनाए गए विकल्प के विरुद्ध दिए गए तर्क में कोई सार है। मेरा केवल यह सुझाव है कि इस अनुच्छेद में केवल संभव तरीका अपनाया गया है और हमारे लिए और कोई दूसरा विकल्प नहीं था। ऐसी स्थिति में मेरा सुझाव है कि हमने जिस रूप में इस अनुच्छेद को प्रारूपित किया है, उसी रूप में इसे स्वीकार कर लिया जाए।

डॉ. पी.एस. देशमुख : माननीय सदस्य ने मेरे दूसरे सुझाव के बारे में कुछ नहीं कहा है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : जैसा कि मैंने कहा कि आप यदि सभी विशेषाधिकारों और संरक्षाओं को विस्तार से वर्गीकृत करना चाहें तो इसके लिए कम से कम बीच-पच्चीस पृष्ठ चाहिए।..................*

माननीय सभापति : डॉ. देशमुख का सुझाव यह था कि राज्यों के विधानमंडलों से संबंधित इस अनुच्छेद में हम केवल यह उपबंध कर सकते हैं कि राज्य विधानमंडलों के सदस्यों के भी वही विशेषाधिकार होंगे जो हमारे संसद सदस्यों का है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : वह तो केवल एक प्रारूप संबंधी सुझाव है। उदाहरण के लिए, यह कहा जा सकता है कि हम राजय विधानमंडलों के लिए जो अनुच्छेद स्वीकार कर रहे हैं, उनमें से अधिकतर कमोबेश वे ही अनुच्छेद हैं जो हमने केन्द्र में स्थित संसद के लिए स्वीकार किए हैं। हम यह भी कह सकते हैं कि अधिकतर दूसरे मामले में वही उपबंध राज्य विधानमंडल मामले में लागू होंगे, लेकिन जब हमने उस विकल्प को अपनाया ही नहीं, तो फिर मामला विशेष में इसे अपनाना अजीब लगता।

माननीय सभापति : मैं पहले श्री जसपतराय के संशोधन को सभा में रखूँगा।

"कि अनुच्छेद 169 के खण्ड (4) में "किसी राज्य विधानमंडल की सभा" शब्दों के बाद 'या किसी समिति' शब्द अन्त:स्थापित किए जाएँ।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 169, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।

* * * * *

---

*· डाट्स व्यवधान को दर्शाता है।
सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 3 जून, 1949, पृ. 584

अनुच्छेद १७०

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : जनरल) : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"अनुच्छेद 170 में, 'ऐसे दिए गए' के बाद 'वेतन और' शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।"

***श्री नजरुद्दीन अहमद :** हमें इस बात की सूचना नहीं थी कि अनुच्छेद 109 आज लिया जाएगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

* * * * *

अनुच्छेद १०९

****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 109 में, 'यदि जहां तक' शब्दों के स्थान पर 'यदि और जहां तक' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।"

(संशोधन संख्या 1896 और 1897 प्रस्तुत नहीं किए गए।)

* * * * *

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मेरे विचार से इस बारे में कुछ जरूरी नहीं है। मैं श्री टी.टी. कृष्णामाचारी का संशोधन स्वीकार करता हूँ।

(संशोधन निम्न रूप में था):

"कि अनुच्छेद 109 के परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए :

'परंतु उक्त अधिकारिता का विस्तार उस विवाद पर नहीं होगा जिसमें राज्य एक पक्ष है तथा जो ऐसी संधि, करार, वचनबंध, सनद या वैसी ही अन्य लिखत से उत्पन्न हुआ है जो यह उपबंध करती है कि उक्त अधिकारिता का विस्तार ऐसे विवाद पर नहीं होगा।

[पूर्व में दर्शाए गए डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के साथ यह संशोधन स्वीकृत हुआ।]

---

* वही, पृष्ठ 588

** वही, पृष्ठ 588

पूर्वोक्त, पृष्ठ 590

#सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 3 जून, 1949, पृ. 5

अनुच्छेद 109, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।

* * * * *

अनुच्छेद ११०

@माननीय सभापति : क्या संशोधन संख्या 111 में आपराधिक स्वरूप के मामले भी शामिल हैं?

श्री नजरुद्दीन अहमद : नहीं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हम एक पृथक अनुच्छेद के माध्यम से यह उपबंध कर रहे हैं।

श्री नजरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं आपका आभारी हूँ कि आपने यह बताया कि अनुच्छेद 111 में आपराधिक मामले के बारे में कोई उपबंध नहीं किया है...............

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 110 के खण्ड (3) में 'न सिर्फ इस आधार पर कि पूर्वोक्त किसी प्रश्न का विनिश्चय गलत किया गया है बल्कि शब्दों के स्थान पर 'इस आधार पर कि पूर्वोक्त किसी प्रश्न का विनिश्चय गलत किया गया है और उच्चतम न्यायालय की अनुमति से' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।

इसकी विद्यमान भाषा थोड़ी अजीब-सी है और इस कारण हम इसे अलग ढंग से रख रहे हैं ताकि इसे बिना कठिनाई के पढ़ा जा सके। खण्ड को अब निम्नानुसार पढ़ा जाएगा:

"जहाँ ऐसा प्रमाणपत्र दे दिया गया है या ऐसी अनुमति दे दी गई है, वहाँ उस मामले में कोई पक्षकार इस आधार पर उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकेगा कि पूर्वोक्त किसी प्रश्न का विनिश्चय गलत किया गया है और उच्चतम न्यायालय की अनुमति से किसी भी अन्य आधार पर अपील कर सकता है।"

* * * * *

#माननीय डॉ. बी.आर अम्बेडकर : महोदय, मुझे यह कहना पड़ रहा है कि

@ वही, पृष्ठ 593-94

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 3 जून, 1948, पृ. 584

*· वही, पृष्ठ 612-14

वास्तव में बहस मुद्दे से हट गई है और मेरे मित्र श्री नजरुद्दीन अहमद ने अपने संशोधनों 1904 और 1907 में जो मुद्दे उठाए थे, सदस्यगण उससे काफी दूर भटक गए हैं। हमारे सामने संशोधन 1904 है। उस संशोधन के अनुसार मेरे मित्र श्री नजरुद्दीन अहमद यह सुझाव देना चाहते हैं कि अनुच्छेद 11 के उप-खण्ड (1) के अंत में कुछ शब्दों अर्थात् "इस संविधान की व्याख्या" शब्दों को हटा दिया जाए। मुझे खेद है कि उन्होंने 'इस संविधान की व्याख्या' शब्दों को हटाने के लिए जो आधार बताए थे, मैं उन्हें पूरी तरह नहीं सुन पाया। यद्यपि मैंने उनकी बात समझने की पूरी कोशिश की और मैंने उनको यह कहते सुना कि संशोधन संख्या 1904 प्रस्तुत करने का कारण यह है कि उन्होंने यह महसूस किया कि इन शब्दों की अपनी सीमाएं हैं और यदि ये शब्द रखे गए तो उन मामलों में जिनमें संवैधानिक कानून अंतर्ग्रस्त नहीं होगा, उच्चतम न्यायालय में अपील करने का उपबंध नहीं होगा।

श्री नजरुद्दीन अहमद : मैं समझता हूँ कि मेरी बात सही है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर **:** प्रमाणपत्र दिए जाने का प्रश्न नहीं उठता।

श्री नजरुद्दीन अहमद : कल तो आप उसे हटाना चाहते थे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं समझता हूँ कि मेरे माननीय मित्र श्री नजरुद्दीन संभवतः इन अनुच्छेदों को जो उच्चतम न्यायालय से संबंधित हैं, कि व्यवस्था ठीक से समझ नहीं पाए हैं।

श्री नजरुद्दीन अहमद : हमेशा यही कहते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इस प्रारूप संविधान में हमने जिन मामलों में संवैधानिक प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो, और जिन मामलों में संवैधानिक प्रश्न अन्तर्ग्रस्त नहीं हो, में अपील करने के लिए अलग-अलग उपबंध किए हैं। जिन मामलों में संवैधानिक मुद्दा शामिल हो, उनमें अपील करने का प्रावधान अनुच्छेद 110 में किया गया है और जिनमें संवैधानिक प्रश्न अन्तर्निहित नहीं हो, उनके लिए अनुच्छेद 111 में उपबंध किया गया है। इस प्रकार की अपीलों के बीच जिस कारण से यह विभेद किया गया है, मेरे मित्र श्री नजरुद्दीन अहमद संभवतः उसे महसूस नहीं कर रहे हैं। इसलिए मैं इस पूछे गए प्रश्न को स्पष्ट करना चाहूँगा। अनुच्छेद 121 में संशोधन प्रस्तुत होने वाला है जो उच्चतम न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों से संबंधित है। मैंने अनुच्छेद 121 के खण्ड 2 के संबंध में एक संशोधन रखा है जिसमें कहा गया है कि जब भी उच्चतम न्यायालय के सामने कोई अपील आती है और उसमें संविधान का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त होता है, तो ऐसे मामलों पर सुनवाई के लिए न्यायाधीशों की संख्या कम से कम पाँच होनी चाहिए, जबकि अन्य मामलों में जहाँ संवैधानिक प्रश्न अन्तर्ग्रस्त नहीं हो, हमने मामले को उच्चतम न्यायालय पर छोड़ दिया है, कि वह बनाए गए नियमों के अधीन पीठ गठित करे तथा न्यायाधीशों

की संख्या तय करे। अब यह एक महत्त्वपूर्ण अन्तर है कि उच्चतम न्यायालय के समक्ष आने वाले संवैधानिक मामले पर पाँच से कम न्यायाधीशों द्वारा निर्णय नहीं दिया जाएगा जबकि अन्य मामलों में की गई अपीलों पर नियम द्वारा निर्धारित न्यायाधीशों की संख्या द्वारा निर्णय दिया जाएगा। अतः मेरे मित्र इस बात को समझ गए होंगे कि 'इस संविधान की व्याख्या के लिए' शब्द उन मामलों को छोड़कर जिनके संवैधानिक कानून अन्तर्ग्रस्त हों, अपील करने में कोई बाधा नहीं डालता और वह इस बात को भी समझ गए होंगे कि हम इन दो प्रकार की अपीलों को दो अलग-अलग अनुच्छेदों में रखने का प्रस्ताव क्यों करते हैं, और दोनों मामलों में न्यायाधीशों की संख्या अलग-अलग क्यों है।

अब मैं अन्य मुद्दे पर आता हूँ जिस पर विस्तार से बहस की जा चुकी है अर्थात् क्या उच्चतम न्यायालय के पास आपराधिक मामले में क्षेत्राधिकार होना चाहिए अथवा नहीं। जैसा कि मैं कह चुका हूँ कि जहाँ तक अनुच्छेद 110 और मेरे मित्र श्री नजरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत संशोधन का संबंध है, यह बहस पूरी तरह अप्रासंगिक है और मुद्दे से अलग है और अनुच्छेद 110 के संबंध में हमारे निर्णय को प्रभावित नहीं करेगा। लेकिन चूंकि काफी बहस हो चुकी है, इसलिए मैं कुछ बातें कहना चाहता हूँ। सदस्यगण यह देख सकते हैं कि उच्चतम न्यायालय के समक्ष आपराधिक मामले यदि उसमें संवैधानिक कानून का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो, लाने के लिए अनुच्छेद 110 में उपबंध किया गया है। इसलिए यह एक रास्ता है जिसके माध्यम से आपराधिक मामले लाए जा सकते हैं और अनुच्छेद 110 के अधीन लाए जा सकने वाले मामले काफी छोटे मामले हो सकते हैं।

फिर, अनुच्छेद 112 है जिसमें प्रिवी कौंसिल का क्षेत्राधिकार उच्चतम न्यायालय में निहित किया गया है। इस समय मैं माननीय सदस्यों का ध्यान "किसी मुकदमे या मामले चाहे वह दीवानी मामला हो अथवा आपराधिक में डिक्री या अन्तिम आदेश' शब्दों की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूँ ताकि उच्चतम न्यायालय विशेष अनुमति के द्वारा अनुच्छेद 112 के उपबंधों के अधीन आपराधिक मामले पर भी विचार कर सके। मैंने यह गौर किया है कि आपराधिक मामलों के वकीलों में इस प्रकार की भावना प्रबल रही है कि एक उपबंध होना चाहिए ....*

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा : आपका मतलब प्रैक्टिस करने वाले आपराधिक मामलों के वकीलों से है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ठीक कहा आपने, मेरा मतलब प्रैक्टिस करने वाले आपराधिक मामलों के वकील से ही है। अनुच्छेद 111 उच्चतम न्यायालय को केवल दीवानी अपील सुनने की शक्ति प्रदान करता है, उच्चतम न्यायालय को आपराधिक अपील सुनने की शक्ति प्रदान की जानी चाहिए, यदि सभी प्रकार की अपीलें सुनने की शक्ति नहीं भी दी जाए तो कम से कम सीमित चरित्र की अपीलें जैसे कि वे अपीलें जिनमें

---

*· डॉट्स व्यवधान को दर्शाता है।

मौत की सजा अन्तर्ग्रस्त हो। अब, मैं यह नहीं कहना चाहता कि उच्चतम न्यायालय के पास आपराधिक मामलों का क्षेत्राधिकार होना चाहिए, के समर्थन में जो तर्क दिए गए हैं, उनमें दम नहीं है। लेकिन प्रश्न है कि यह किस प्रकार किया जाए? क्या हम संविधान में ही ऐसा एक विशिष्ट खण्ड जोड़ दें जिसमें अपील करने का अधिकार होगा या फिर हम संसद को उच्चतम न्यायालय में आपराधिक मामलों में अपीलीय क्षेत्राधिकार प्रदान करने दें? इस समय मेरी राय है – मैं इसे सिद्धांत का मामला स्वीकार करने की बात करता हूँ, मैं इस बारे में खुला दिमाग रखे हुए हूँ। यद्यपि मैं यह बता दूँ कि ऐसा नहीं है कि मेरे दिमाग में इस संबंध में कोई विचार है। इस चरण में संसद को यह शक्ति पर्याप्त है कि वह आपराधिक अपीलों के मामले में क्षेत्राधिकार उच्चतम न्यायालय में निहित कर सके। फिर संसद अन्वेषण न्यायालय को क्षेत्राधिकार देने के बाद उसके लिए कितने कार्य को निपटाना संभव हो पाएगा, यह भी देखना पड़ेगा कि कितने न्यायाधीशों का भार यह देश वहन कर सकता है, आदि बातों पर विचार करके संसद इस बारे में निर्णय लेगी। मेरे विचार में इस प्रश्न को संसद पर ही छोड़ देना कहीं अधिक बेहतर रहेगा क्योंकि इस मामले में निश्चय ही सांख्यकीय दृष्टि से विचार करने की जरूरत पड़ेगी। मेरा दूसरा दृष्टिकोण यह है कि उच्चतम न्यायालय, जिसमें मौत की सजा के मामले में अपील की जा सकती है, को अपीलीय शक्ति प्रदान करने का उपबंध करने की बजाए, मैं तो मौत की सजा को खत्म किए जाने का ही समर्थन करूँगा। (सुनिए, सुनिए) मेरे विचार से यही समुचित कदम होगा ताकि यह विवाद समाप्त हो सके। आखिरकार यह देश अहिंसा के सिद्धांत में विश्वास रखता है। यह इसकी प्राचीन परम्परा रही है और यद्यपि लोग इसका वास्तव में भले ही पालन नहीं करते रहे हों, लेकिन निश्चय ही नैतिक दृष्टि से अहिंसा के सिद्धांत का समर्थन करते रहे हैं और यथासंभव रूप में इस सिद्धांत का पालन किया जाना चाहिए और मेरे विचार से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए इस देश के लिए समुचित यही होगा कि मृत्युदंड की सजा को समाप्त कर दिया जाए।

*पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा : सभी फौजदारी अदालतें भी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं समझता हूँ कि हमें अनुच्छेद 110 में प्रस्तुत संशोधन तथा मेरे मित्र श्री नजरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत संशोधनों तक स्वयं को सीमित रखना चाहिए।

(निम्नलिखित संशोधन स्वीकृत किए गए।)

(1) "कि अनुच्छेद 110 के खण्ड (1) के 'राज्य' के स्थान पर 'भारत का राज्य क्षेत्र' शब्द अन्तःस्थापित किया जाए।"

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 3 जून, 1949, पृ. 616

(2) कि अनुच्छेद 110 के खण्ड (3) में, 'न सिर्फ इस आधार पर कि पूर्वोक्त किसी प्रश्न का विनिश्चय गलत किया गया है बल्कि, शब्दों के स्थान पर 'इस आधार पर कि पूर्वोक्त किसी प्रश्न का विनिश्चय गलत किया गया है और उच्चतम न्यायालय की अनुमति से शब्द प्रतिस्थापित किए जाए'।

[अनुच्छेद 110, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद १११

***डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 111 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (क) में संशोधनों की सूची में उल्लिखित संशोधन संख्या 1916 से 1919 के संदर्भ में 'चौबीस हजार रुपए' शब्दों के बाद 'या वह रकम जो संसद की ओर से विधि द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए' अन्त:स्थापित किया जाए।"

* * * * *

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 111 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाए:

"परंतु उच्च न्यायालयों के एक न्यायाधीश डिवीजन न्यायालय के एक न्यायाधीश या उच्च न्यायालय के दो या अधिक न्यायाधीशों या उच्च न्यायालय के दो या अधिक न्यायाधीशों द्वारा गठित डिवीजन न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, डिग्री या आदेश के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील नहीं की जा सकेगी जहाँ ये न्यायाधीश बराबर की संख्या में अलग-अलग राय रखते हों और वह उस समय उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की मौजूद कुल संख्या में बहुमत की राय नहीं हो।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई : जनरल) :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 111 के खण्ड 2 में, 'उस मामले में इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि के किसी सारवान प्रश्न के संबंध में, जिसका विनिश्चय गलत किया गया

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 620

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 3 जून, 1949, पृ. 615

है' शब्दों के स्थान पर 'संविधान के निर्वचन के बारे में विधि के किसी सारवान प्रश्न के संबंध में, जिसका विनिश्चय गलत किया गया है', प्रतिस्थापित किया जाए।"

* * * * *

****डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 111 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (क) में संशोधनों की सूची में उल्लिखित संशोधन संख्या 1916 से 1919 के संदर्भ में 'चौबीस हजार रुपए' शब्दों के बाद 'या वह रकम जो संसद की ओर से विधि द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए' अन्तःस्थापित किया जाए।"

#माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं सभा को शुरुआत में ही यह याद दिला देना चाहता हूँ कि सभा को वास्तव में किन-किन मुद्दों पर विचार करने और उन पर निर्णय लेने की जरूरत है। मुद्दा दो संशोधनों का है जो एक अर्थ में संशोधन की संख्या 1911 पर ही आधारित हैं और दूसरा मेरा स्वयं का संशोधन है जो चौथे सप्ताह की सूची संख्या में 25वें स्थान पर है। इन दो संशोधनों के माध्यम से उठाए गए मुद्दों के बारे में वास्तव में बताऊँ, उससे पहले मैं एक या दो सामान्य समुक्तियाँ करना चाहूँगा।

मेरा पहला प्रस्ताव है अनुच्छेद 111 सिविल प्रक्रिया संहिता की धाराएं 109 और 110 का हू-ब-हू निरूपण है। मैंने जो संशोधन सुझाए हैं, उन्हें छोड़ दें तो अनुच्छेद 111 और सिविल प्रक्रिया संहिता की दो धाराओं के बीच कोई अन्तर नहीं है। इसलिए सभा को यह याद रखना चाहिए कि जहां तक अनुच्छेद 111 का संबंध है, इससे उच्च न्यायालय में अपील के संबंध में विषय-वस्तु की दृष्टि से या बड़े अर्थों में कोई अन्तर नहीं आता। स्थिति बिल्कुल वही है जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता की दो धाराओं में वर्णित है।

दूसरी समुक्ति में यह करना चाहूँगा। सिविल प्रक्रिया संहिता की धाराएं 109 और 110 लेटर्स पेटेन्ट के पैरा 39 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का निरूपण है जिसके माध्यम से राजा द्वारा प्रेजीडेन्सी शहरों में अलग-अलग उच्च न्यायालय गठित किए गए थे। फिर धारा 109 और 110 पैराग्राफ 39 में अन्तर्विष्ट बातों का हू-ब-हू निरूपण है।

तीसरी बात मैं यह कहना चाहता हूँ कि ये लेटर्स पेटेंट वर्ष 1862 में तैयार किए गए थे या जारी किए गए थे। इन लेटर्स पेटेंट में भी विधानमंडल के लिए लेटर्स पेटेंट के माध्यम से दी गई शक्तियों को बदलने की शक्ति अन्तर्निहित है। लेकिन वर्ष 1865 में जारी किए गए लेटर्स पेटेंट के बाद से ही यह शक्ति विद्यमान थी, फिर भी केन्द्रीय

** सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 640

\# सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 632

विधानमंडल या प्रांतीय विधानमंडलों ने उच्च न्यायालय की डिक्री, अन्तिम आदेश या निर्णय के विरुद्ध अपील करने की शक्तियों को किसी भी रूप में बदलना उचित नहीं समझा। इसलिए सभा यह महसूस करेगी कि ये धाराएं जो उच्च न्यायालय के अन्तिम आदेश, डिक्री और निर्णय के विरुद्ध अपील करने के अधिकार से संबंधित है, को व्यावहारिक तौर पर 75 से 80 वर्षों तक बने रहने का इतिहास है। उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया गया। मेरे विचार से इसके परिणाम-स्वरूप उच्चतम न्यायालय के लिए संविधान में उपबंध करने के लिए एक काफी सशक्त तर्क ढूंढने की जरूरत है क्योंकि इसके कारण एक बनी-बनाई स्थिति में परिवर्तन हो जाएगा जो इतनी लम्बी अवधि से समय पर खरी उतरती रही है।

मुझे यह लगता है कि बहुत दिन नहीं हुए जब यह सभा जो लेजिस्लेटिव असेम्बली के रूप में बैठा करती थी, द्वारा इस बात पर जोर दिया जाता था कि इन शक्तियों जिनका प्रयोग भारत सरकार अधिनियम के अधीन प्रिवी काउंसिल द्वारा किया जाता था, को तत्काल बिना किसी कांट-छांट अथवा छिद्रान्वेषण के फेडरल कोर्ट को प्रदान कर दिया जाना चाहिए। इसलिए मुझे थोड़ा-सा अजीब लगता है कि जब हमने उच्चतम न्यायालय का गठन कर लिया है, जो फेडरल कोर्ट का स्थान लेगा और हमारे पास प्रिवी कौंसिल की शक्तियाँ उच्चतम न्यायालय को हस्तांतरित करने का अवसर मौजूद है, तो हमें यह स्थिति अख्तियार कर लेनी चाहिए थी कि हम उन उपबंधों को उसी रूप में नहीं रखेंगे जिस रूप मे यह आज विद्यमान है। जैसा कि मैंने बताया कि मुझे यह थोड़ा अजीब लगता है। इसलिए पहली बात तो यह कि इसमें तथ्यात्मक दृष्टि से कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। हम लोग उच्च न्यायालय तथा प्रिवी काउंसिल की स्थिति को उसी रूप में बरकरार रखने जा रहे हैं और उन्हें उच्च न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय के रूप में स्थापित करने जा रहे हैं।

महोदय, अब मैं वास्तविक संशोधनों पर आता हूँ। अर्थात् प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना के संशोधन और मेरा संशोधन संख्या 25 जिसका उल्लेख मैंने अपने भाषण की शुरुआत में किया था। यदि मेरा संशोधन पारित हो जाता है, तो इसका परिणाम यह होगा कि उच्चतम न्यायालय अपील न्यायालय बना रहेगा और संसद अपील न्यायालय के रूप में इसके दर्जे को नहीं घटा के यद्यपि संसद के पास उच्चतम न्यायालय में की जाने वाली अपीलों की संख्या या अपीलों के स्वरूप को घटाने की शक्ति मौजूद रहेगी। किसी भी रूप में, अनुच्छेद 111 का उप-खण्ड (ग) बना रहेगा तथा संसद की शक्ति से बाहर रहेगा। मेरा विचार यह है कि यद्यपि प्रिवी काउंसिल में जाने वाले मामलों के अन्तर्ग्रस्त रकम के बारे में निर्णय करने का अधिकार संसद को दे सकते हैं, अनुच्छेद 111 के खण्ड (1) का अन्तिम भाग (ग) को उसी रूप में बना रहने दिया जाए और संसद

को इसमें दखल देने की शक्ति नहीं देनी चाहिए क्योंकि इसमें कानून का मामला उतना अधिक अन्तर्ग्रस्त नहीं है, जितना कि इसमें अन्तर्निहित अधिकारिता का मामला अन्तर्ग्रस्त है। यदि उच्च न्यायालय किसी वकील की सुगमता को देखते हुए यह प्रमाणित कर देता है कि इस तथ्य के बावजूद कि किसी मुकदमे में अन्तर्ग्रस्त मामला इस तथ्य के कारण भाग (क) और (ख) की श्रेणी में नहीं आता कि संपत्ति का मूल्य निर्धारित मूल्य से कम है, तो भी यह ऐसा कारण या मामला है जिसे इस तथ्य के मद्देनजर उच्चतम न्यायालय के पास भेजा जाना चाहिए कि यह केवल मुकदमा लड़ने वाले व्यक्ति विशेष को ही प्रभावित नहीं करता है, बल्कि यह मामला आम जन को प्रभावित करने वाला है। मेरा तो यह मानना है कि यह अधिकारिता उच्च न्यायालय में ही अन्तर्निहित होनी चाहिए और इसलिए मेरे विचार से खण्ड (ग) को संसद की शक्ति के दायरे के अधीन नहीं रखा जाना चाहिए।

दूसरी तरफ, यदि मेरे मित्र प्रो. सक्सेना द्वारा प्रस्तुत संशोधन पारित हो जाता है, तो दो बातें होंगी। एक तो वह होगी जिसका जिक्र मेरे मित्र बख्शी टेक चन्द पहले ही कर चुके हैं कि संसद दीवानी मामलों में उच्चतम न्यायालय के अपीली अधिकार को पूरी तरह हड़प लेगी। मुझे यह बड़ा ही विनाशकारी परिणाम लगता है। इस देश में उच्चतम न्यायालय की स्थापना करना और उससे अपील की सारी शक्ति पूरी तरह से वापस लेने तथा उसे निरावृत्त करने का प्राधिकार संसद को प्रदान करना एक बड़ी ही मिथ्या बात होगी। हम लोग अपने ही हाथों में इसे शक्ति को रखने का साहस संजो सकते हैं तथा यह कह सकते हैं कि दीवानी मामलों में उच्चतम न्यायालय अपीली न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करेगा और उसकी स्थिति उसी तरह से सीमित कर दी जाएगी जैसा कि फेडरल कोर्ट के मामले में किया गया था।

दूसरी बात यह होगी कि संसद उप-खण्ड (ग) को समाप्त करने की स्थिति में आ जाएगी जबकि मैं कह चुका हूँ कि इसे स्थायी तौर पर बनाये रखा जाना चाहिए क्योंकि यह वस्तुतः अन्तनिर्हित अधिकारिता का मामला है। इसलिए, मुझे लगता है कि मेरा संशोधन संख्या 25 इस तर्क को पूरा करता है कि उच्चतम न्यायालय की अपीली शक्ति को लचीला बनाया जाना चाहिए क्योंकि मेरे संशोधन के अधीन संसद के लिए खुला विकल्प रहेगा कि वह उच्चतम न्यायालय के अपीली अधिकारिता को पूरी तरह से खत्म किये बिना या खण्ड (ग) में अन्तर्विष्ट उपबंधों को विनियमित करे। महोदय, इसलिए मैं श्री सक्सेना के संशोधन का विरोध करता हूँ।

(कुल मिलाकर 4 संशोधन स्वीकृत हुए, एक संशोधन अस्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 111, यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद ११२

*मानीय डॉ. बी.आर.अम्बेडकरः मैं नहीं समझता कि कहने के लिए कुछ है।

माननीय सभापतिः प्रस्ताव हैः

"कि अनुच्छेद 112 में, 'जिन मामलों में इस संविधान के अनुच्छेद 110 या अनुच्छेद 111 के उपबंध लागू नहीं होते, ''पहली अनुसूची के भाग प्प्प में विनिर्दिष्ट वर्तमान में राज्यों को छोड़कर शब्दों को हटा दिया जाए।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[अनुच्छेद 112, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

नया अनुच्छेद ११२-क

****माननीय सभापतिः** डॉ. अम्बेडकर द्वारा एक नए अनुच्छेद का प्रस्ताव करने की सूचना है, संशोधन संख्या 191:

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकरः महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँः

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1932 के संदर्भ में, अनुच्छेद 112 के बाद निम्नलिखित नया अनुच्छेद अन्तःस्थापित किया जाए :

उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों या आदेशों का पुनर्विलोकन

'112-क संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि के या इस संविधान के अनुच्छेद 121 के अधीन बनाए गए नियमों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय को अपने द्वारा सुनाए गए निर्णय या दिए गए आदेश का पुनर्विलोकन करने की शक्ति होगी।

महोदय, प्रारूप संविधान, जैसा कि अभी..........***

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेनाः औचित्य का प्रश्न है, महोदय, संशोधन संख्या 1932 प्रस्तुत नहीं किया गया है।

माननीय सभापतिः उसे प्रस्तुत नहीं किया गया है। मैं इसे नये अनुच्छेद के रूप में ले रहा हूँ।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः महोदय, मैं यह बताना चाहता हूँ कि संशोधन संख्या

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 640

**. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 640-41

***डॉट्स व्यवधान दर्शाता है।

1932 बिल्कुल वहीं है जो संशोधन संख्या 1928 है। वस्तुतः यदि संशोधन संख्या 1928 प्रस्तुत हो चुका है, तो संशोधन संख्या 1932 को प्रस्तुत नहीं किया जा सकता।

माननीय सभापतिः मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैंने इसे एक नये अनुच्छेद के रूप में लिया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः प्रारूप संविधान में इसके निर्णयों की समीक्षा करने का उपबंध नहीं है। यह महसूस किया गया कि वह एक बड़ी कमी थी और इस नये अनुच्छेद के माध्यम से उच्चतम न्यायालय में वह शक्ति प्रदान करने का प्रस्ताव किया गया है।

माननीय श्री के. संथानम (मद्रासः जनरल): महोदय, यदि मैं गलत नहीं हूँ कि इसका प्रारूप उतना अच्छा नहीं है जितना होना चाहिए। इस बात के लिए, मेरा सोचना यह है कि उच्चतम न्यायालय को शक्ति प्रदान करने के लिए संविधान में अनुच्छेद शामिल करना तथा फिर यह कहना कि उस शक्ति को उच्चतम न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों के द्वारा सीमित किया जाएगा, सही नहीं है। मेरे विचार से यह एक खराब कानून है। समीक्षा करने की साधारण शक्ति के आधार पर भी संसद को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है।

माननीय सभापतिः यह इसके अपने निर्णय के संदर्भ में ही है।

माननीय श्री के. संथानमः मैं उस विषय पर आ रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि उच्चतम न्यायालय को अपने ही निर्णय की समीक्षा करने के लिए स्वतंत्र छोड़ किये जाने के पीछे एक बड़ा कारण है। इन दो बातों के संबंध में, यह चीज कुछ दोषपूर्ण है। मैं डॉ. अम्बेडकर को यह सुझाव दूँगा कि वह यह देखें कि इसे इसी रूप में जाना चाहिए या फिर क्या इसके रूप पर पुनर्विचार नहीं किया जाना चाहिए?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मैं समझता हूँ कि श्री संथानम ने जो समुक्ति की है, वह पूरी तरह से गलत है। सर्वप्रथम, हम उच्चतम न्यायालय को कोई नियम बनाने की शक्ति नहीं दे रहे हैं। वह शक्ति अनुच्छेद 21 के द्वारा प्रत्यायोजित की जा रही है। यदि वह, उस अनुच्छेद को देखें, तो उसमें लिखा है:

"संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय समय-समय पर, राष्ट्रपति के अनुमोदन से न्यायालय की पद्धति और प्रक्रिया के साधारणतया, विनियमन के लिए नियम बना सकेगा जिसके अंतर्गत निम्नलिखित भी है :"

इसलिए यह कहना सही नहीं है कि हम उच्चतम न्यायालय को शक्ति प्रदान कर रहे हैं। यह शक्ति उच्चतम न्यायालय के पास पहले से है और उसे उसका प्रयोग राष्ट्रपति के अनुमोदन से करना है। दूसरी बात जिससे श्री संथानम भ्रमित हुए हैं, वह यह है कि

उनका ध्यान अनुच्छेद 121 में एक और खड (ख ख) जोड़े जाने हेतु सूची–I में मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधन संख्या 42 की ओर ध्यान नहीं गया है, जो कि समीक्षा किए जाने हेतु नियम बनाने से संबंधित है। इसलिए इन दो परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि उच्चतम न्यायालय की समीक्षा करने की शक्ति अनुच्छेद 121 तथा संशोधन संख्या 42 दोनों के ही विषयाधीन होनी चाहिए।

[(अनुच्छेद 112–क स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

माननीय सभापतिः संख्या 113

श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः सभा ने पहली सूची के भाग ्प्प् में से राज्य शब्द के उल्लेख को पूरी तरह से हटाने की बात कही है और इसलिए यह अनुच्छेद आवश्यक नहीं रह गया है। आप सभा में इसे औपचारिक तौर पर रख दें ताकि सभा इसे अस्वीकृत कर दे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः यही ठीक है।

[(अनुच्छेद 113 को संविधान से हटा दिया गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद ११४

माननीय सभापतिः अनुच्छेद 114 श्री गुप्ते का एक संशोधन है।

(संशोधन प्रस्तुत नहीं किया गया।)

क्या कोई कुछ बोलना चाहता है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मेरे मित्र श्री अलादी कृष्णमाचारी अय्यर ने मेरा ध्यान इस तथ्य की ओर दिलाया है कि उच्चतम न्यायालय की शक्तियों का उल्लेख करने वाले प्रारूप संविधान में आयकर मामलों में अपील किए जाने का उपबंध नहीं किया गया है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि मैं इस मामले पर विचार कर रहा हूँ और जाँच करने पर यदि यह पाता हूँ कि उच्चतम न्यायालय को इस प्रकार के प्राधिकार दिए जाने के उद्देश्य से किन्हीं अनुच्छेदों का प्रयोग नहीं किया जा सकता है तो मैं उस मामले के लिए विशेष तौर पर एक विशेष अनुच्छेद जोड़ने का प्रस्ताव करता हूँ। लेकिन यह अनुच्छेद पारित किया जा सकता है।

[(अनुच्छेद 114 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 6

अनुच्छेद १२१

****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 121 के खण्ड (3) के स्थान पर निम्नलिखित अन्त:स्थापित किया जाए:

(3) उच्चतम न्यायालय प्रत्येक निर्णय खुले न्यायालय में ही सुनाएगा, अन्यथा नहीं और अनुच्छेद 119 के अधीन प्रत्येक प्रतिवेदन खुले न्यायालय में सुनाई गई राय के अनुसार ही दिया जाएगा, अन्यथा नहीं।

महोदय, मैं संशोधन संख्या 1966 भी प्रस्तुत करता हूँ।

''कि अनुच्छेद 121 के खण्ड (4) के लिए, निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:

(4) उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रत्येक निर्णय और ऐसी प्रत्येक राय, मामले की सुनवाई में उपस्थित न्यायाधीशों के बहुमत की सहमति से ही दी जाएगी, अन्यथा नहीं, किंतु इस खंड की कोई बात किसी ऐसे न्यायाधीश को, जो बहुमत से सहमत नहीं है, अपना विसम्मत निर्णय या राय देने से बाधित नहीं करेगी।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** सभापति महोदय, मुझे खेद है कि मैं अपने माननीय मित्र श्री लारी द्वारा प्रस्तुत संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता।

मुझे लगता है कि उनके संशोधन में जो बात उठायी गई है, उसे उन्होंने पूरी तरह गलत समझा है।

उच्चतम न्यायालय की नियम बनाने की शक्ति को राष्ट्रपति के अनुमोदन के विषयाधीन बनाया जाना आवश्यक है क्योंकि यदि उन नियमों को उच्चतम न्यायालय पर ही पूरी तरह से छोड़ दिया जाये, तो देश के राजस्व पर काफी बोझ पड़ेगा। उदाहरण के लिए, मान लें कि कोई नियम बनाया जाता है कि कतिपय मामलों की सुनवाई दो न्यायाधीशों द्वारा की जानी चाहिए। उच्चतम न्यायालय द्वारा बनाया गया वह एक सरल कानून हो सकता है। लेकिन नि:संदेह, इससे जनता के राजस्व पर बोझ पड़ेगा। उदाहरण के लिए शुल्कों के विनियमन के संबंध में नियमों में वैसा ही उपबंध है। यह फिर जनता के राजस्व का मामला हो जाता है। इसे उच्चतम न्यायालय पर नहीं छोड़ा जा सकता। इसलिए, मेरा यह कहना है कि अनुच्छेद 121 में अन्तर्विष्ट ये उपबंध कि नियम राष्ट्रपति के अनुमोदन के विषयाधीन होने चाहिए, एक समुचित प्रक्रिया है, जिसका पालन किया जाना चाहिए। चूंकि इस प्रकार के मामले जिनसे जनता के राजस्व पर बोझ पड़ता और जिस बोझ का वित्तपोषण विधायिका तथा कार्यपालिका

** वही, पृष्ठ 645

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 649-50

द्वारा कर लगाकर किया जाता है, को कार्यपालिका के दायरे से नहीं हटाया जा सकता।

मैं यह भी बताना चाहता हूँ कि अनुच्छेद 121 में अन्तर्विष्ट उपबंध और भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अनुच्छेद 214 जो फेडरल कोर्ट से संबंधित है तथा अनुच्छेद 224 जो उच्च न्यायालयों से संबंधित है, में अन्तर्विष्ट उपबंध बिल्कुल समान हैं। इसलिए आज जो स्थिति विद्यमान है, वास्तव में उसमें कोई बदलाव नहीं आया है। मेरे माननीय मित्र श्री संथानम ने मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 42 के संबंध में जो टिप्पणियाँ की है, उनसे मैं यह समझ पाने में असमर्थ रहा हूँ कि वह वास्तव में क्या मुद्दा उठाना चाहते हैं। इसलिए, मैं कुल मिलाकर यही कह सकता हूँ कि प्रारूप समिति जब संविधान पर दुबारा से नजर डालेगी तो इस मामले पर विचार करेगी और इस संदर्भ में कोई नया वाक्यांश सुझाया जायेगा जो इस अनुच्छेद जिसे हमने उच्चतम न्यायालय को समीक्षा किए जाने की शक्ति प्रदान करने हेतु पारित किया है, के उपबंधों के अनुरूप होगा, तो नि:संदेह उस पर विचार किया जायेगा।

एक दूसरा मुद्दा है जिसका मैं उल्लेख करना चाहूँगा वह है संशोधन संख्या 43। मेरे माननीय मित्र श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 43 जिसे मैं पूरे हृदय से समर्थन करता हूँ, में एक परन्तु रखा गया है, जो कहता है कि अनुच्छेद 110 में उल्लिखित मामलों से अलग मामले में यदि संविधान की व्याख्या का प्रश्न उठता है तो पाँच न्यायाधीशों की एक पीठ के समक्ष अपील की जाएगी और उस प्रश्न का निपटारा हो जाने पर उसे मूल पीठ के पास पुन: वापस भेज दिया जाएगा। अधिनियमित परन्तुक में अनुच्छेद 111 का संदर्भ दिया गया है लेकिन मैं मानता हूँ कि बाद में सभा यदि आपराधिक मामलों से संबंधित अपीलों के क्षेत्राधिकार प्रदान करने का निर्णय लेती है, तो इस परन्तुक का विस्तार किया जा सकता है ताकि आपराधिक मामलों में इस प्रकार की अपील स्वीकार करने की अनुमति उच्चतम न्यायालय को दी जा सके। इसलिए, मेरा यह कहना है कि विभिन्न पक्षों से प्राप्त या सुझाव कि उच्चतम न्यायालय के पास आपराधिक क्षेत्राधिकार होना चाहिए, को सभा स्वीकार करती है, तो इस परन्तुक का विस्तार किया जा सकेगा।

[(डॉ. अम्बेडकर के 2 संशोधनों सहित 5 संशोधन स्वीकृत हुए। एक संशोधन अस्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 121, यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद १९१

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महादेय, मैं औपचारिक तौर पर प्रस्ताव करता हूँ:

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 656

''कि अनुच्छेद 191 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (क) में 'पूर्वी पंजाब के उच्च न्यायालय और अवध में चीफ कोर्ट' शब्दों के स्थान पर 'पूर्वी पंजाब, असम और उड़ीसा के उच्च न्यानयालय' शब्द प्रतिस्थापित किये जाएँ।''

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ।

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2567 और 2570 के संदर्भ में, अनुच्छेद 191 के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाए:

191 (1) प्रत्येक राज्य के लिए एक उच्च न्यायालय होगा।

(2) इस संविधान के प्रयोजनार्थ, इस संविधान के लागू होने से तत्काल पूर्व किसी प्रांत में विद्यमान उच्च न्यायालय को उस राज्य के लिए उच्च न्यायालय माना जाएगा।

(3) इस अध्याय के सभी उपबंध इस अनुच्छेद में उल्लिखित प्रत्येक उच्च न्यायालय पर लागू होंगे।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी: हम पहले इस संशोधन पर चर्चा कर लें क्योंकि सभा यदि इस संशोधन को स्वीकार कर लेती है तो सभी अन्य संशोधन अनावश्यक हो जायेंगे। यह संशोधन इस अनुच्छेद की सम्पूर्ण आकृति को बदल देता है, वही वह इसे सरलीकृत भी कर देता है।

माननीय सभापति : इसलिए, डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत संशोधन को छोड़कर कोई और संशोधन नहीं है। क्या इस संशोधन या अनुच्छेद के बारे में कोई कुछ कहना चाहता है।

[(संशोधन संख्या 2568 से 2577 प्रस्तुत नहीं किए गए।)]

माननीय सभापति: अत: डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत संशोधन के अलावा कोई संशोधन नहीं है। क्या कोई संशोधन अथवा अनुच्छेद के बारे में कुछ कहना चाहता है?

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[(अनुच्छेद 191, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद १९२

(संशोधन सं. 2578 से 2580 प्रस्तुत नहीं किए गए।)

***माननीय सभापति:** संशोधन सं. 2561 डॉ. अम्बेडकर के नाम है। इसे औपचारिक

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 656

रूप से प्रस्तावित किया जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः महोदय, मैं औपचारिक तौर पर प्रस्ताव करता हूँ।

''कि अनुच्छेद 192 के परंतुक में 'किसी के साथ' प्रारंभ होने वाले शब्दों तथा इस अध्याय के साथ समाप्त होने वाले शब्दों का लोप किया जाए और 'छह' शब्द के बाद 'समय-समय पर' शब्द अन्तःस्थापित किए जाएँ।''

उच्च न्यायालयों का अभिलेख

महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँः

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2581 के संदर्भ में अनुच्छेद 192 के स्थान पर निम्नलिखित नये अनुच्छेद अन्तःस्थापित किए जाएंः

उच्च न्यायालयों का गठन

192 प्रत्येक उच्च न्यायालय अभिलेख न्यायालय होगा और उसको अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति सहित ऐसे न्यायालय की सभी शक्तियां होंगी।

192-क प्रत्येक उच्च न्यायालय मुख्य न्यायमूर्ति और ऐसे अन्य न्यायाधीशों से मिलकर बनेगा जिन्हें राष्ट्रपति समय-समय पर नियुक्त करना आवश्यक समझे।

परंतु ऐसे नियुक्त किए गए न्यायाधीशों की संख्या किसी भी समय राष्ट्रपति द्वारा उस न्यायालय के संबंध में नियम की गई अधिकतम संख्या से अधिक नहीं होगी।

* * * * *

अनुच्छेद १९३

#**माननीय सभापतिः** हम लोग कल अनुच्छेद 193 पर चर्चा कर रहे थे। अब हम लोग उसी अनुच्छेद पर विचार करेंगे। एक संशोधन प्रस्तुत किया जा चुका है लेकिन बहुत सारे अन्य संशोधन हैं। एक दूसरा संशोधन संख्या 2592 डॉ. अम्बेडकर के नाम पर है, जोकि मैं समझता हूँ कि उम्र के प्रश्न को छोड़कर इन सभी संशोधनों को कवर कर लेगा। अतः मैं समझता हूँ कि यदि डॉ. अम्बेडकर पहले अपना संशोधन प्रस्तुत कर दें तो संभवतः उम्र से संबंधित मामले को छोड़कर अन्य सभी संशोधनों को प्रस्तुत करना जरूरी नहीं होगा। जहां तक उम्र का संबंध है। हम उस प्रश्न पर अलग से विचार कर सकते हैं।

---

*· वही, पृष्ठ 657

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई: जनरल): मैं वह संशोधन प्रस्तुत नहीं कर रहा हूँ।

माननीय सभापति: तो फिर, हमें दूसरे संशोधन लेने पड़ेंगे।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2610 के संदर्भ में, अनुच्छेद 193 के खण्ड (1) के परंतुक के खण्ड (ग) में 'उच्च न्यायालय' शब्दों के बाद 'पहली अनुसूची में वर्तमान में विनिर्दिष्ट किए जा रहे किसी राज्य' शब्द अन्त:स्थापित किए जाए।'

महोदय, इस संशोधन का उद्देश्य प्राँतों और भारतीय राज्यों के बीच सभी प्रकार के विभेदों को समाप्त करना है ताकि विभिन्न उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बीच पूरी तरह से अन्तरपरवर्तनीयता सम्भव हो सके।

महोदय, मैं संशोधन की सूची में औपचारिक तौर पर संशोधन संख्या 2614 प्रस्तुत करता हूँ:

'कि अनुच्छेद 193 के खण्ड (2) के उप-खण्ड (क) में 'राज्य' शब्द के स्थान पर 'पहली अनुसूची में वर्तमान में विनिर्दिष्ट किए जा रहे राज्य' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएँ।

महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँ:

'कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2614 के संदर्भ में, अनुच्छेद 193 के खण्ड (2) के उप-खण्ड (क) में 'किसी राज्य में या जिसके लिए एक उच्च न्यायालय है' शब्दों के स्थान पर 'भारत के राज्य क्षेत्र' शब्द अन्त:स्थापित किए जाएँ।''

'' कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2614 के संदर्भ में, अनुच्छेद 193 के खण्ड (2) के उप-खण्ड (ख) के संदर्भ में, 'उच्च न्यायालय' शब्दों के बाद 'पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट किए जा रहे कोई राज्य में' शब्द अन्त:स्थापित किए जाएँ।

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2614 के संदर्भ में, अनुच्छेद 193 के खण्ड (2) के स्पष्टीकरण 1 के उप-खण्ड (ख) के संदर्भ में 'पहली और दूसरी अनुसूची में वर्तमान में विनिर्दिष्ट किए जा रहे कोई राज्य में' शब्दों की जगह 'भारत की सीमा में' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।

''संशोधन संख्या 2622 के संदर्भ में.....''

माननीय सभापति: उसे प्रस्तुत करने से पूर्व, आप औपचारिक रूप से संशोधन सं. 2622 प्रस्तुत कर सकते हैं।

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 6 जून, 1949, पृ. 664-65

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः महोदय, मैं औपचारिक रूप से प्रस्ताव करता हूँः

''कि अनुच्छेद 193 के खण्ड (2) के स्पष्टीकरण II के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जायेः

''**स्पष्टीकरण II** - इस खण्ड के उप-खण्ड (क) और (ख) में 'पहली अनुसूची के भाग III में वर्तमान में विनिर्दिष्ट किए जा रहे किसी राज्य के संदर्भ में 'उच्च न्यायालय' शब्द का आशय ऐसे न्यायालय से है जिसे राष्ट्रपति ने अनुच्छेद 123 के अधीन इस संविधान के अनुच्छेद 103 और 106 के प्रयोजनार्थ उच्च न्यायालय के रूप में उद्घोषित किया है।

महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँः

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2622 के संदर्भ में अनुच्छेद 193 के खण्ड (2) के स्पष्टीकरण II का लोप किया जाए।

संख्या 196 से 200 तक के सभी संशोधनों का उद्देश्य ब्रिटिश भारत और भारतीय राज्यों के बीच सभी प्रकार के भेदों को समाप्त करना है। कुछेक संशोधन विशेषकर संशोधन संख्या 199 और 200 तो मुख्य संशोधन के परिणामी संशोधन हैं।

* * * * *

***माननीय सभापतिः** डॉ. अम्बेडकर, क्या आप इस पर बोलना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः नहीं, महोदय, मैं नहीं समझता कि इस बारे में कोई उत्तर देना अपेक्षित है।

[(केवल 4 संशोधन स्वीकृत हुए। शेष अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 193, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद १९३-क

#**माननीय सभापतिः** डॉ. अम्बेडकर, क्या आप प्रो. शाह के प्रस्ताव के बारे में कुछ कहना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः सभापति महोदय, मुझे खेद है कि मैं प्रो. शाह के इस संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता। यदि मैं प्रो. शाह की बात को सही-सही समझ पाया हूँ तो उनका यह कहना है कि उनके संशोधन का अन्तर्निहित उद्देश्य न्यायपालिका

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 674

\# वही, पृष्ठ 678-79

और कार्यपालिका के बीच पृथकता के सिद्धांत को संरक्षित करना या फिर उन्हें प्रभावी बनाना है। मेरे विचार से इसमें कोई विवाद नहीं है कि कार्यपालिका और न्यायपालिका का क्षेत्र पृथक होना चाहिए और वस्तुतः उच्च न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय से संबंधित सभी अनुच्छेदों के अन्तर्गत उस उद्देश्य को ध्यान में रखा गया है लेकिन प्रश्न यह उठता है, न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच पृथकता किस प्रकार लाई जानी है। जहाँ तक मैं न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक रखने के सिद्धांत को समझ पाया हूँ, इसका अर्थ है कि जब कोई व्यक्ति कोई न्यायिक पद धारण कर रहा हो, तो उसे कोई ऐसा पद नहीं धारण करना चाहिए जिसमें कार्यपालिका की शक्ति अन्तर्ग्रस्त हो। उसी प्रकार से जब कोई व्यक्ति कार्यपालिका का पद धारण किए हुए हो तो उसे न्यायिक पद धारण नहीं करना चाहिए। लेकिन, संशोधन बिल्कुल अलग सिद्धांत से संबंधित है, जहाँ तक मैं इसे समझ पाया हूँ। इसमें यह निर्धारित किया गया है कि न्यायपालिका का सदस्य रहा व्यक्ति न्यायपालिका की सेवा में कतिपय वर्षो तक रहने के बाद कौन सा पद धारण कर सकेगा। मेरे विचार से उसमें एक अलग समस्या को उठाया गया है। लोक सेवा आयोग के मामले में भी यही समस्या उठी है जिस पर हमें विचार करना है कि लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य अपना कार्यकाल पूरा करने के बाद किसी अन्य पद को धारण करने का हकदार है या नहीं। मुझे यह लगता है कि न्यायपालिका के सदस्यों की स्थिति लोग सेवा आयोग के सदस्यों से भिन्न है। मैं पहले बता चुका हूँ कि लोक सेवा आयोग के सदस्य प्रशासनिक सेवाओं की नियुक्तियों के मामले में कार्यपालिका के साथ काफी गहराई से जुड़े होते हैं। न्यायपालिका बहुत हद तक कार्यपालिका से संबंधित नहीं होती है, वह लोगों के अधिकारों और कुछ हद तक भारत सरकार और उसकी इकाइयों के अधिकारों से संबंधित होती है। मेरे विचार से न्यायपालिका बहुत हद तक लोगों के अधिकारों से संबंधित होती है, जिसके बारे में कोई भी सरकार बहुत कम ध्यान देती है। परिणामतः कार्यपालिका द्वारा न्यायपालिका को प्रभावित करने का अवसर बहुत कम हैं और मुझे ऐसा लगता है कि केवल सैद्धान्तिक कारण से किसी व्यक्ति को किसी अन्य पद धारण करने से रोकना किसी चीज को काफी आगे तक ले जाने की बात है। हमें यह बात याद रखनी चाहिए कि हम अपनी न्यायपालिका के लिए जो उपबंध कर रहे हैं, न्यायपालिका में पद धारण करने वाले व्यक्ति के लिए कोई संतोषजनक स्थिति नहीं है। हम उन लोगों के 60 वर्ष पूरे कर लेने पर सेवानिवृत्ति किए जाने का प्रावधान कर रहे हैं जब कि इंग्लैंड में व्यक्ति 70 वर्ष तक की आयु तक उस पद पर बना रह सकता है। यह भी याद रखा जाना चाहिए कि संयुक्त राज्य अमेरिका में उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश व्यवहारिक तौर पर जीवनपर्यन्त पद पर बना रहता है, अतः अमेरिका या ग्रेट ब्रिटेन में न्यायाधीशों द्वारा सेवानिवृत्ति के पश्चात् कोई और पद धारण करने का मामला नहीं के बराबर सामने आता है।

उसी प्रकार से जहाँ तक पेंशन का संबंध है, अमेरिका में सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश की पेंशन उसके वेतन के बराबर ही होती है: दोनों के बीच कोई अन्तर नहीं होता। इंग्लैड में भी जहां तक मुझे जानकारी है, पेंशन की राशि न्यायाधीश के वेतन के सत्तर या अस्सी प्रतिशत के बराबर होती है। सेवानिवृत्ति संबंधी हमारे नियम जैसा कि मैं कह चुका हूँ, व्यक्ति पर एक प्रकार का बोझ डाल देता है क्योंकि उसे साठ वर्ष की आयु में सेवा से निवृत्त होना पड़ता है। फिर हमारे पेंशन संबंधी नियम इतने कड़े हैं कि हम व्यावहारिक रूप से बहुत कम पेंशन प्रदान करते हैं। इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मैं समझता हूँ कि प्रो. के.टी. शाह द्वारा प्रस्तावित दोनों ही संशोधन उस प्रयोजनार्थ जो उनके मन में है कि कार्यपालिका से न्यायपालिका को अलग रखना तथा उस दृष्टि से भी कि इससे न्यायपालिका में पदधारण करने वाले व्यक्तियों पर बहुत अधिक बोझ पड़ जायेगा, अनावश्यक है।

श्री एच.वी. कामत: मैं यह बताना चाहता हूँ कि यह संशोधन सेवानिवृत्ति न्यायाधीशों पर लागू नहीं होकर सेवारत न्यायाधीशों पर लागू होते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं समझता हूँ कि यह संशोधन काफी गफलत पैदा करने वाला लगता है। इसमें यह कहा गया है कि यह उस व्यक्ति के मामले में लागू होगा जो लगातार पाँच वर्षों की अवधि तक सेवा कर चुका हो। उसका अर्थ यह है यदि राष्ट्रपति किसी न्यायाधीश को पाँच वर्षों से कम अवधि के लिए नियुक्त करें, तो वह इसके विषयाधीन नहीं होगा, इससे तो प्रो. के.टी. शाह जिस उद्देश्य को पूरा करना चाहते हैं, वही विफल हो जायेगा। किसी भी मामले विशेष में राष्ट्रपति इस बात के लिए स्वतंत्र होगा कि वह किसी न्यायाधीश को पाँच वर्षों से कम की अवधि के लिए नियुक्त करे और बाद में उसे राजदूत या वाणिज्य राजदूत या व्यापार आयुक्त आदि के पद पर नियुक्त करे। मुझे तो यह पूरा मामला ही बिल्कुल गलतफहमी से भरा लगता है।

माननीय सभापति: प्रश्न है कि निम्नलिखित नया अनुच्छेद 193-क को अनुच्छेद 193 के बाद जोड़ा जाए:

193-क ''कोई व्यक्ति जो लगातार 5 वर्षों तक उच्चतम न्यायालय या फेडरल न्यायालय या उच्च न्यायालय का न्यायाधीश रहा हो, को भारत सरकार या संघ में शामिल किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी कार्यपालक के पद पर जिसमें राजदूत, मंत्री, पूर्णाधिकारी, उच्चायुक्त, व्यापार आयुक्त, वाणिज्य राजदूत शामिल हैं, के साथ-साथ भारत सरकार या संघ में शामिल किसी राज्य की सरकार के अधीन मंत्री पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकेगा।''

[(प्रो.के.टी. शाह का यह संशोधन अस्वीकृत हुआ।)]

अनुच्छेद १९५

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 195 में 'एक घोषणा' शब्दों के स्थान पर 'एक प्रतिज्ञान या शपथ' शब्दों को प्रतिस्थापित किया जाए। यह एक अति औपचारिक संशोधन है।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 195, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।

अनुच्छेद १९६

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 196 के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाए:

उच्च न्यायालय में न्यायाधीश रहने के पश्चात् न्यायालय अथवा किसी प्राधिकरण के समक्ष कानूनी पदों पर प्रतिबंध

196, इस संविधान के लागू होने के पश्चात् कोई व्यक्ति जिसने किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में पद धारण किया है, भारत में किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष वकालत का कार्य नहीं करेगा।

यह शब्दों की संरचना में किया गया हेर-फेर मात्र है।

श्री प्रभुदयाल हिम्मत सिंगका: डॉ. अम्बेडकर द्वारा अभी प्रस्तुत किए गए संशोधन के दृष्टिगत मेरा संशोधन (सं. 2632) आवश्यक नहीं है।

* * * * *

**__माननीय सभापति:__ डॉ. अम्बेडकर क्या आप कुछ और कहना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं नहीं समझता कि इसमें और कोई चीज जरूरी है।

माननीय सभापति: मैं पहले सरदार हुकुम सिंह के संशोधन पर मत लूँगा। यदि वह स्वीकृत हो जाता है, तो डॉ. अम्बेडकर का संशोधन इसके द्वारा संशोधित हो जायेगा।

[(संशोधन अस्वीकृत हुआ। डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 196, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 680

*· वही, पृष्ठ 680

**· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 6

अनुच्छेद १९६-क

[(संशोधन संख्या 2639 प्रस्तुत नहीं किया गया)]

माननीय सभापतिः एक समरूप संशोधन संख्या 1870 प्रस्तुत किया जा चुका है और उस पर विस्तृत चर्चा हो चुकी है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मेरा सुझाव है कि अनुच्छेद 196-क को स्थगित रखा जाये। एक समरूप अनुच्छेद (सं. 103-क) स्थगित रख गया।

माननीय सभापतिः मैं सहमत हूँ। फिर यह अनुच्छेद बना रहेगा।

अनुच्छेद १९७

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः अनुच्छेद 197 को भी स्थगित रखा जाए।

माननीय सभापतिः मेरी सहमति है। यह अनुच्छेद भी स्थगित रखा जाता है।

अनुच्छेद १९८

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 198 के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाए:

198 जब किसी उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति का पद रिक्त है या जब ऐसा मुख्य न्यायमूर्ति अनुपस्थिति के कारण या अन्यथा अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तब न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों में से एक ऐसा न्यायाधीश, जिसे राष्ट्रपति इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उस पद के कर्तव्यों का पालन करेगा।

कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति की अस्थाई नियुक्ति

श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः महोदय, डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत संशोधन से 2650 कवर हो जाता है क्योंकि यह खण्ड (2) से संबंधित है।

* * * * *

अनुच्छेद २००

डॉ. अम्बेडकर का संशोधन विषय-वस्तु की दृष्टि से बिल्कुल समान है, यह खण्ड (2) का लोप करता है और केवल खण्ड (1) को बनाये रखता है।

सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 685

डॉ. पी.के.सेनः मैं उस संशोधन को प्रस्तुत नहीं करना चाहता।

(संशोधन संख्या 2651, 2652 और 2653 प्रस्तुत नहीं किए गए।)

[(डॉ. अम्बेडकर का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 198 यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।)]

***माननीय सभापतिः** डॉ. अम्बेडकर ने संशोधन संख्या 201 के बारे में सूचना दी है, जो श्री जसपतराय कपूर द्वारा प्रस्तुत संशोधन जैसा है। उस संशोधन को प्रस्तुत किए जाने की जरूरत नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''अनुच्छेद 200 में 'इस अनुच्छेद के उपबंधों के विषयाधीन' शब्दों का विलोप किया जाये।

* * * * *

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** महोदय, मैं नहीं सोचता कि इस अनुच्छेद पर इतनी विस्तृत चर्चा होगी क्योंकि उच्चतम न्यायालय से संबंधित एक वैसा ही अनुच्छेद पारित किया जा चुका है। तथापि, चूंकि बहस हो चुकी है और कतिपय सदस्यों ने मुझसे कतिपय निश्चित प्रश्न पूछे हैं। मैं यहाँ उनका उत्तर दे रहा हूँ।

मेरे मित्र श्री कामत ने कहा कि उन्हें इस बात की जानकारी नहीं है कि अनुच्छेद 200 के मामले में किसी भी देश में कोई पूर्वोदाहरण मौजूद है। मुझे इस बात में तनिक भी संदेह नहीं है कि उन्होंने प्रारूप संविधान नहीं पढ़ा है क्योंकि इसकी पाद-टिप्पणी में ही इस बात का उल्लेख है कि अमेरिका और ग्रेट ब्रिटेन में वैसा ही उपबंध विद्यमान है (श्री कामत के कारण व्यवधान उत्पन्न हुआ, जो सुना नहीं जा सका।) इंग्लैंड के सुप्रीम कोर्ट ऑफ जुडिकेयर एक्ट की धारा 8 को शब्दशः रख दिया गया है। इसकी भाषा में भी बिल्कुल फर्क नहीं है। पूर्वोदाहरण के संबंध में मेरा उत्तर तो यही है।

लेकिन महोदय, पूर्वोदाहरण के अलावा भी अनुच्छेद 200 जैसे अनुच्छेद के लिए उपबंध किए जाने का पुख्ता आधार है। सभा को यह स्मरण होगा कि हमने अस्थायी या अतिरिक्त न्यायाधीशों की नियुक्ति संबंधी प्रत्येक उपबंध को अब पूरी तरह समाप्त कर दिया है और अस्थायी या अतिरिक्त न्यायाधीशों से संबंधित न्यायाधीश स्थायी रहेंगे। मुझे यह प्रतीत होता है कि यदि आप अस्थायी या अतिरिक्त न्यायाधीशों का प्रावधान नहीं करने जा रहे हैं, तो आपको कतिपय कार्य निपटाने के लिए कुछ उपबंध करना होगा क्योंकि

---

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 688

वही, पृष्ठ 693-95

ऐसे मामलों के संबंध में समय पर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के कार्यों का निर्वहन करने हेतु किसी अस्थायी न्यायाधीश की नियुक्ति करना व्यावहारिक नहीं हो सकता और इसलिए एकमात्र दूसरा उपबंध जो अनुच्छेद 196 (जिसके अन्तर्गत यह उपबंध किया गया है कि सेवानिवृत्ति के पश्चात् कोई न्यायाधीश वकालत नहीं करेगा) के समकक्ष हो सकता है वह उपबंध अनुच्छेद 200 में अन्तर्विष्ट है। जैसा कि मेरे मित्र डॉ. टेकचन्द ने कहा है कि अनुच्छेद के प्रयोजन या मंशा के संबंध में बहुत सारी गलतफहमी या भ्रम की स्थिति बनी हुई है। उच्च न्यायालयों से सेवानिवृत्त हुए न्यायाधीशों को पिछले दरवाजे के माध्यम से सेवा में विस्तार दिए जाने की कोई मंशा इस अनुच्छेद में अन्तर्निहित नहीं है। इसलिए, इस संबंध में किसी को कोई भ्रम रखने की जरूरत नहीं है।

मुझसे दूसरा प्रश्न परन्तुक के बारे में पूछा गया है। बहुत सारे लोगों जिन्होंने परन्तुक पर बोला है, ने कहा है कि उन लोगों को यह परन्तुक उद्देश्यविहीन और निरर्थक लगता है। मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूँ। मेरे विचार से यह परन्तुक परमावश्यक है। यदि परन्तुक नहीं होगा तो संबंधित प्राधिकारियों के लिए किसी न्यायाधीश पर जुर्माना लगाने का खुला विकल्प बना रहेगा। यदि वह आमंत्रण को स्वीकार करने से मना कर देता है। यह भी हो सकता है कि आमंत्रण अस्वीकार करने वाले व्यक्ति को अदालत की अवमानना का दोषी ठहरा दिया जाये। हम यह नहीं चाहते कि उच्च न्यायालय के किसी सेवानिवृत्त न्यायाधीश जो बीमार रहने, अक्षम होने अथवा अपने किसी निजी कार्य में व्यस्त रहने के कारण मुख्य न्यायाधीश द्वारा दिए गए आमंत्रण को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हों, के विरुद्ध इस प्रकार का कोई जुर्माना लगाया जाए। इस परन्तुक का यही औचित्य है। दूसरा प्रश्न यह पूछा गया कि क्या अनुच्छेद 200 में उल्लिखित विशेषाधिकार सेवानिवृत्त न्यायाधीश को उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को मिलने वाले वेतन मांगने का हकदार बनायेगा। मेरा उत्तर यह है कि यह मामला पेंशन संबंधी नियमों से शासित होगा। विद्यमान नियम यही है कि जब किसी सेवानिवृत्त व्यक्ति को सरकार के अधीन कोई विशेष कार्य स्वीकार करने के लिए आमंत्रण भेजा जाता है तो उसे पद के वेतन में से उसकी पेंशन को घटाकर जो राशि बनती है, वह भुगतान की जाती है। मैं समझता हूँ कि यह एक सामान्य नियम है। मैं गलत भी हो सकता हूँ। खैर, यह मामला पेंशन नियम से शासित होता है। उसी प्रकार से इस मामले को पेंशन संबंधी नियमों से शासित होने के लिए छोड़ दिया जाये और हमें इस बारे में अनुच्छेद में विशेष तौर पर कुछ भी उल्लेख करने की जरूरत नहीं है। बहस के दौरान इस मुद्दे पर जो भी आलोचना की गई है, उसके संबंध में मुझे तो यही कहना है।

श्री एच.वी. कामतः क्या संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान में ऐसा कोई उपबंध है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मेरे पास उसकी प्रति उपलब्ध नहीं है। अमेरिका में इस बारे में प्रश्न नहीं उठता है क्योंकि वहां वेतन और पेंशन लगभग समान है।

मैं श्री कपूर के संशोधन संख्या 89 को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ, क्योंकि कुछ लोगों का यह मानना है कि मुख्य न्यायाधीश द्वारा सेवा से निवृत्त हो चुके अपने मित्र न्यायाधीशों के एक से अधिक बार यह स्वीकार करने का आमंत्रण देकर अनुच्छेद 200 का दुरुपयोग किए जाने की संभावना हो सकती है। मैं, इसलिए श्री कपूर के इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ कि राष्ट्रपति से सहमति लेने के बाद ही आमंत्रण भेजे जाने चाहिएं।

श्री जसपतराय कपूर: क्या मैं यह जान सकता हूँ कि 'विशेषाधिकार' शब्द की व्याख्या करने का कार्य संसद पर छोड़ दिए जाने की मंशा है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: इसे परिभाषित किया जा सकता है। इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि संसद को उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों दोनों को ही शासित करने वाले न्यायपालिका अधिनियम पारित करने पड़ेंगे तथा उसके अन्दर विशेषाधिकार शब्द का निर्धारण और परिभाषा तय की जा सकती है।

श्री जसपतराय कपूर: लेकिन कार्य पर वापस बुलाये गये न्यायाधीशों तथा स्थायी न्यायाधीशों के विशेषाधिकार समान ही रहेंगे। अनुच्छेद 200 में तो यही कहा गया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: जी हाँ, लेकिन विशेषाधिकार का अर्थ पूरा वेतन नहीं है।

माननीय सभापति: श्री जसपतराय कपूर द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 89 को डॉ. अम्बेडकर स्वीकार कर चुके हैं। मैं अब इस पर मत लूँगा।

''कि अनुच्छेद 200 में 'किसी समय' शब्दों के बाद 'राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से' शब्द अन्त:स्थापित किए जाएँ।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[(डॉ. अम्बेडकर का मूल संशोधन भी स्वीकृत हुआ और अनुच्छेद 200 यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद २०२

***डॉ. बख्शी टेक चन्द:** मुझे आशा है कि मेरे द्वारा प्रस्तुत संशोधन को डॉ. अम्बेडकर स्वीकार करेंगे और अनुच्छेद यथासंशोधित रूप में सभा द्वारा पारित किया जायेगा।

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 697

माननीय सभापतिः डॉ. अम्बेडकर, क्या आप संशोधन संख्या 2663 प्रस्तुत करना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः नहीं, महोदय, मैं बख्शी टेक चन्द का संशोधन स्वीकार करता हूँ। मेरे विचार से कोई जबाव आवश्यक नहीं है।

श्री एच.वी. कामतः 'और' शब्द के स्थान पर 'अथवा' शब्द को प्रतिस्थापित करने के लिए संशोधन प्रस्तुत किया गया है।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः अनुच्छेद की विषय-वस्तु पर कोई अन्तर नहीं पड़ता।

श्री एच.वी. कामतः इसका अर्थ पर फर्क पड़ता है।

(डॉ. बख्शी टेक चंद का संशोधन)

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2661 के संदर्भ में, अनुच्छेद 202 के खण्ड (1) में, 'अथवा' रिट के स्वरूप में आदेशों शब्दों के स्थान पर 'आदेशों अथवा रिटों जिनमें रिट के स्वरूप वाले आदेश शामिल हैं'' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[(अनुच्छेद 202, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद २०३

डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः महोदय, मैं चाहता हूँ कि अनुच्छेद 203 स्थगित रखा जाये।

माननीय सभापतिः अनुच्छेद 203 स्थगित रखा जाता है।

* * * * *

अनुच्छेद २०४

***डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँः

''कि अनुच्छेद 204 के स्पष्टीकरण का लोप किया जाए।''

महोदय, यह अनावश्यक है।

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 699

****श्री ताजमल हुसैनः** डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन बिल्कुल सही है। मैं संशोधन का समर्थन करता हूँ।

माननीय सभापतिः हम सभा विसर्जित करने से पहले इस अनुच्छेद से संबंधित कार्य को पूरा करा लेना चाहते हैं। बारह बज चुके हैं।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मुझे खेद है कि मुझे 12 बजे केबिनेट की बैठक में भाग लेने जाना है।

माननीय सभापतिः फिर मैं नहीं समझता कि इसके पक्ष या विपक्ष में बहुत कुछ कहा जाना बाकी है। जो भी कहा जा सकता था, कह दिया गया है। अब और भाषण नहीं होगा।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मेरे मित्र श्री भारती द्वारा की गई समुक्तियों के संबंध में।

माननीय एच.वी. कामतः महोदय, आपने मुझे बोलने के लिए बुलाया है। मैं दो मिनट से अधिक समय नहीं लूँगा। क्या मैं अभी बोलूँ या कल?

माननीय सभापतिः कल।

* * * * *

#माननीय सभापतिः अब हम अनुच्छेद 204 पर चर्चा करेंगे।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई-जनरल): महोदय, मैं अनुच्छेद 204 में एक संशोधन प्रस्तुत करना चाहता हूँ। मैंने कहा था कि मैं स्थिति पर विचार करूँगा। मैंने इस पर विचार किया है और मैं यह संशोधन प्रस्तुत करना चाहता हूँ। महोदय, आपकी अनुमति से मैं प्रस्ताव करता हूँ कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2674 के संदर्भ में अनुच्छेद 204 के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाएः

कुछ मामलों का उच्च न्यायालय को अंतरण

204 यदि उच्च न्यायालय इस बात से संतुष्ट हो जाता है कि उसके अधीनस्थ किसी न्यायालय में लंबित किसी मामले में इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्विलित है जिसका अवधारण मामले के निपटारे के लिए आवश्यक है तो वह उस मामले को अपने पास मंगवा लेगा, और

(क) मामले को स्वयं निपटा सकेगा, या

** सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 701

\# सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 703-04

(ख)उक्त विधि के प्रश्न का अवधारण कर सकेगा और उस मामले को ऐसे प्रश्न परनिर्णय की प्रतिलिपि सहित उस न्यायालय को, जिससे मामला इस प्रकार मंगवा लिया गया है, लौटा सकेगा और उक्त न्यायालय उसके प्राप्त होने पर उस मामले को ऐसे निर्णय के अनुरूप निपटाने के लिए आगे कार्यवाही करेगा।

यह संशोधन है। महोदय, यदि आप चाहें तो इसके बारे में मैं अभी कुछ बोलूँ। लेकिन मैं अंत में अपनी टिप्पणी देना चाहूँगा ताकि दो बार बोलने में जो समय लगे, उसे बचाया जा सके।

माननीय सभापतिः जैसा आप उचित समझें।

* * * * *

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः__ महोदय, मैं नहीं समझता कि मैंने जो संशोधन प्रस्तुत किया है उस पर कोई निर्णय लेने के लिए काफी लंबी चर्चा की कोई जरूरत है। सभा को स्मरण होगा कि कल जब हम लोग अनुच्छेद 204 के बारे में चर्चा कर रहे थे उस समय मेरे मित्र श्री भारती ने एक प्रश्न उठाया था जोकि अनुच्छेद 204 के अंतिम वाक्य अर्थात् कि उच्च न्यायालय स्वयं को मुकदमा मंगएगा और उसका निपटारा करेगा, से संबंधित था। श्री भारती ने जो प्रश्न उठाया वह मेरे विचार से काफी तर्कसंगत था, वह इस प्रकार था। उच्च न्यायालय को पूरे मुकदमें की सुनवाई करने की जरूरत क्यों होनी चाहिए जबकि अनुच्छेद 204 के मुख्य भाग में सिर्फ यही आवश्यकता दर्शाई गई है कि उसे संविधान की व्याख्या की दृष्टि से कानून की विषय-वस्तु से संबंधित प्रश्न का ही निपटारा करना चाहिए। उनका यह कहना था कि किसी भी वाद में बहुत सारे प्रश्न अंर्तग्रस्त हो सकते हैं। उनमें से एक प्रश्न इस संविधान की व्याख्या के दृष्टिगत कानून की विषय-वस्तु से संबंधित प्रश्न हो सकता है। दूसरा प्रश्न संसद द्वारा बनाये गये साधारण कानून की व्याख्या से संबंधित प्रश्न हो सकता है। यदि इस प्रकार का कोई मुकदमा हो जिसका मिला-जुला स्वरूप हो, जिसमें संविधान की व्याख्या से संबंधित मुद्दे के साथ-साथ साधारण कानून की व्याख्या से संबंधित अन्य मुद्दे अंतर्ग्रस्त हो सकते हैं जबकि कानून की व्याख्या से संबंधित प्रश्न पर निर्णय लेने तथा फैसला सुनाने की शक्ति न्यायालय को दिया जाना सही हो सकता है लेकिन फिर उच्च न्यायालय को पूरे मामले की सुनवाई करने तथा केवल संविधान की व्याख्या से संबंधित मुद्दे पर ही नहीं बल्कि साधारण कानून की व्याख्या से संबंधित दूसरे मुद्दे पर ही फैसला करने की जरूरत क्यों होनी चाहिए? जैसा कि मैं बता चुका हूँ कि वह एक बड़ा ही महत्वपूर्ण प्रश्न था और जब मैंने उनका तर्क सुना तो मैंने इसकी शक्ति को महसूस किया और इसीलिए

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 8 जून, 1949, पृ. 716-19

मैंने इस अनुच्छेद को स्थगित रखने की आपसे अनुमति मांगी।

यदि मैं कहूँ कि जब हम अनुच्छेद 121 पर चर्चा कर रहे थे तब मेरे मित्र श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर ने ऐसा ही प्रश्न किया था जोकि उन मामलों से संबंधित था जिन पर उच्चतम न्यायालय में अपील की जाती है और उनका भी मिला-जुला स्वरूप था अर्थात् उनमें वह मामले भी हैं जिनमें संवैधानिक कानून से संबंधित प्रश्न अंतर्ग्रस्त होते हैं और साथ ही संसद द्वारा बनाए गए साधारण कानून व्याख्या से संबंधित प्रश्न भी अंतर्ग्रस्त होते हैं। मूल-प्रारूप के अनुसार इसमें यह उपबंध किया गया था कि उन सभी मामलों में जिनमें संवैधानिक कानून की व्याख्या से संबंधित कोई मुद्दा शामिल हो, तो उसमें की गई अपील पर निर्णय पाँच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा किया जाना चाहिए। श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर ने यह प्रश्न उठाया था कि कोई पक्ष केवल बदमाशी की दृष्टि से पांच न्यायाधीशों की पीठ का लाभ लेने के उद्देश्य से अपनी अपील में संवैधानिक कानून की व्याख्या से संबंधित प्रश्न का सहारा ले सकता है जोकि अंततः गलत पाया जाएगा क्योंकि उसमें कोई सार नहीं होगा। उच्चतम न्यायालय के पाँच न्यायधीश किसी अपील जिसमें वस्तुतः संवैधानिक कानून की व्याख्या का कोई प्रश्न अंतर्ग्रस्त नहीं है, का निपटारा करने में अपना समय क्यों बरबाद करे। सभा को स्मरण होगा कि उनके तर्क को स्वीकार किया गया था और तद्नुसार उपबंध किया गया था। यदि सभा के पास चौथे सप्ताह के संशोधन की सूची संख्या 1, संशोधन 43 से संबंधित पत्र हो तो उसमें यह देखा जा सकता है कि हमने उस समय एक परंतुक लगाया था जिसमें यह कहा गया है कि इस प्रकार के मामले में जहाँ कोई अपील उच्च न्यायालय में आती है जिसमें कानून की व्याख्या से संबंधित प्रश्न अंतर्ग्रस्त न होकर अन्य प्रश्न अंतर्ग्रस्त हों, तो ऐसी अपील उच्चतम न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों के अधीन गठित साधारण पीठ के पास भेजी जानी चाहिए। मैं नहीं जानता कि इसमें दो न्यायाधीशों या तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा अपील सुनने के बाद यदि वह विशेष पीठ यह प्रमाणित करती है कि इसमें तथ्यात्मक दृष्टि से संविधान की व्याख्या से संबंधित मूल प्रश्न अंतर्विष्ट हैं तभी और केवल तभी अपील पाँच न्यायाधीशों की पीठ को सौंपी जा सकती है। फिर भी पाँच न्यायाधीशों की वह पीठ जिसे इस प्रकार की कोई अपील सौंपी जाएगी केवल संवैधानिक मुद्दों पर निर्णय देगी और किसी अन्य मुद्दमों पर नहीं। संवैधानिक मुद्दों पर निर्णय लेने के बाद न्यायाधीश वह निर्देश देंगे कि उस मुकदमे को निपटाने के लिए दो या तीन न्यायाधीशों की उच्चतम न्यायालय की मूल-पीठ के पास वापस भेजा जाए।

मेरा पहला निवेदन यह है कि अनुच्छेद 204 में यह संशोधन जिसे आप मैंने प्रातःकाल प्रस्तुत किया है करने के मामले में हम लोग संशोधन संख्या 42 में अंतर्विष्ट अनुच्छेद 121 के खंड (2क) के परंतुक की विषय-वस्तु को शामिल करने से अधिक कुछ भी नहीं कर रहे हैं। यहां भी हमने यह कहा है कि उच्च न्यायालय, यदि संतुष्ट हो, मामले

को स्वयं सुन सकता है, संवैधानिक कानून से संबंधित मुद्दे पर निर्णय दे सकता है और संसद द्वारा बनाए गए साधारण कानून की व्याख्या से संबंधित अन्य मुद्दों का निपटारा करने हेतु मुकदमे को अधीनस्थ न्यायाधीश के पास वापस भेज सकता है। मैं नहीं समझता कि हम लोग उच्चतम न्यायालय से संबंधित मामले में जो कुछ कर चुके हैं उसकी तुलना में कुछ भी नया, अलग या असाधारण उपबंध करने जा रहे हैं। इसीलिए मेरा निवेदन है कि यदि हम अनुच्छेद 121 के खण्ड (2क) के परंतुक को स्वीकार कर लेते हैं, जैसा कि हम पहले कर चुके हैं, तो सभा कोई बड़ी गंभीर भूल नहीं करने जा रही है या बहुत अलग हटकर कोई कार्य नहीं कर रही है.....

श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यरः महोदय, मैं इस बारे में स्पष्टीकरण चाहता हूँ और आपके प्रति बहुत ही आभार महसूस करूँगा यदि आपका यह विचार है कि अपीलीय अवस्था में उठे किसी मुद्दे तथा प्रथम न्यायालय में लंबित किसी मुकदमे के दौरान उठाए गए मुद्दे के बीच कोई भेद नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मैं तो केवल संशोधन की सामान्य संरचना के बारे में चर्चा कर रहा हूँ। मेरा यह कहना है कि मैंने जो संशोधन प्रस्तुत किया है वह उसी परंतुक के समतुल्य है जो हम अनुच्छेद 121 के खण्ड (2क) के मामले में जोड़ चुके हैं इसीलिए मेरा यह कहना है कि हम जो कुछ पहले कर चुके हैं, यह मामला उससे बहुत अलग हटकर नहीं है।

फिर दो प्रश्न उठाए गए हैं। एक तो निर्णय शब्द के प्रयोग के संबंध में है। यह कहा गया है कि 'निर्णय शब्द' की अलग तरीके से व्याख्या की गई है और वह पक्ष जिसके मामले को उच्च न्यायालय ने संवैधानिक मुद्दे का निर्धारण करने के प्रयोजन से अपने पास मंगवाया हो उच्चतम न्यायालय ने उस मामले को ले जाने की स्थिति में नहीं होगा क्योंकि अनुच्छेद 110 के अधीन हम यह कह चुके हैं कि उच्चतम न्यायालय में अपील तभी की जा सकेगी जब आदेश दिया जा चुका हो। मुद्दा यह है कि निर्णय को अनुच्छेद 110 के अर्थ के अनुरूप अथवा उसे अंतिम आदेश नहीं माना जा सकता। खैर, उस विशेष अर्थ में अनुच्छेद 110 में प्रयुक्त शब्द 'निर्णय' के उपरांत एक अपील उच्चतम न्यायालय में की जा सकेगी, वैयक्तिक तौर पर मैं इस बात को नहीं समझ पा रहा हूँ कि इस संशोधन में 'निर्णय' शब्द का प्रयोग किए जाने से उसी प्रकार की व्याख्या क्यों नहीं हो सकती? लेकिन यदि वह तर्क सही है तो मेरे विचार से 'जजमेंट' शब्द के स्थान पर 'डिसीजन' शब्द का प्रयोग करके इसे असानी से सुधारा जा सकता है और फिर इस प्रकार का एक स्पष्टीकरण जोड़ा जा सकता है कि 'निर्णय को अनुच्छेद 110 के प्रयोजनार्थ अंतिम आदेश के रूप में माना जाएगा।' मैं नहीं समझता कि इस कठिनाई से नहीं बचा जा सकता।

जहाँ तक अपील किए जाने का संबंध है, यह निश्चय ही उस पक्ष पर निर्भर करेगा कि वह क्या चाहता है, जिसके मुकदमे को विचार के लिए लाया गया है। संविधान की व्याख्या से संबंधित मुद्दे पर निर्णय देने के उद्देश्य से लाये गए मामले पर उच्च न्यायालय द्वारा एक बार निर्णय दे दिए जाने के पश्चात् मामले का पक्षकार सीधे उच्चतम न्यायालय जा सकता है और उस प्रश्न पर अन्तिम निर्णय प्राप्त कर सकता है या फिर वह तब तक प्रतीक्षा कर सकता है जब तक अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा सभी मुद्दों पर निर्णय नहीं सुना दिया जाये। उन विशेष मुद्दों पर तथ्यात्मक निष्कर्षों पर उच्च न्यायालय के माध्यम से अपील पहुँचती है और उसके बाद उस मामले को उच्चतम न्यायालय में लाया जा सकता है। यदि संविधान की व्याख्या से संबंधित मुद्दों और प्रारंभिक मुद्दों की स्थिति एक समान हो, तो हम इसके पक्षकार को किसी भी प्रक्रिया से हम बांधना नहीं चाहेंगे ताकि जब निर्णय दिया जाये, तो पूरे मामले पर निर्णय आए। मुझे इस बारे में तनिक भी संदेह नहीं है कि प्रभावित पक्षकार शेष मामलों का निपटारा करने के लिए अधीनस्थ न्यायाधीश के पास जाने की बजाय तत्काल उच्चतम न्यायालय जाने तथा संविधान की व्याख्या कराने को प्राथमिकता देगा। मुझे इसमें कोई कठिनाई नज़र नहीं आती।

अब, दूसरा प्रश्न यह उठाया गया है, मेरे मित्र श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर ने वहाँ बैठे-बैठे कुछ कहा है। मैं उनकी बात नहीं सुन सका हूँ। लेकिन उन्होंने व्यक्तिगत स्तर पर की गई बातचीत के दौरान यह उल्लेख किया था कि उच्च न्यायालय के लिए संविधान की व्याख्या से संबंधित मुद्दे तथा अन्य मुद्दों को अलग कर पाना कठिन कार्य होगा और यह हो सकता है कि अन्य मुद्दों की व्याख्या करने तथा संविधान की व्याख्या से संबंधित मुद्दों की व्याख्या करने के लिए उच्च न्यायालय अन्य मुद्दों पर भी एक साथ विचार करने को प्राथमिकता दे। यह भी सुझाव दिया गया कि मान लें कि मामला वास्तव में छोटा-सा हो, लेकिन उसमें कानून की व्याख्या का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो, तो फिर उच्च न्यायालय को इतने छोटे से मामले को अधीनस्थ न्यायालय के पास वापस भेजने की बजाय उसे स्वयं ही निपटाने की अनुमति क्यों नहीं मिलनी चाहिए? अतः इन दोनों ही प्रकार की आकस्मिक स्थितियों से निपटने के लिए यह संशोधन उच्च न्यायालय को स्वयं ही मामले को निपटाने की शक्ति प्रदान करता है। मैं नहीं समझता कि इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए ये पर्याप्त नहीं होंगे। इसलिए, मैं यह बताना चाहता हूँ कि संशोधन का उद्देश्य वही है जो हमारी मंशा है अर्थात् उच्च न्यायालय जब पूरे मामले पर विचार कर रहा है, तो उस पर सभी मुद्दों पर निर्णय देने का भार नहीं होना चाहिए, उसे संविधान की व्याख्या से संबंधित विशिष्ट प्रश्न से जुड़े विशेष मुद्दे पर निर्णय देने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। इसमें कोई संदेह नहीं है कि नागरिक प्रक्रिया

संहिता की धारा 24 में अन्तर्विष्ट शक्ति उच्च न्यायालय को इस बात की अनुमति देती है कि वह किसी भी मामले को मंगवाकर उस पर अपने मत का निर्धारण करे। लेकिन धारा 24 के मामले में कठिनाई यह है कि उसे पूरे मामले पर विचार करना होगा। उसे आंशिक रूप से मामलों पर विचार करने की शक्ति नहीं है। जबकि हमारा उद्देश्य यह है कि उच्च न्यायालय को किसी मामले के उस भाग पर सुनवाई करने की अनुमति दी जानी चाहिए जिसमें संविधान की व्याख्या का संदर्भ हो।

इसलिए, मेरा यह कहना है कि जब तक आप विशिष्ट उपबंध नहीं करेंगे जैसा कि अभी अनुच्छेद 204 के अधीन हम कर रहे हैं तो उच्च न्यायालय को पूरे मामले पर विचार करना होगा यदि वह इस संविधान की व्याख्या से संबंधित किसी प्रश्न पर निर्णय देना चाहता है।

मैं एक बात और बताना चाहता हूँ। आप सबको यह याद होगा कि कल और आज प्रात:काल के बीच समय नहीं मिल पाया है कि खासकर इस संशोधन के शब्दों पर बारीकी से नजर डाली जा सके। मैं यह संशोधन इसलिए प्रस्तुत कर रहा हूँ क्योंकि मेरे विचार से कतिपय छोटी-मोटी त्रुटियों या विसंगतियों के कारण अनुच्छेदों को स्थगित रखना बहुत गलत है। मैं इस संशोधन को प्रस्तुत करते हुए यह कहना चाहता हूँ कि मैं चाहूँगा कि प्रारूप समिति को यहाँ उल्लिखित त्रुटियों को दूर करने के लिए उसे ऐसे परिवर्तन करने का अवसर दिया जाये जो वह जरूरी समझे और इसे सभा द्वारा पारित अन्य अनुच्छेदों की तर्ज पर लाया जा सके।

माननीय सभापति: मैं अब प्रो. शाह के संशोधन संख्या 2674 पर मत लूँगा।

श्री एच.वी. कामत: मैंने सोचा कि डॉ. अम्बेडकर के संशोधन ने इस संशोधन को अधिक्रमित कर दिया।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं सम्पूर्ण अनुच्छेद को प्रतिस्थापित कर रहा हूँ। आप संशोधन संख्या 2677 वापस ले सकते हैं।

माननीय सभापति: आपका संशोधन पूरे अनुच्छेद के प्रतिस्थापन के लिए है। मैं अब आपके संशोधन पर मत लूँगा।

प्रस्ताव है:

कुछ मामलों का उच्च न्यायालय को अंतरण

204 यदि उच्च न्यायालय संतुष्ट हो जाता है कि उसके अधीनस्थ किसी न्यायालय में लंबित किसी मामले में इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्ग्रस्त है जिसका अवधारण मामले के निपटारे के लिए आवश्यक है तो वह उस मामले को अपने पास मंगवा लेगा; और

(क) मामले को स्वयं निपटा सकेगा, या

(ख) उक्त विधि के प्रश्न का अवधारण कर सकेगा और उस मामले को ऐसे प्रश्न पर निर्णय की प्रतिलिपि सहित उस न्यायालय को, जिससे मामला इस प्रकार मंगा लिया गया है, लौटा सकेगा और उक्त न्यायालय उसके प्राप्त होने पर उस मामले को ऐसे निर्णय के अनुरूप निपटाने के लिए आगे कार्यवाही करेगा।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

श्री सभापति: अब यह मूल अनुच्छेद हो गया है। इसने प्रस्तुत सभी संशोधनों का स्थान ले लिया है।

प्रस्ताव है:-

''कि अनुच्छेद 204, यथासंशोधित रूप में, संविधान का भाग बने।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 204, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।

[(डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद 204, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद २०५

माननीय सभापति: अब सभा अनुच्छेद 205 पर विचार करेगी। इसके सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर का एक संशोधन है अर्थात् संशोधन संख्या 2676।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान् मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूँ कि:

''अनुच्छेद 205 के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:-

उच्च न्यायालयों के पदाधिकारी, सेवक और व्यय।

205 (1) उच्च न्यायालय के पदाधिकारियों और सेवकों की नियुक्तियाँ न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति अथवा उसके द्वारा निर्दिष्ट उस न्यायालय का अन्य न्यायाधीश या पदाधिकारी करेगा:

परन्तु उस राज्य का राज्यपाल जिसमें न्यायालय का मुख्य स्थान है, नियम द्वारा यह अपेक्षा कर सकेगा कि ऐसी किन्हीं अवस्थाओं में, जैसी कि नियम में उल्लिखित हों, किसी ऐसे व्यक्ति को, जो पहले ही न्यायालय में लगा हुआ नहीं है, न्यायालय से सम्बन्धित किसी पद पर राज लोक-सेवा-आयोग से परामर्श किये बिना नियुक्त नहीं किया जायेगा।

(2)राज्य के विधानमण्डल द्वारा निर्मित विधि के उपबन्धों के अधीन रहते हुए उच्च

न्यायालय के पदाधिकारियों और सेवकों की सेवा की शर्तें ऐसी होंगी जैसा कि ऐसे न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति अथवा उस न्यायालय का ऐसा न्यायाधीश या पदाधिकारी जिसे मुख्य न्यायाधिपति ने उस प्रयोजन के लिये नियम बनाने को प्राधिकृत किया है, नियमों द्वारा विहित करे:–

परन्तु इन पदाधिकारियों और सेवकों को, या के बारे में दिये जाने वाले वेतन, भत्ते और निवृत्ति वेतन न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति द्वारा उस राज्य के राज्यपाल से परामर्श करके, जिसमें उच्च न्यायालय का मुख्य स्थान है, निश्चित किये जायेंगे।

(3) उच्च न्यायालय के प्रशासकीय व्यय जिनके अंतर्गत उस न्यायालय के पदाधिकारियों और सेवकों को दिये जाने वाले सभी वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, और न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन और भत्ते भी हैं, राज्य के राजस्व पर भारित होंगे तथा उस न्यायालय द्वारा ली गई फीसें और अन्य धन उस राजस्व का भाग होंगी।

माननीय सभापति: एक संशोधन श्री कपूर का भी है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, इस संशोधन पर मेरा एक संशोधन है। यदि आपकी अनुमति हो तो मैं उसे प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

माननीय सभापति: आप उसे प्रस्तुत कर सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मेरा प्रस्ताव है कि:

''संशोधन की सूची के संशोधन संख्या 2676 के सम्बन्ध में, प्रस्तावित अनुच्छेद 205 के खण्ड (2) के परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित परन्तुक रखा जाये:–

(परन्तु इस खण्ड के अधीन बनाये गये नियमों के लिये, जहाँ तक कि वेतनों, भत्तों, छुट्टी या पेंशन से सम्बद्ध है, उस राज्य के राज्यपाल के जिसमें उच्च न्यायालय का मुख्य स्थान है, अनुमोदन की अपेक्षा होगी।)

श्रीमान्, ये उपबंध उच्चतम न्यायालय सम्बन्धी उपबन्धों के समान ही है।

माननीय सभापति: श्री कपूर इससे आपके संशोधन का आशय पूरा हो जाता है।

श्री जसपतराय कपूर (संयुक्त प्रान्त: जनरल): जी हाँ, श्रीमान्, इससे अब मेरे संशोधन की आवश्यकता नहीं रह गई है।

[डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ। संशोधित रूप में अनुच्छेद 205 संविधान का भाग बन गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद २०६

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः महोदय में प्रस्ताव करता हूँ कि इस अनुच्छेद का विलोप कर दिया जाये।

[अनुच्छेद 206 का संविधान से विलोप कर दिया गया।]

* * * * *

अनुच्छेद ९०-(जारी)

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि अब वित्त-सम्बन्धी अनुच्छेद लिया जाए। हम पहले अनुच्छेद 90 पर विचार-विमर्श कर रहे थे और उसे अब ले सकते हैं।

माननीय सभापतिः जिस दिन हमने इस अनुच्छेद पर विचार-विमर्श स्थगित किया था उस दिन इसके सम्बन्ध में कई संशोधन थे। वे संशोधन 3, 4 और 6 हैं जो डॉ. अम्बेडकर के नाम से हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ किः

''अनुच्छेद 90 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (ग) और (घ) के स्थान पर निम्नलिखित उप-खण्ड रखे जायें:

[(ग) भारत की संचित-निधि अथवा आकस्मिकता निधि की अभिरक्षा, ऐसी किसी निधि में धन डालना अथवा उसमें से धन निकालनाः

(घ) भारत की संचित-निधि में से धन का विनियोग;,''

श्रीमान्, संशोधन संख्या 4 का आशय संशोधन संख्या 3 से हो जाता है और इसलिये मैं उसे उपस्थित नहीं कर रहा हूँ।

श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव भी प्रस्तुत करता हूँ किः

''अनुच्छेद 90 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (घ) और (ड.) में भारत का राजस्व शब्दों के स्थान पर भारत की संचित-निधि शब्द रखे जायें।''

श्रीमान्, इससे पण्डित कुंजरू के संशोधन संख्या (5) का आशय भी पूरा हो जाता है और इसलिये उसकी अब आवश्यकता नहीं रह जाती।

श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं इस अवसर पर एक परिचयात्मक भाषण देना चाहता हूँ ताकि सभा उन कतिपय परिवर्तनों से परिचित हो जाये जिनका सन्निवेश इन संशोधनों में तो नहीं है किन्तु जिनका सम्बन्ध उस वित्त सम्बन्धी प्रक्रिया से है, जिसका अनुसरण वित्त-सम्बन्धी विषयों में करना होगा।

इस विषय के सम्बन्ध में जिन विभिन्न संशोधनों का मैंने प्रस्ताव किया है उनमें वे परिवर्तन होंगे। पहला परिवर्तन यह है कि बिना किसी विधि को प्रवर्तन में लाये हुए कोई कर नहीं लगाया जायेगा। यदि लोगों पर कोई कर लगाना होगा तो इसके लिये यह आवश्यक होगा कि उसकी संपुष्टि किसी विधि द्वारा हो। इस प्रकार का उपबन्ध अनुच्छेद 248 में है, जिस पर आगे चल कर विचार किया जायेगा। सभा के सम्मुख पूर्ण चित्र प्रस्तुत करने के लिये ही मैंने उसकी चर्चा की है। संविधान के वर्तमान मसौदे में इस प्रकार का कोई उपबन्ध नहीं था। दूसरी नई बात संचित-निधि का उल्लेख है। यह अनुच्छेद 248 (क) द्वारा किया जायेगा और इस पर आगे चल कर विचार होगा। सम्भव है संसद एक आकस्मिकता निधि को भी स्थापित करना चाहे और इसलिये हम उसके सम्बन्ध में भी उपबन्ध रखना चाहते हैं। वे उपबन्ध नवीन अनुच्छेद 248-(ख) में रखे जायेंगे।

मेरे विचार से प्रथम उपबन्ध की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है, अर्थात् इसकी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है कि कोई कर बिना विधि को प्रवर्तन में लाये हुए नहीं लगाया जायेगा। यह बहुत ही उपयुक्त उपबन्ध है। वास्तव में बिना संसद की स्वीकृति प्राप्त किये कार्यपालिका के पास लोगों पर कर लगाने की शक्ति नहीं होनी चाहिए। जहाँ तक संचित निधि का सम्बन्ध है, यह कोई नया विचार नहीं है, केवल शब्दावली नई है। वर्तमान शब्दावली इस प्रकार है-''भारत के गवर्नर जनरल का लोक-लेखा''। यदि माननीय सदस्य ''कम्पाइलेशन ऑफ़ ट्रेजरी रूल्स, अंक 1'' नाम की पुस्तक को देखें तो उन्हें ज्ञात होगा कि ''संचित-निधि'' को भी ''लोक-लेखा'' कहा गया है। मैं उसमें दी हुई परिभाषा को पढ़ कर सुनाता हूँ: ''केन्द्रीय सरकार के लोक-लेखे से अभिप्रेत है संचित निधि, जिसमें अधिनियम की धारा 136 में परिभाषित गवर्नर जनरल का राजस्व-धन जमा किया जाता है और रखा जाता है और जिससे धन निकाल कर सरकार व्यय करती है अथवा उसकी ओर से व्यय किया जाता है।

इसलिये ''संचित-निधि'' शब्दों के प्रयोग से केवल नाम में परिवर्तन हुआ है, क्योंकि इससे केन्द्रीय सरकार का लोक-लेखा ही अभिप्रेत है।

संचित-निधि की कल्पना एक महत्वपूर्ण धारणा पर आधारित है। इस सभा के सदस्यों को यह विदित ही होगा कि इंगलैंड में संचित-निधि को स्थापित करने का विचार प्रथम बार 1777 में उठा था। उसे स्थापित करने का उद्देश्य क्या था, इसे मैं बताऊँगा। आरम्भ में संसद करों के लिये स्वीकृति देती थी और उन्हें सम्राट् लगाता था। वही करों को संगृहित करता था और जिस काम के लिये भी उचित समझता था, व्यय करता था। प्राय: यह होता था कि सम्राट् किन्हीं कामों के लिये कर लगाने की मांग करता था किन्तु अन्य कामों में उसे व्यय कर देता था। करों के लिए स्वीकृति प्रदान करने के

पश्चात् संसद का उन पर कुछ भी नियंत्रण नहीं रह जाता था। कुछ समय के पश्चात् संसद ने एक भिन्न प्रक्रिया का अनुसरण किया अर्थात् वह कर लगाने लगी और उसका विनियोग एक विशेष कार्य के लिये करने लगी। इसका परिणाम यह हुआ कि जब बजट को स्वीकार करने का समय आता था तो कुछ भी धन शेष नहीं रह जाता था, क्योंकि विभिन्न करों का विनियोग विभिन्न कार्यों के लिये पहले ही से हो जाता था। इस प्रकार बजट में उल्लिखित सामान्य कार्यों के लिये कुछ भी धन शेष नहीं रह जाता था। इस प्रकार विभिन्न करों के विभिन्न कार्यो के लिये विनियोग से जो धन आपका हो जाता था उसे बचाने के लिये इसकी आवश्यकता दिखाई दी कि करों से अथवा अन्य प्रकार से जो राजस्व प्राप्त हो उसका विशेष कार्यो के लिये विनियोग न करके उसे एक निधि में संचित किया जाये ताकि बजट पर निर्णय करते समय संसद को एक निधि प्राप्त हो जिसे वह व्यय कर सके। अर्थात् ऐसी व्यवस्था करने के लिये कि संसद-निर्मित विधि द्वारा विशेष कार्यो में ही करों से प्राप्तत सब धन बिना लोगों की सामान्य आवश्यकताओं का ध्यान रखे हुए ही व्यय न हो, यह आवश्यक है कि एक संचित-निधि स्थापित की जाये। इसलिये मुझे आशा है कि यह सभा संचित निधि सम्बन्धी उपबन्ध स्वीकार करने में किसी कठिनाई का अनुभव नहीं करेगी क्योंकि उसे स्थापित करना बहुत आवश्यक है। मेरा तो यह कहना है कि कोई भी संविधान ऐसा नहीं है, जिसमें संचित-निधि के सम्बन्ध में उपबन्ध न हों। यदि आप आस्ट्रेलिया, कनाडा, दक्षिण अफ्रीका, आयरलैण्ड तथा अन्य देशों के संविधानों की परस्पर तुलना करेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि उनमें से प्रत्येक में इस आशय का एक उपबन्ध है कि करों से अथवा अन्य प्रकार संगृहीत सब निधियों का समावेश संचित निधि में होगा। इसलिये हम कोई नई बात करने नहीं जा रहे हैं।

इसके अतिरिक्त, एक अन्य उपबन्ध हम राष्ट्रपति द्वारा प्रमाणित अनुसूची के लिये न रख कर विनियोग अधिनियम के लिये रख रहे हैं। यदि माननीय सदस्य संविधान के मसौदे के अनुच्छेद 94 को देखेंगे तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि वर्तमान प्रक्रिया क्या है। इस समय इस प्रकार कार्य किया जाता है। राष्ट्रपति अर्थात् शासनारूढ़ सरकार अनुच्छेद 92 के अधीन संसद के सम्मुख एक वित्त-विषय विवरण विशेष रूप से उपस्थित करती है। यह विशेष रूप का वर्णन अनुच्छेद 94 के उप-खण्ड (2) में है। व्यय दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। एक श्रेणी उस व्यय की होती है जो भारत-राजस्व पर भारित होता है और एक श्रेणी उस व्यय की होती है जो भारत-राजस्व पर अर्थात् संचित निधि पर भारित नहीं होता। इसके पश्चात् अनुच्छेद 93 में विहित कार्यप्रणाली के अनुसार कार्य होता है। अनुच्छेद 93 में विहित कार्य-प्रणाली इस प्रकार है। संसद वित्त-विषयक विवरण के एक-एक शीर्षक, एक-एक उप-शीर्षक तथा एक-एक विषय पर विचार करती है और कार्यपालिका द्वारा उपबन्धित धनराशि को स्वीकार करती है

अथवा उसे कम करती है। यह किसी कटौती प्रस्ताव पर आधृत सभा के संकल्प द्वारा किया जाता है। इतना हो जाने पर वर्तमान प्रक्रिया के अधीन अनुच्छेद 94 का अनुसरण किया जाता है अर्थात् राष्ट्रपति यह प्रमाणित करता है कि संसद के सम्मुख जो विभिन्न शीर्षक रखे गये थे, उनके सम्बन्ध में सभा ने क्या उपबन्धित किया है। नवीन उपबन्ध इस प्रकार है कि राष्ट्रपति के प्रमाणीकरण के स्थान पर विधानमण्डल एक समुचित विनियोग अधिनियम स्वीकार करे।

संविधान के मसौदे के अनुच्छेद 94 में विहित उपबन्धों के स्थान पर विनियोग-विधेयक की प्रक्रिया को रखने के पक्ष में यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है। विधानमण्डल प्रदायों पर मत देकर उन्हें स्वीकार करता है और इसलिये यह उचित ही है कि उसने जो कुछ स्वीकार किया है, उसे अधिनियम का रूप दिया जाये। प्रदायों पर मत देकर उन्हें स्वीकार करने का जो कार्य विधानमण्डल ने किया हो, उसका प्रमाणीकरण राष्ट्रपति अर्थात् कार्यपालिका के लिए क्यों छोड़ा जाये? हमें मुख्यत: इसी प्रश्न पर विचार करना है। वित्त के सम्बन्ध में संसद सर्वशक्ति सम्पन्न है क्योंकि अनुच्छेद 93 के उपबन्धों के अधीन बिना संसद की स्वीकृति के धन व्यय नहीं किया जा सकता। यदि किसी शीर्ष के अधीन किसी व्यय को संसद ने स्वीकार किया हो तो उसे प्रमाणित करने के लिए समुचित प्राधिकारी संसद ही है न कि राष्ट्रपति। इसलिये संविधान के इस मसौदे के अनुच्छेद 94 में विहित प्रक्रिया के स्थान में विनियोग अधिनियम की प्रक्रिया रखी जा रही है।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि भारत सरकार के 1935 के अधिनियम में अनुच्छेद 94 का समुचित स्थान था क्योंकि गवर्नर जनरल को इसे प्रमाणित करने का अधिकार था कि वह स्वविवेक से इसका निर्णय करे कि अपने कृत्यों के पालनार्थ उसे कितने धन की आवश्यकता होगी। जिन कृत्यों के सम्बन्ध में गवर्नर जनरल स्वविवेक से धन व्यय करना चाहता था, वे संसद के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत नहीं आते थे। उसे धन-राशि में परिवर्तन करने का अथवा उसे बढ़ाने का अधिकार प्राप्त था। इसलिये यह आवश्यक था कि प्रमाणीकरण के लिये अन्तिम प्राधिकारी गवर्नर जनरल ही हो क्योंकि उसे स्वतंत्र रूप से यह शक्ति प्राप्त थी कि वह अपने विशेष कृत्यों के निर्वहन के लिये आय बजट में अपनी इच्छानुसार उपबन्ध रखे। हमारे नवीन संविधान के अधीन राष्ट्रपति को अपने व्यक्तिगत निर्णय से, अथवा स्वविवेक से, किसी भी कृत्य का निर्वहन नहीं करना होगा। इसलिये कतिपय सेवाओं के व्यय के लिये धन प्रदान करने में उसका कोई हाथ नहीं होगा। इस दशा में नवीन संविधान के अधीन प्रमाणीकरण की प्रक्रिया बिल्कुल अनावश्यक है। मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि जिन देशों में भी संसदीय शासन है, वहाँ अर्थात् कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका और इंग्लैंड में विनियोग-प्रक्रिया प्रयोग में है। मैं यह भी बताना चाहता हूँ कि जब 1935 में भारत सरकार के अधिनियम पर विचार विमर्श हो रहा था तो सैक्रेटरी ऑफ स्टेट ने स्वयं यह प्रस्ताव किया था कि विधानसभा द्वारा स्वीकृत

व्यय का अधिप्रमापन विनियोजन–अधिनियम द्वारा होगा न कि प्रमाणीकरण द्वारा। किन्तु उस समय की भारत सरकार को विनियोजन–अधिनियम का विचार मान्य न हुआ और उसका कारण यह था कि गवर्नर जनरल को अपने कृत्यों के निर्वहन के लिए बजट में धनराशि उपबन्धित करने की शक्ति प्राप्त थी। जैसा कि मैं कह चुका हूँ अन्यथा सैक्रेटरी ऑफ स्टेट स्वयं इस प्रस्ताव के पक्ष में था किन्तु उसके प्रस्ताव को भारत सरकार ने 1935 में अस्वीकार कर दिया। मेरा यह निवेदन है कि अब इस प्रकार के कृत्य को बनाये रखने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इससे कार्यपालिका को धनराशि उपबन्धित करने तथा व्यय करने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। मेरे विचार से हमें अपनी प्रक्रिया को उन सभी देशों की प्रक्रिया के अनुरूप बनाना चाहिये जहां संसद धन–व्यय करने की स्वीकृति प्रदान करने के सम्बन्ध में सर्वशक्ति–सम्पन्न है।

एक अन्य नवीन अनुच्छेद, जो हमने प्रविष्ट किया है, लेखानुदान के सम्बन्ध में है। इसकी व्याख्या करना आवश्यक है कि हमने उसे क्यों प्रविष्ट किया है। इस सम्बन्ध में भी मैं सभा का ध्यान मसौदे के अनुच्छेद 93 की ओर दिलाता हूँ। अनुच्छेद 93 के अधीन किसी भी सेवा के लिये तक तब धन नहीं दिया जा सकता है और न व्यय किया जा सकता है जब तक कि संसद बजट के पूरे विवरण को स्वीकार न कर ले। यदि आप अनुच्छेद 93 को पढ़ेंगे तो देखेंगे कि उसका आशय यही है। बजट को शीर्षो, उपशीर्षो और विषयों के अधीन रखना होता है। संसद को इन शीर्षो, उपशीर्षो और विषयों को स्वीकार करके बजट को स्वीकार करना होता है। बजट को स्वीकार करने का यही अर्थ है। यह सभी को विदित है कि बजट का आकार वृहत् होता है और उसमें 250 करोड़ जैसी धनराशि का विवरण होता है और वह विभिन्न विषयों के अधीन वितरित होता है। यदि अनुच्छेद 93 को वर्तमान रूप में रहने दिया जायेगा, अर्थात् यदि यह उपबन्ध रहने दिया जायेगा कि जब तक संसद पूरे विवरण को स्वीकार न कर ले तब तक किसी प्रकार का धन व्यय नहीं किया जा सकता और यदि यह उपबन्ध भी रहने दिया गया कि प्रत्येक राजकीय वर्ष की समाप्ति के पूर्व बजट स्वीकार कर लिया जाना चाहिये, तो बजट पर विचार–विमर्श के लिये बहुत कम समय रह जायेगा। मुख्यतः इसलिये बहुत कम समय रह जायेगा कि अनुच्छेद 93 के उपबन्धों के अधीन जब तक बजट का पूरा विवरण स्वीकार न कर लिया जाये तब तक धन व्यय नहीं किया जा सकता। इसलिये या तो आप पूरे बजट पर विचार–विमर्श करने के अपने अधिकार को त्याग दीजिये अथवा अनुच्छेद 93 में परिवर्तन कीजिये अथवा अनुच्छेद 93 में अपवादार्थ एक अन्य उपबन्ध रखिये। एक संशोधन द्वारा लेखानुदान की जिसे प्रक्रिया को प्रस्तुत करने का विचार है, उसके अधीन संसद दस वर्ष की सेवाओं पर कुछ समय के लिये, उदाहरणार्थ दो महीने के लिये, धन व्यय करने के लिये कार्यपालिका को एक मुश्त अनुदान के रूप में स्वीकृति प्रदान कर सकेगी ताकि इन दो महीनों में संसद सरकार के बजट

सम्बन्धी तथा वित्त सम्बन्धी उपबन्धों, पर यदि पूर्ण रूप से नहीं तो कम से कम विस्तृत रूप से, विचार कर सके। यदि आप लेखानुदान के लिये, अर्थात् विपक्षी दल के नेता और सरकार के बीच किसी करार के आधार पर दो या तीन महीने के व्यय के लिये कार्यपालिका को दी जाने वाली धनराशि के लिये लेखानुदान अर्थात् एक मुश्त अनुदान के लिये, उपबन्ध नहीं रखेंगे तो आपको बजट पर विचार-विमर्श करने के लिए उतना ही समय मिल सकेगा जितना कि इस समय मिलता है। सभा को स्मरण होगा कि पिछली बार इस सभा के कई सदस्यों की यह धारणा थी कि बजट को स्वीकार करने में बहुत जल्दी दिखाई गई थी और लोगों को विभिन्न विषयों पर विचार-विमर्श करने के लिये सात-आठ दिन से अधिक समय नहीं दिया गया था और मुखबन्ध के साधन का भी उपयोग किया गया था। इसलिये यदि सभा यह चाहती है कि उसे बजट के विवरण पर तथा वित्त सम्बन्धी उपबन्धों पर विचार-विमर्श के लिये अधिक समय मिले तो संविधान में कोई ऐसा उपबन्ध रखना होगा जिसके अधीन वह कार्यपालिका को संचित-निधि से निकाल कर एक मुश्त धन दे सके ताकि वह उसे दो-तीन महीने तक व्यय कर सके और इस बीच सभा बजट के विवरण पर विचार-विमर्श कर सके। चूंकि अनुच्छेद 93 में उपबन्ध बहुत निर्बन्धक है और वह इस कारण कि जब तक बजट के पूरे विवरण को स्वीकार न कर लिया जाये तब तक किसी प्रकार का धन व्यय नहीं किया जा सकता है, इसलिये हमें अनुच्छेद 93 के उपबन्धों के संबंध में कुछ अपवाद रखने होंगे। ये अपवाद ''लेखानुदान-सम्बन्धी'' उपबन्धों को स्थान देकर ही किये जा सकते हैं। संविधान के मसौदे से हमने यही तीन मुख्य परिवर्तन किये हैं। श्रीमान् इन शब्दों के साथ मैं अपने संशोधनों को उपस्थित करता हूँ।

* * * * *

श्री बी.दास: श्रीमान्, मुझे इसकी प्रसन्नता है कि इन संशोधित अनुच्छेदों से पर्याप्त सुरक्षा हो सकेगी और मंत्री चोरी-छिपे व्यर्थ में धन व्यय न कर सकेंगे। मैं इसके लिये डॉ. अम्बेडकर को फिर बधाई देता हूँ।

माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकोल्सराय (आसाम: जनरल): श्रीमान्, बोलने के पूर्व मैं डॉ. अम्बेडकर से कुछ बातों के स्पष्टीकरण के लिये आग्रह करना चाहता हूँ। क्या इस संशोधन के फलस्वरूप भारत सरकार इसके लिये बाध्य हो जाती है कि वह एक निधि स्थापित करे जो संचित-निधि के नाम से कही जाये? अथवा यह संशोधन केवल क्षमता-प्रदायक संशोधन है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: यह निधि स्थापित ही है। केवल उसका नाम बदल दिया गया है।

माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकोल्सराय: तब विधान-मण्डल में विनियोजन अधिनियम

को पारित करने की आवश्यकता होगी और उसे उसी सत्र में पारित करना होगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: जी हां।

माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकोल्सराय: इसमें निःसंदेह समय लगेगा। श्रीमान्, इसे ध्यान में रखते हुए मैं कुछ बातें कहना चाहता हूँ। भारत सरकार के मंत्रालयों द्वारा अथवा प्रान्तीय सरकारों द्वारा जो धन व्यय होता है, अथवा नष्ट होता है उसकी बहुत आलोचना की गई है। मेरे विचार से अनुच्छेद 90 के सिद्धांतों का अनुसरण प्रान्तीय सरकारों को भी करना होगा क्योंकि यही सिद्धांत अनुच्छेद 174 में भी सन्निहित है।

माननीय डॉ.बी.आर. अम्बेडकर: जी हाँ।

* * * * *

माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकोल्सराय: मैं डॉ. अम्बेडकर से पूछन चाहता हूँ कि क्या यही स्थिति है अथवा प्रत्येक प्रान्त को व्यय के लिये धन निकालने के उद्देश्य से विनियोजन अधिनियम को पारित करना बाध्यता होगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: विनियोजन अधिनियम को तो अनिवार्य रूप से पारित करना होगा किन्तु लेखानुदान के सम्बन्ध में प्रत्येक मंत्रिमण्डल को इसकी स्वतंत्रता रहेगी कि वह उनकी मांग करे अथवा न करे। यदि कोई मंत्रिमंडल लेखानुदान के रूप में धन प्राप्त करना चाहे तो वह विधानमण्डल से इसकी मांग कर सकता है।

माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकोल्सराय: यदि आसाम का अथवा किसी प्रान्त का मंत्रिमंडल उसी प्रथा का अनुसरण करना चाहता है, जिसका अनुसरण वह अभी तक करता आया है और राज्यपाल से प्रमाण-पत्र प्राप्त करना चाहता है तो क्या उसे इसकी स्वतंत्रता होगी?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: अब राज्यपाल के प्रमाणपत्र प्राप्त करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

मेरे विचार से श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो कुछ भी कहा है, मैं उससे अलग कुछ नहीं कह सकता। मुझे अनेक संशोधनों पर बहुत कुछ कहना है, इसलिए मुझे अपने विचार सुरक्षित रखने चाहिए क्योंकि मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि वही तर्क फिर दुहराए जायेंगे।

[***(डॉ. अम्बेडकर द्वारा पहले रखा गया संशोधन स्वीकृत हुआ, अन्य अस्वीकृत हुए। यथा संशोधित अनुच्छेद 90 संविधान में जोड़ा गया)***]

कारों की संख्या तख्तियों पर हिन्दी अंक

* * * * *

पंडित बाल कृष्ण शर्मा: मैंने उनसे हमेशा यही अनुरोध किया है कि दिल्ली प्रान्त चारों ओर से ऐसे प्रान्तों से घिरा हुआ है जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा और देवनागरी लिपि को अपनी लिपि घोषित किया है।

माननीय सभापति: शान्ति, शान्ति। आप मुझे जो सूचना देना चाहते हैं, वह मुझे पता है। जैसा कि मैंने कहा है, माननीय सदस्य विशेषाधिकार के प्रश्न पर निर्णय देने के लिए मुझ पर जोर न डालें। ऐसा करना शायद उनके हित में नहीं होगा। यह मामला सरकार को भेज दिया जायेगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई जनरल): विधि का उल्लंघन करने का कोई विशेषाधिकार नहीं है।

* * * * *

अनुच्छेद ९२

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

1. ''कि अनुच्छेद 92 के खण्ड (3) के उप-खण्ड (ख) में 'आय' के स्थान पर 'वेतन' शब्द रख दिया जाये।''

यह वही शब्द है जिसका हम प्राय: प्रयोग करते हैं।

* * * * *

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान मैं प्रस्ताव करता हूँ:

2. ''कि अनुच्छेद 92 के खण्ड (2) के उप-खण्ड (क) और (ख) में 'भारत के राजस्व के स्थान पर 'भारत की संचित निधि' शब्द रखे जायें।''

3. ''कि अनुच्छेद 92 के खण्ड (3) में 'भारत के राजस्व' के स्थान पर 'भारत की संचित निधि' शब्द रखे जायें।''

4. ''कि अनुच्छेद 92 के खण्ड (3) के उप खण्ड (घ) के पश्चात् निम्नलिखित उप खण्ड रखे जायें:

''को देय वेतन भत्ता और पेंशन अथवा भारत के नियंत्रक और लेखा महापरीक्षक के संबंध में''

9 के विषय में मुझे इतना ही कहना है कि सदन ने अनुच्छेद 124 खण्ड (5) पहले पारित कर दिया है, जिसमें विद्यमान संशोधन निहित है। अत: इसे यहाँ रखा गया है, क्योंकि यह अनुमान किया गया कि भारत की संचित निधि पर समस्त मदों को एकत्र कर देना अच्छा रहेगा, इसकी बजाय कि वे संविधान में यत्र-तत्र बिखरी रहें।

[(डॉ. अम्बेडकर के सभी उपरोक्त 4 संशोधन स्वीकृत हुए अन्य रद्द हो गये। यथा संशोधित रूप में अनुच्छेद 92 संविधान में शामिल किया गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद ९३

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ

"कि अनुच्छेद 93 के खण्ड (1) में 'भारत के राजस्व' के स्थान पर 'भारत की संचित निधि' शब्द रखे जायें।"

[(संशोधन स्वीकृत हो गया। अनुच्छेद 93 यथा संशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद ९४

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 94 के स्थान पर, निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:-

'94 (1) लोक सभा द्वारा अनुच्छेद 113 के अधीन अनुदान किये जाने के बाद, यथा शोध विनियोजना बिल भारत की संचित निधि में से संभाल कर के विनियोजन संबंधी विधायक लाभ जाएगा) :

(क) लोक सभा द्वारा इस प्रकार किये गये अनुदानों की, तथा

(ख) भारत की संचित निधि पर भारित, किन्तु संसद के समक्ष पहले रखे गये विवरण में दी हुई राशि में से किसी भी अवस्था में अनाधिक व्यय की, पूर्ति के लिये अपेक्षित सब धनों के विनियोजन के लिये विधेयक पुरःस्थापित किया जायेगा।

(2)इस प्रकार किये गये किसी अनुदान की राशि में बदलाव करने, अथवा अनुदान के लक्ष्य को बदलने, अथवा भारत की संचित निधि पर भारित व्यय की राशि पर बदलाव करने का प्रभाव रखने वाला कोई संशोधन, ऐसे किसी विधेयक पर, संसद के किसी सदन में प्रस्थापित नहीं किया जायेगा तथा कोई संशोधन इस खंड के अधीन अप्रवेश्य है या नहीं, इस बारे में पीठासीन व्यक्ति का विनिश्चय अंतिम होगा।

(3)अगले दो अनुच्छेदों के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, भारत की संचित निधि में से इस अनुच्छेद के उपबन्धों के अनुसार पारित विधि द्वारा किये गये विनियोजन के अधीन निकालने के अतिरिक्त और कोई धन नहीं निकाला जायेगा।"

जैसा कि मैंने कल स्पष्टीकरण किया था, इस अनुच्छेद 94 का उद्देश्य पुराने अनुच्छेद

के उपबन्धों का स्थान लेना है जो कि गवर्नर-जनरल द्वारा एक अनुसूची के प्रमाणीकरण के विषय में था।

माननीय डॉ.बी.आर. अम्बेडकर: अध्यक्ष महोदय, मैंने तो सोचा था कि मेरे मित्र श्री टी. कृष्णमाचारी ने जो बातें कहीं थीं, उनसे मेरे मित्र श्री सन्तानम् की आपत्तियों का काफी उत्तर मिल गया होगा, किन्तु मेरे मित्र श्री भारती ने अपने वक्तृता में ये संकेत किया है कि कम से कम उनके संदेह दूर नहीं हुए हैं, अतः मैं कुछ शब्द कहना आवश्यक समझता हूँ। मेरे मित्र श्री सन्तानम् ने कहा था कि हम विनियोजन विधेयक की प्रक्रिया को व्यर्थ ही अपने यहाँ लागू कर रहे हैं, और कि हमारे प्रयोजन के लिए प्रमाणीकृत अनुसूची की वर्तमान प्रक्रिया ही पर्याप्त है। यदि मैं ठीक समझा हूँ तो उनकी युक्ति यह है कि हाउस ऑफ कामन्स में विनियोजन विधेयक इसलिये आवश्यक है कि प्राक्कलनों के अनुदानों को समस्त सदन की समिति स्वीकार करती है, सदन स्वयं नहीं करता। परिणामतः उनके मतानुसार, विनियोजन विधेयक, आवश्यक प्रक्रिया बन जाती है, क्योंकि प्राक्कलनों पर सदन में कोई समिति विचार करती है। वैयक्तिक रूप में मेरा ख्याल है कि हाउस ऑफ कामन्स की समिति प्रक्रिया और विनियोजन विधेयक की आवश्यकता में कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं सदन को बता देता हूँ कि प्राक्कलनों के विषय में हाउस ऑफ कामन्स के समिति रूप में बैठने की प्रक्रिया कैसे आरम्भ हुई थी। सदन को याद होगा कि इंग्लैंड के राजनैतिक इतिहास में एक समय था जबकि बादशाह और हाउस ऑफ कामन्स दोनों में वैमनस्य था। आज हाउस ऑफ कामन्स और बादशाह में भरोसे और विश्वास की जो सुखद भावना विद्यमान है, वह उस समय नहीं थी। बादशाह को अत्यचारी समझा जाता था, अन्यायी समझा जाता था, जिसे केवल कर आरोपण करके धन इकट्ठा करने और उसे अपनी इच्छानुसार व्यय करने से ही मतलब था। यह भी समझा जाता था कि हाउस ऑफ कामन्स का अध्यक्ष, सदन द्वारा निर्वाचित तथा उसका विश्वासपात्र होने के स्थान पर बादशाह के गुप्तचर के समान था। इसके फलस्वरूप हाउस ऑफ कामन्स के सदस्यों को सदा यह आशंका रहती थी कि यदि सारा सदन प्राक्कलनों पर विचार करेगा, तो अध्यक्ष को ही वहाँ अध्यासीन होने का अधिकार होगा और शायद वह, बादशाह के आचरण, उसकी फिजूलखर्ची और अत्याचार के कार्यो की आलोचना करे। अतः अध्यक्ष से पीछा छुड़ाने के लिए जैसा कि मैं आरम्भ में ही कहा चुका हूँ कि जो हाउस ऑफ कामन्स की कार्यवाही के समाचार बादशाह को देता था। बादशाह का गुप्तचर समझा जाता था। उन्होंने समिति के रूप में बैठने का यह उपाय निकाला: क्योंकि जब सदन समिति रूप में बैठता है तब अध्यक्ष को पीठासीन होने का कोई हक नहीं होता। इसी मुख्य उद्देश्य को लेकर हाउस ऑफ कामन्स सप्लाई समिति के रूप में बैठता है। जैसा कि मैंने कहा है, यदि सदन सप्लाई समिति के रूप में न भी बैठता तब भी सदन के लिये विनियोजन विधेयक पारित करना आवश्यक होता। जैसा कि मेरे मित्रों-कम से कम वकील मित्रों को

स्मरण होगा, एक समय था जबकि हाउस ऑफ कामन्स जब वेज एंड मीन्स समिति के रूप में केवल प्रस्ताव पारित कर देता था कि कौन से कर लगाये जायें और तत्पश्चात् उन प्रस्तावों के आधार पर काफी समय तक कर वसूल किये जाते रहे–मेरे ख्याल में 1913 तक। सन् 1913 में यह प्रश्न न्यायालय में चला गया कि क्या वेज एंड मीन्स समिति के प्रस्तावों के ही आधार पर कर लगाये जा सकते हैं, और उच्च न्यायालय ने निश्चय कर दिया कि हाउस ऑफ कामन्स को केवल प्रस्तावों के आधार पर कर लगाने का कोई अधिकार नहीं है। सदन को कर लगाने के लिये अधिनियम पारित करना चाहिये। परिणामत: संसद ने प्रान्तीय कर एकत्रण अधिनियम नामक विधि बनाई। इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है कि यदि सप्लाई समिति में व्यय पर मतदान होता और हाउस ऑफ कामन्स के संकल्पों को अंतिम प्राधिकार समझा जाता तो न्यायालय उनकी भी निंदा करते, क्योंकि यह एक सुनिश्चित सिद्धांत है कि विधि प्रवर्तन में आती है, संकल्प नहीं। अत: मेरा पहला निवेदन यह है कि मेरे मित्र श्री सन्थानम की यह युक्ति सर्वदा निराधार है कि विनियोजन विधेयक हाउस ऑफ कामन्स की समिति प्रक्रिया का ही अभिन्न अंग है। मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूँ कि गवर्नर जनरल द्वारा प्रमाणीकृत अनुसूची की प्रक्रिया क्यों अनावश्यक है, यह देखते हुए कि परिवर्तित स्थिति में राष्ट्रपति के स्वविवेक संबंधी कोई कृत्य नहीं होंगे, और वित्तीय मामलों में संसद की शक्ति सर्वोपरि होगी और राष्ट्रपति या कार्यपालिका की नहीं। इस विषय पर मुझे और कुछ नहीं कहना है।

फिर यदि मैं ठीक समझा हूँ तो मेरे मित्र श्री सन्थानम ने कहा, कि अनुच्छेद 95 मुझे पता नहीं कि उन्होंने अनुच्छेद 96 की चर्चा की थी या नहीं–पर उन्होंने निस्संदेह अनुच्छेद 95 की चर्चा की थी–उन्होंने कहा था कि अनुच्छेद 95 से नये अनुच्छेद 94 का खंड (3) प्रभावहीन हो जायेगा। खण्ड (3) में लिखा है कि विधि द्वारा बनाये गये विनियोजन के अतिरिक्त कोई धन खर्च नहीं किया जायेगा। लगता है कि उनके ख्याल में नये अनुच्छेद 95 में उल्लिखित अनुपूरक, अपर अथवा अधिकाई अनुदान और नये अनुच्छेद 96 में उल्लिखित लेखानुदान, प्रत्ययानुदान अथवा अवादानुदान पर विनियोग विधि के बिना ही मतदान हो जायेगा। मेरे ख्याल में उन्होंने अनुच्छेद को पूरा नहीं पढ़ा है। यदि वे नये अनुच्छेद 95 के उप–खण्ड (2) को पढ़ते, और नये अनुच्छेद 96 के अंतिम भाग को भी पढ़ते और आगे चल कर एक और अनुच्छेद को भी पढ़ते जो कि बाद में पेश किया जायेगा–अर्थात् अनुच्छेद 248–क को –तो वे देखेंगे कि एक उपबंध बनाया गया है कि अनुपूरक अथवा अपर अनुदानों के लिये या तो लेखानुदान के लिये या किसी और प्रयोजन के लिये, कोई धन नहीं निकाला जा सकता, जब तक संचित निधि में से धन निकालने के लिये विधि द्वारा कोई उपबंध न बना दिया जाये। मैं यह अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि इस बात से कई सदस्यों के समझने में गड़बड़ हो गई है कि किसी स्थान पर हम संचित निधि का उल्लेख करते हैं तो अन्य स्थान पर हम विनियोजन अधिनियम

की चर्चा करते हैं। बात यह है: संचित निधि अधिनियम और विनियोजन अधिनियम में मूलत: कोई अन्तर नहीं है। दोनों का एक ही उद्देश्य है, कि नियमित रूप से नियुक्त प्राधिकारी को संचित निधि में से धन निकालने के लिये प्राधिकृत करना। संचित निधि अधिनियम और विनियोजन अधिनियम में केवल यही अन्तर है। संचित निधि अधिनियम में एकमुश्त राशि का उल्लेख होता है, पर विनियोजन अधिनियम में सब विस्तृत विवरण होता है-मुख्य शीर्ष, उप-शीर्ष और मदें। स्पष्टत: विनियोजन विधेयक की प्रक्रिया को संचित निधि विधेयक के समय पूरा नहीं किया जा सकता, क्योंकि संसद ने शीर्ष, उप-शीर्ष और उप-शीर्ष की मदों के लिये धन का विनियोजन करने के पूरे उपक्रम को पूरा नहीं किया है। परिणामत: जब संचित निधि अधिनियम में धन पर मतदान होता है तो इसका अर्थ यह है कि कार्यपालिका संचित निधि में से इतनी एक-मुश्त राशि निकाल सकती है, जो बाद में अंतिम विनियोजन अधिनियम में दिखाई जायेगी। यदि माननीय मित्र यह याद रखेंगे कि कार्यपालिका का संचित निधि अधिनियम या विनियोजन अधिनियम के अतिरिक्त धन निकालने का कोई प्राधिकार नहीं है, तो वे समझ जायेंगे कि यथासंभव इन उप-बन्धों को ऐसा बनाया गया है कि धोखा करना या चालाकी करना संभव न हो सके।

[(डॉ. अम्बेडकर का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। यथा संशोधित रूप में अनुच्छेद 94 संविधान में जोड़ा गया।),

* * * * *

अनुच्छेद ९५

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 95 के स्थान पर, निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये: 95. (1) यदि

(क) अनुच्छेद 114 के उपबन्धों के अनुसार निर्मित किसी विधि द्वारा किसी विशेष सेवा पर चालू वित्तीय वर्ष के लिये व्यय किये जाने के लिए प्राधिकृत कोई राशि उस वर्ष के प्रयोजनों के लिये अपर्याप्त पाई जाती है अथवा जब उस वर्ष के वार्षिक वित्त विवरण में अपेक्षित न की गई किसी नई सेवा पर अनुपूरक अथवा अपर व्यय की चालू वित्तीय वर्ष में आवश्यकता पैदा हो गई है, अथवा

अनुपूरक, अपर या अतिरिक्त अनुदान

(ख) किसी वित्तीय वर्ष में किसी सेवा पर उस सेवा और उस वर्ष के लिये अनुदान की गई राशि से अधिक कोई धन व्यय हो गया है, तो राष्ट्रपति यथास्थिति संसद के दोनों सदनों के समक्ष उस व्यय की प्राक्कलित की गई राशि को दिखाने वाला दूसरा विवरण रखवायेंगे अथवा लोक-सभा में ऐसी अधिकाई के लिये मांग उपस्थित करायेगा।

(2) ऐसे किसी विवरण और व्यय या मांग के सम्बन्ध में, तथा भारत की संचित

निधि में से ऐसे व्यय अथवा ऐसी मांग के बारे में अनुदान की पूर्ति के लिए धनों का विनियोजन प्राधिकृत करने के लिये बनाई जाने वाली किसी विधि के सम्बन्ध में भी, अनुच्छेद 112, 113 और 114 के उपबन्ध वैसे ही प्रभावी होंगे जैसे कि वे वार्षिक वित्त विवरण तथा उसमें वर्णित व्यय अथवा अनुदान की किसी मांग तथा भारत की संचित निधि में से ऐसे किसी व्यय या मांग से सम्बन्धित अनुदान की पूर्ति के लिये धनों का विनियोग प्राधिकृत करने के लिये बनाई जाने वाली विधि के सम्बन्ध में प्रभावी है।''

* * * * *

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं देखता हूँ कि सदन के समक्ष जो वित्तीय प्रस्ताव रखे गये हैं, उनसे सदस्य बहुत चिन्तित हैं। मैं इसे समझता हूँ, क्योंकि मुझे स्मरण है कि जब श्री चर्चिल के पिता लार्ड चांसलर बने थे, तब उनके समक्ष बजट रखा गया था जिसमें अंकों को दशमलव तथा उनके बिन्दुओं के साथ दिखाया गया था। स्पष्टत: वे गणित के विद्यार्थी नहीं थे, और समझ नहीं सके कि अंकों के बीच में उन दशमलव बिन्दुओं का क्या अर्थ था। अत: उन्होंने फाइल पर लिख दिया ''इन बिन्दुओं का क्या आशय है?'' यह स्पष्टीकरण वित्त विभाग के सचिव से मांगा गया। श्री चर्चिल के पिता जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति को भी समझने में कठिनाई हुई थी, इस बात को ध्यान में रखते हुए मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं है यदि इस सदन के सदस्यों को इन उपबन्धों के समझने में ऐसी ही कठिनाई हो। इसलिये मैं सदन को ठीक तरह समझाने के लिये प्रारंभिक सिद्धांतों की व्याख्या करना चाहता हूँ।

श्रीमान्, मैं सदन को अनुच्छेद 92, अनुच्छेद 93 (2) और अनुच्छेद 94 के उपबन्धों का प्रभाव बताना चाहता हूँ। अनुच्छेद 92 राष्ट्रपति का यह कर्तव्य नियत करता है कि वह वर्ष के लिये एक वित्तीय विवरण संसद के समक्ष पेश करे–मैं 'वर्ष के लिये' इन शब्दों पर जोर देना चाहता हूँ–जिसमें कुछ श्रेणियों के व्यय दिखाये जाते हैं, जो भारत के राजस्वों पर भारित हों और जो भारत के राजस्वों पर भारित न हों। ऐसा करने के पश्चात् अनुच्छेद 93 (2) पर अमल होता है जिसमें लिखा है कि उन प्राक्कलनों पर कार्यवाही कैसे होगी। उसमें उल्लिखित है कि प्राक्कलन सदन में अनुदान के रूप में पेश किए जायेंगे। और उन पर लोकसभा में मतदान होगा। इन कार्यों के होने के बाद अनुच्छेद 94 प्रवर्तन में आ जाता है, नये अनुच्छेद 94 में उल्लिखित है कि लोकसभा में पेश किये गये सब अनुदान विनियोजन अधिनियम के रूप में रखे जायेंगे तथा विनियमित होंगे। अब मैं चाहता हूँ कि सदस्य इस पर विचार करें कि अनुच्छेद 92, 93 (2) और 94 का क्या प्रभाव है। फर्ज किया हम कोई और अनुच्छेद नहीं बनाते, तो क्या प्रभाव होगा? मेरे विवेकानुसार अनुच्छेद 92, 93 (2) और 94 में समाविष्ट उपबन्धों का प्रभाव यह होगा कि राष्ट्रपति वर्ष के मध्य में संसद में अन्य प्राक्कलन पेश नहीं कर सकेगा।

राष्ट्रपति विधि के अनुसार वे ही प्राक्कलन पेश कर सकता है। इसका यह अर्थ होगा कि अनुपूरक मांगों, अनुपूरक अनुदानों, अधिकाई अनुदानों अथवा अन्य अनुदानों के लिये कोई उपबन्ध नहीं होगा, जिनका उल्लेख लेखानुदान आदि के रूप में किया गया है। यदि अनुपूरक अनुदानों और अन्य अनुदानों को, जिनका मैंने उल्लेख किया है, पेश करने के लिये कोई उपबन्ध नहीं किया जायेगा, तो कार्यपालिका का सब काम ही रुक जायेगा। अतएव, यह सामान्य उपबन्ध बना कर कि राष्ट्रपति उस वर्ष विशेष के व्यय के प्राक्कलनों को संसद के समक्ष पेश करने के लिये बाध्य होगा, उसे यह भी प्राधिकार दे दिया गया है कि यदि आवश्यकता पड़ जाये तो वह अन्य प्राक्कलन भी पेश कर सकता है। अतः यदि हम संविधान में, अनुपूरक और अधिकाई अनुदानों के लिये कोई स्पष्ट उपबन्ध नहीं करते, तो अनुच्छेद 92, 93 (2) और 94 के कारण वे पेश नहीं हो सकेंगे। अब सदन यह समझ जायेगा कि इन अनुपूरक अनुदानों को पेश करने के लिये यह उपबन्ध रखना क्यों अपेक्षित है।

अतिरिक्त मांगों के विषय में प्रश्न उठा है। मेरे विचार में कठिनाई स्वाभाविक है। सदस्यों ने कहा है कि जब यह उल्लेख कर दिया गया है कि विनियोजन अधिनियम द्वारा निश्चित सीमा के अलावा कार्यपालिका कोई धन व्यय नहीं कर सकेगी, तो अतिरिक्त अनुदानों का प्रश्न कैसे उठ सकता है? मेरे विचार में यही बात है। इसका उत्तर यह है। मेरे मित्र, पंडित कुंजरू द्वारा पेश किये गये संशोधन के अनुसार ही हम उपबन्ध बना रहे हैं, जो कि सूची 1 के पृष्ठ 27 पर नया अनुच्छेद 248 ख है, जिसमें कि भारत की संचित निधि में से एक आकस्मिकता निधि स्थापित करने का उपबन्ध है। वैयक्तिक रूप में मैं नहीं समझता कि ऐसा उपबन्ध अपेक्षित है। क्योंकि यही प्रश्न आस्ट्रेलिया में उठा था, न्यू साउथ वेल्स के राज्य और कामनवैल्थ ऑफ आस्ट्रेलिया के मध्य मुकदमे में उठा था, और उसमें यह प्रश्न आया था कि कामनवैल्थ को एक आकस्मिकता निधि स्थापित करने का अधिकार है, जबकि विधि में यह उल्लेख है कि समस्त राजस्व को संचित निधि में एकत्र कर दिया जाये और आस्ट्रेलियन कामनवैल्थ को उच्च न्यायालय ने यह उत्तर दिया कि संचित निधि की स्थापना से संसद के विधानमंडल को यह वर्जन नहीं हो जाता कि वह संचित निधि में से कोई अन्य निधि स्थापित कर सके, चाहे वह निधि विशेष उसी वर्ष में खर्च क्यों न की जाये, क्योंकि यह तो केवल विनियोजन है, चाहे दूसरे रूप में हो। किन्तु नये अनुच्छेद 248ख को रखने के विषय में मैं अपने मित्र पंडित कुंजरू के संशोधन को स्वीकार कर लूँगा, जिससे कि इस विषय में कोई संदेह न रहे कि संचित निधि के उपबन्ध के रहते हुए क्या संसद को आकस्मिकता निधि स्थापित करने का अधिकार है। अतः यह सम्भव है कि कार्यपालिका को विनियोजन अधिनियम के आधार पर जो निधि दी जाती है, उसके अतिरिक्त भी कार्यपालिका के पास संचित निधि होगी और ऐसी अन्य निधि भी होगी जो कि विधि द्वारा समय-समय पर बनाई

जाये। अतएव, विनियोजन अधिनियम का उल्लंघन किये बिना भी कार्यपालिका के लिये सर्वथा संभव होगा कि वह ससंद द्वारा मतदान से स्वीकृत धन से अधिक व्यय कर सके और उस राशि का आकस्मिता निधि या किसी अन्य निधि से निकाल सके। इसलिये अधिनियम का उल्लंघन तो हो ही गया, और ऐसा होना संभव है, क्योंकि कार्यपालिका किसी आपात में यह सोच सकती है कि ऐसा करना चाहिये और उनके लिये ऐसा करने के लिये निधि का भी उपबन्ध है। अत: प्रश्न यह है: जब ऐसा कार्य हो जाये, तो क्या आप उस कार्य के विनियमन के लिए उपबन्ध नहीं करेंगे? वास्तव में, यदि मैं कह दूँ तो, अनुदान का पारित होना तो केवल ऐसा ही है कि जैसे संसद कोई अधिनियम पारित करे सरकार के कुछ अधिकारियों को, जिन्होंने कि नेकनियती से कोई ऐसा कार्य किया जो कि उस समय विधि के विपरीत हो, विषमुक्त कर दे। अधिकाई अनुदान के विचार में कोई और बात नहीं है, और मैं सदन के सदस्यों के समक्ष 'हाउस ऑफ कामन्स के सार्वजनिक कार्य की प्रक्रिया की संहिता' के पैरा 230 को पढ़ कर सुनाना चाहता हूँ। पैरा 230 में यही लिखा है:

> ''अतिरिक्त अनुदान की आवश्यकता तब पड़ती है, जबकि कोई विभाग असैनिक आकस्मिकता निधि अथवा ट्रेजरी बैस्ट निधि में से अथवा अन्य प्राप्तियों में से अग्रिम लेकर अथवा अन्यथा किसी प्रकार कोई धन किसी सेवा पर व्यय कर दे, जो कि उस वर्ष में उस सेवा के लिये स्वीकृत राशि से अधिक हो।''

इसलिये इसमें कोई विचित्रता नहीं है। केवल यही बात है कि जब कोई अनुपूरक प्राक्कलन होता है, तब अतिरिक्त व्यय किये बिना ही मंजूरी प्राप्त कर ली जाती है। अतिरिक्त अनुदान के बारे में अतिरिक्त व्यय पहले ही हो चुकता है और कार्यपालिका उस व्यय की मंजूरी के लिये संसद के पास आती है। अत: मेरे विचार में कोई कठिनाई तो है ही नहीं, वरन् इसकी आवश्यकता तब तक है, जब तक कि आप इतना उपबन्ध करने के लिये तैयार न हों जब भी कोई कार्यपालिका अधिकारी विनियोजन अधिनियम द्वारा स्वीकृत धन के अतिरिक्त कोई धन व्यय करता है, तो उसे अपराधी समझा जायेगा और उस पर मुकद्दमा चलाया जाएगा, तब तक आपको अतिरिक्त अनुदान की इस प्रक्रिया को स्वीकार करना होगा।

माननीय श्री के. सन्थानम: क्या मैं पूछ सकता हूँ कि क्या नये अनुच्छेद 95 (2) में उल्लिखित विधि के उपबन्धों के अधीन पिछले तीन अनुच्छेद प्रभावी होंगे? क्या इसका यह अर्थ है कि प्रत्येक अनुपूरक अनुदान के पश्चात् एक अनुपूरक विनियोजन अधिनियम पेश किया जायेगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: हाँ, यही तो होगा।

माननीय श्री के. सन्थानम: विनियोजन समस्त वर्ष के लिये नहीं होगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः अनुपूरक विनियोजन भी हो सकता है। हाउस ऑफ कामन्स में सदा ऐसा ही होता है।

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेनाः मेरे संशोधन का क्या हुआ, श्रीमान्?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मुझे बहुत खेद है। प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना कहते हैं कि वित्तीय वर्ष को बदल दिया जाये। खैर, मुझे तो केवल यही कहना है कि मुझे संदेह है कि उनका उद्देश्य साफ नहीं है। वे शायद शरद् सत्र चाहते हैं जिससे कि वे जितना चाहें उतना कात सकें। यदि वे लम्बे सत्र चाहते हैं तो उन्हें गर्मी के मासों में बैठना चाहिए, जैसा हम आजकल कर रहे हैं।

[(डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ। यथासंशोधित रूप में अनुच्छेद 95 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद ९६

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँः

''कि अनुच्छेद 96 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जायेः

96. (1) इस अध्याय के पूर्वगामी उपबन्धों में किसी बात के होते हुए भी लोक-सभा को-

लेखा अनुदान प्रत्यानुदान तथा अपवादानुलन

(क) किसी वित्तीय वर्ष के भाग के लिये प्राक्कलित व्यय के बारे में किसी अनुदान को, ऐसे अनुदान के लिये मतदान करने के लिये अनुच्छेद 93 में विहित प्रक्रिया की पूर्ति के लम्बित रहने तक, तथा उस व्यय के सम्बन्ध में अनुच्छेद 94 के उपबन्धों के अनुसार विधि के पारण के लम्बित रहने तक, पेशगी देने की,

(ख) जब कि किसी सेवा की महत्ता या अनिश्चित रूप के कारण मांग वैसे ब्यौरे के साथ वर्णित नहीं की जा सकती जैसा कि वार्षिक वित्त विवरण में साधारणतया दिया जाता है, तब भारत के सम्पत्ति स्रोतों पर अप्रत्याशित मांग की पूर्ति के लिये अनुदान करने की,

(ग) किसी वित्तीय वर्ष की चालू सेवा का जो अनुदान भाग न हो ऐसा कोई अपवादानुदान करने की,

शक्ति होगी तथा उक्त अनुदान जिन प्रयोजनों के लिये किये गये हैं उनके लिये भारत की संचित निधि में से धन निकालना विधि द्वारा प्राधिकृत करने की शक्ति होगी।

(2) खण्ड (1) के अधीन किये जाने वाले किसी अनुदान तथा उस खंड के अधीन बनाई जाने वाले किसी विधि के सम्बन्ध में अनुच्छेद 93 और 94

के उपबन्ध वैसे ही प्रभावी होंगे जैसे कि वे वार्षिक वित्त विवरण में वर्णित किसी व्यय के बारे में किसी अनुदान के करने के तथा भारत की संचित निधि में से ऐसे व्यय की पूर्ति के लिये धनों का विनियोजन प्राधिकृत करने के लिये बनाये जाने वाली विधि के सम्बन्ध में प्रभावी हैं।''

(संशोधन संख्या १७२० पेश नहीं किया गया।)

माननीय श्री के. सन्थानम्: श्रीमान्, मैं व्यापक सिद्धांत का विषय फिर नहीं उठाना चाहता, क्योंकि वह स्वीकृत हो चुका है किन्तु मैं यह कहना चाहता हूँ कि इस अनुच्छेद की रचना कुछ त्रुटिमय है।

उदाहरणार्थ, खंड (1) में लिखा है, ''लोकसभा को शक्ति होगी'', और इसके पश्चात् उप-खंड (ग) में लिखा है, ''और विधि द्वारा प्राधिकृत करने की.....'' मेरे विचार में संविधान के अनुसार, लोकसभा विधि द्वारा प्राधिकृत नहीं कर सकती।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं कहना चाहता हूँ कि मसौदा समिति उप-खंड (ग) के बाद की तीन पंक्तियों की भाषा को बाद में बदलने की स्वतंत्रता चाहती है।

माननीय श्री के. सन्थानम्: श्रीमान्, मैं इस बात को समझ नहीं पाया। सदन में हम ऐसी चीज पारित कर दें जो कि स्पष्टत: गलत है और संविधान के विपरीत है और फिर मसौदा समिति पर उसे छोड़ दें। मैं नही समझता कि हम जो उपबन्ध बना रहे हैं, उनको छेड़ने की आजादी हम मसौदा समिति को दे सकते हैं, जब तक कि कोई भूल-चूक न हो। हम नहीं चाहते कि हमारे समक्ष बिल्कुल एक नया संविधान रख दिया जाये और हम उसके प्रत्येक अनुच्छेद को पुन: देखने का कष्ट करें। मैं नहीं समझता कि स्पष्टत: गलत खंड को पारित कर देना सदन के लिये ठीक होगा। या तो उन्हें यह कहना चाहिये कि संसद को शक्ति होगी....

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं, अभी इस संशोधन को स्वीकार करने के लिये तैयार हूँ आप उसका सुझाव पेश कर सकते हैं। ''संसद को विधि द्वारा प्राधिकृत करने की शक्ति होगी....''

माननीय के. सन्थानम्:श्रीमान, संशोधन इस प्रकार हो सकता है ''और संसद के पास भारत की संचित निधि से उस धन को, जिस प्रयोजन के लिये अनुदान दिया गया है, निकालने के लिए विधि द्वारा प्राधिकृत करने की शक्ति होगी।''

खण्ड (2) को लेते हैं, तो उसमें लिखा है ''कि इस संविधान के अनुच्छेद 93 और 94 के उपबन्धों का प्रभाव किसी अनुदान देने के संबंध में बना रहेगा....'' मैं जानना चाहता हूँ कि क्या इसका यह मतलब है कि इसके लिये विनियोजन अधिनियम रखना होगा और उस विनियोजन अधिनियम में समस्त विभाग दिखाये जायेंगे, भारित और अभारित, मतदान योग्य और

मतदान से विमुक्त, जैसा कि पिछले अनुच्छेद में लिखा है। यदि इसका यही आशय है.....

माननीय डॉ. बी.आर.अम्बेडकरः ऐसा नहीं हो सकता है।

माननीय श्री के. सन्थानम्ः अनुच्छेद 93 में लिखा है....

श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः यदि इससे माननीय सदस्य की समझ में बात आ जाये, तो हम ऐसे कह सकते हैं कि विनियोजन अधिनियम से पूर्व तक संचित निधि विधेयक अधिनियम संख्या 1 होगा, जिसमें मुख्य रूपरेखा होगी।

माननीय श्री के. सन्थानम्ः मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या संचित निधि विधेयक संख्या 1 में भी भारित और अभारित राशियाँ और मतदान के योग्य तथा मतदान से विमुक्त राशियां सब समाविष्ट होंगी, या मतदान के योग्य राशियाँ ही होंगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः भारित राशियाँ तो केवल अंतिम विनियोजन अधिनियम में ही होती है। मतदान के योग्य लेखे में वे चीजें होती हैं, जिन्हें हाउस ऑफ कामन्स की पारिभाषिक भाषा में 'सप्लाई सेवाएं' कहा जाता है जो राजस्व पर भारित सेवाओं से भिन्न होती हैं।

माननीय श्री के. सन्थानम्ः अनुच्छेद में लिखा है कि अनुच्छेद 93 और 94 के उपबन्धों की पूर्ति करनी होगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः अनुच्छेद 93 और 94 का अर्थ है, विनियोजन अधिनियम पर मतदान।

माननीय श्री के. सन्थानम्ः अनुच्छेद 93, प्रथम भाग, में लिखा है कि भारित राशियों को वहाँ दिखाया जायेगा और दूसरे भाग में लिखा है कि मतदान के योग्य राशियों को सदन में उपस्थित किया जायेगा। मैं जानना चाहता हूँ कि क्या ये दोनों प्रकार की राशियाँ मतदान के लेखे पर लागू होंगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः अनुच्छेद 93 में लिखा है कि भारत के राजस्व पर भारित सेवाओं पर सदन का मत लेना अपेक्षित नहीं है।

माननीय श्री के. सन्थानम्ः किन्तु, उन्हें विनियोजन अधिनियम में तो दिखाना ही होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः जब वह पारित हो जायेगा। उसे ही संचित निधि अधिनियम प्रथम कहते हैं।

माननीय श्री के. सन्थानम्ः अनुच्छेद 94 तो संचित निधि अधिनियम के बारे में नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः वही विनियोजन अधिनियम भी है। जैसा कि मैं

पहले कह चुका हूँ, इनमें कोई अन्तर नहीं है। विनियोजन अधिनियम में विस्तृत विवरण होता है, और संचित निधि में नहीं होता।

माननीय श्री के. सन्थानम्: मैं नहीं समझता कि डॉ. अम्बेडकर के स्पष्टीकरण का मूल्य किसी अनुच्छेद के उपबन्धों से भी बढ़ सकता है। अनुच्छेद के वर्तमान रूप से तो यही प्रकट है कि अनुच्छेद 93 और 94 के समस्त उपबन्ध इस संचित निधि पर तथा अन्य पर भी लागू होंगे। अतः बजट की समस्त प्रक्रिया को दोहराना होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: यदि माननीय सदस्य उप-खंड (2) को ध्यान से पढ़ेंगे तो उन्हें पता लग जायेगा कि उसमें किस उप-खंड की चर्चा है। उसमें लिखा है ''इस संविधान के अनुच्छेदों 93 और 94 के उपबंधों का प्रभाव खण्ड (1) के अन्तर्गत दिए जाने वाले किसी भी अनुदान के संबंध में बना रहेगा।''

माननीय श्री के. सन्थानम्: पढ़े जाइये।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: जैसा कि मैंने कहा था, राजस्व पर भारित सेवाओं में अनुदान का कोई प्रश्न ही नहीं है।

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, अब मैं कुछ और अधिक कहने की आवश्यकता नहीं समझता। मैं केवल एक संशोधन प्रस्तुत कर रहा हूँ:

''कि खण्ड (1) के उप-खण्ड (ग) के पश्चात् 'और' के बाद तथा 'तक' से पहले निम्नलिखित शब्द जोड़ दिए जाएं:

''संसद के पास शक्ति होगी'':

[(डॉ. अम्बेडकर के पूर्ववर्ती प्रस्ताव के साथ संशोधन स्वीकृत हुआ। संशोधित रूप में अनुच्छेद 96 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद ९७

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं नहीं समझता कि कोई उत्तर आवश्यक है, किन्तु श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं स्वयं एक संशोधन पेश करना चाहता हूँ। मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि संशोधन सूची के संशोधन संख्या 1723 के निदेश से, अनुच्छेद 97 के खंड (3) में 'भारत के राजस्व' इन शब्दों के स्थान पर 'भारत की संचित निधि' ये शब्द

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 10 जनवरी, 1949, पृ. 774

रख दिये जायें।''

श्री एच.वी. कामत: खंड के अन्त के शब्द को व्यर्थ दोहराया गया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मेरा ऐसा ख्याल नहीं है।

* * * * *

माननीय सभापति: अब मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन पर मत लेता हूँ।

प्रश्न यह है:

''कि संशोधन-सूची के संशोधन संख्या 1723 के निदेश से अनुच्छेद 97 के खंड (3) में 'भारत के राजस्व' इन शब्दों के स्थान पर 'भारत की संचित निधि' ये शब्द रख दिये जायें।''

[(संशोधन स्वीकृत हुआ। संशोधित रूप में अनुच्छेद 97 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद ९८

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं तो केवल यही कह सकता हूँ कि मैं श्री जसपतराय कपूर के संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता। यह अधिक अच्छा है कि इस मामले को नियमों द्वारा उपबन्धित होने के लिये ढीला ही छोड़ दिया जाये। श्री कामत के संशोधन के संबंध में, मैं नि:संदेह उसकी ओर आकृष्ट अनुभव करता हूँ। किन्तु इस समय मैं वचन नहीं दे सकता, किन्तु मैं उन्हें आश्वासन दे सकता हूँ कि मसौदा समिति इस मामले पर विचार करेगी।

माननीय सभापति: तो फिर मैं श्री कामत के संशोधन पर मत नहीं लूँगा। मैं इसे रचना संबंधी संशोधन समझता हूँ जिस पर मसौदा समिति विचार करेगी।

श्री जसपतराय कपूर के संशोधन संख्या 15 के संबंध में मैं डॉ. अम्बेडकर का ध्यान एक बात की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। अनुच्छेद 98 के खंड (2) में निम्न शब्द हैं:

''भारत डोमिनियन के विधानमंडल के बारे में।''

दूसरे स्थान पर हमने 'भारत की संविधान सभा' ये शब्द रखे हैं। मेरे ख्याल में डॉ. अम्बेडकर यहाँ भी वहीं पद रखना पसंद करेंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: हाँ।

माननीय सभापति: मैं कह रहा था कि यहां इस खंड (2) में 'भारत डोमिनियन

का विधान-मंडल ये पद है। शायद 'भारत की संविधान-सभा' ये पद अच्छा रहेगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: अब हमारे यहां दो सभायें हैं। संविधान सभा, जो संविधान सभा के रूप में बैठती है और एक संविधान सभा जो विधानमंडल के रूप में बैठती है। दोनों के लिये हमारे यहाँ नियम हैं। अत: मेरे विचार में 'भारत डोमिनियन' इन शब्दों को ही रहने देना अभीष्ट होगा, जिससे कि हम उन नियमों को स्वीकार कर सकें जो कि दूसरी सभा में लागू हैं।

श्री जसपतराय कपूर: मेरा निवेदन यह है कि 'भारत डोमिनियन के विधानमंडल' के स्थान पर हम 'संविधान-सभा' रखकर कोष्टक में 'विधायी' शब्द रख सकते हैं। इसी नाम से हम अपनी संविधान-सभा को पुकारते हैं, जब कि वह विधान-मंडल' के रूप में कार्य करती है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: हमें भारत स्वतंत्रता अधिनियम की भाषा का प्रयोग करना है। हमें उस अधिनियम की शब्दावली तक ही निर्बंधित रहना है।

माननीय सभापति: यदि इससे कोई कठिनाई नहीं होगी, तो मैं इसका ख्याल नहीं करता। मैं श्री जसपतराय कपूर के संशोधन पर मत लूंगा।

श्री जसपतराय कपूर: श्रीमान्, मैं इसे वापस लेने के लिये सदन की अनुमति चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि यह पराजित संशोधन बने।

माननीय सभापति: यदि सभा उन्हें अपना संशोधन वापस लेने की अनुमति दे तो वे वापस ले सकते हैं।

[(सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया। अनुच्छेद 98 संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

नवीन अनुच्छेद ९८-क

माननीय सभापति: डॉ. अम्बेडकर ने नया अनुच्छेद रखने के संशोधन की सूचना दी है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 98 के पश्चात् निम्न नया अनुच्छेद जोड़ दिया जाये:

संसद में वित्तीय कार्य संबंधी प्रक्रिया का विधि द्वारा विनियमन

'98-क. वित्तीय कार्य को समय के अन्दर समाप्त करने के प्रयोजन से संसद विधि द्वारा किसी वित्तीय विषय से अथवा भारत की संचित निधि में से धन का विनियोजन करने वाले किसी विधेयक से संबंधित संसद के प्रत्येक सदन की प्रक्रिया

और कार्य संचालन का विनियमन कर सकेगी, तथा यदि, और जहाँ तक, इस प्रकार बनाई हुई किसी विधि का उपबन्ध पिछले अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन संसद के किसी सदन द्वारा बनाये गये नियम से अथवा उस अनुच्छेद के खंड (2) के अधीन संसद के संबंध में प्रभावी किसी नियम या स्थायी आदेश से असंगत है, तो ऐसा उपबन्ध अभिभावी होगा।''

माननीय सभापति: इस संशोधन पर कोई सदस्य बोलना नहीं चाहता, अतः मैं प्रस्ताव पर मत लेता हूँ।

[(प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। अनुच्छेद 98-क संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद १७३

माननीय सभापति: डॉ. अम्बेडकर अगला संशोधन संख्या 2464 प्रस्तुत कर सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 173 के खण्ड (4) में ''पारित माना जाये'' इन शब्दों के पश्चात् ''जिस रूप में दोनों सदनों ने इसे पारित किया था'' शब्द प्रविष्ट कर दिए जायें।''

[(डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ। संशोधित रूप में अनुच्छेद 173 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद १७४

माननीय सभापति: डॉ. अम्बेडकर, आपके नाम से दो संशोधन हैं, सूची 1 के संख्या 69 और 70 उनका उद्देश्य केवल यही है कि इस अनुच्छेद को उन उपबन्धों के समान बना दिया जाये, जिन्हें हम स्वीकार कर चुके हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 174 के खंड (1) के उप-खण्ड (ग) और (घ) के स्थान पर निम्न उपखंड रख दिये जायें:

(ग) राज्य की संचित निधि अथवा आकस्मिकता निधि की अभिरक्षा, ऐसी किसी निधि में धन डालना अथवा उसमें से धन निकालना;

(घ) राज्य की संचित निधि में से धन का विनियोजन;

और भी

''कि अनुच्छेद 174 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (ड.) और (च) में ''राज्य का राजस्व'' इन शब्दों के स्थान पर ''भारत की संचित निधि'' शब्द रख दिये जायें।''

* * * * *

माननीय सभापतिः इस अनुच्छेद पर कोई और संशोधन नहीं है। अब मैं इस पर मत लूँगा।

श्री एच.वी. कामतः क्या डॉ. अम्बेडकर इस विषय में कुछ नहीं कहना चाहते?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मैं तो केवल यही कह सकता हूँ कि जब हम संविधान का पुनरीक्षण करेंगे तब मैं इस पर विचार कर लूंगा।

[(डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हो गया।)]

* * * * *

श्री एच.वी. कामतः क्योंकि डॉ. अम्बेडकरर ने इस पर विचार करने का वचन दिया है, अतः मैं इसे उनकी बुद्धिमत्ता पर छोड़ देता हूँ। वे बाद में उसका प्रयोग कर सकते हैं।

माननीय सभापतिः दोनों संशोधन?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः केवल एक ही संशोधन है।

श्री एच.वी. कामतः क्या मैं पूछ सकता हूँ कि उन्होंने किस संशोधन पर विचार करने का वचन दिया है? शायद वे इसे स्पष्ट कर देंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः संख्या 2466।

माननीय सभापतिः ठीक है, फिर मैं उन पर मत नहीं लूँगा।

[(संशोधित रूप में अनुच्छेद 174 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

माननीय डॉ.बी.आर. अम्बेडकरः मैं चाहता हूँ कि अनुच्छेद 175 स्थगित रहे।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः मेरा सुझाव है कि अनुच्छेद 175 और 176 को अभी रोक लिया जाये, क्योंकि वे ऐसी समस्याओं पर प्रभाव डालते हैं जिन पर मसौदा समिति अभी विचार कर रही है। संशोधन 177 को ले लिया जाए।

माननीय सभापतिः तो फिर हम अनुच्छेद 177 को लेंगे।

अनुच्छेद १७७

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँः

''कि अनुच्छेद 177 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) और (ख) के स्थान पर ''राज्य का राजस्व'' शब्दों के स्थान पर ''राज्य की संचित निधि'' शब्द रख दिये जायें।''

मैं प्रस्ताव करता हूँः

''कि अनुच्छेद 177 के खण्ड (3) ''प्रत्येक राज्य का राजस्व'' शब्दों के स्थान पर ''प्रत्येक राज्य की संचित निधि'' शब्द रख दिये जायें।''

श्रीमान्, मैं यह भी प्रस्ताव करता हूँः

''कि अनुच्छेद 177 के खण्ड (3) के उप-खण्ड (ख) में परिलब्धियाँ शब्द के स्थान पर ''वेतन'' शब्द रख दिया जाये।''

[(डॉ. अम्बेडकर के सभी संशोधन स्वीकृत हुए।)]

* * * * *

अनुच्छेद १७८

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँः

''कि अनुच्छेद 178 के खण्ड (1) में ''राज्य का राजस्व'' शब्दों के स्थान पर ''राज्य की संचित निधि'' शब्द रख दिये जायें।

(संशोधन संख्या २४९० पेश नहीं किया गया।)

माननीय सभापतिः प्रश्न यह हैः

''कि अनुच्छेद 178 के खण्ड (1) में ''राज्य का राजस्व'' शब्दों के स्थान पर ''राज्य की संचित निधि'' शब्द रख दिये जायें।''

(संशोधन स्वीकृत हो गया)

माननीय सभापतिः प्रश्न यह हैः

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 178 संविधान का अंग बने।''

[(प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। संशोधित रूप में अनुच्छेद 178 संविधान में जोड़ दिया गया।)]

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 10 जून, 1949, पृ. 784

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 784

++ पूर्वोक्त पृष्ठ 785-86

\# पूर्वोक्त पृष्ठ 785-86

अनुच्छेद १७९

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 179 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:

विनियोजन बिल 179, (1) विधान सभा अनुच्छेद 203 के अधीन अनुदान किये जाने के बाद यथासंभव शीघ्र राज्य की संचित निधि में से-

(क) सभा द्वारा इस प्रकार किये गये अनुदानों की तथा

(ख) राज्य की संचित निधि पर भारित किंतु सदनया सदनों के समक्ष पहले रखे गये विवरण में दी हुई राशि से किसी भी अवस्था में अनधिक व्यय की; पूर्ति के लिये अपेक्षित सब धनों के विनियोजन के लिये विधेयक पुरःस्थापित किया जायेगा।

(2) इस प्रकार किये गये किसी अनुदान की राशि में फेरबदल करने अथवा अनुदान के लक्ष्य को बदलने अथवा राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय की राशि में फेरबदल करने का प्रभाव रखने वाला कोई संशोधन ऐसे किसी विधेयक पर राज्य के विधानमंडल के सदन में या किसी सदन में प्रस्थापित नहीं किया जायेगा तथा कोई संशोधन इस खंड के अधीन अप्रवेश्य है या नहीं, इस बारे में पीठासीन व्यक्ति का विनिश्चय अन्तिम होगा।

(3) अगले दो अनुच्छेदों के उपबन्धों के अधीन रहते हुए राज्य की संचित निधि में से इस अनुच्छेद के उपबन्धों के अनुसार पारित विधि द्वारा किये गये विनियोजन के अधीन निकालने के अतिरिक्त और कोई धन नहीं निकाला जायेगा।''

माननीय सभापतिः इस अनुच्छेद पर कोई और संशोधन नहीं है।

[(प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। यथासंशोधित रूप में अनुच्छेद 179 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद १८०

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 180 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद 180 (1) में रख दिया जाये:

अनुपूरक, अपर या अतिरिक्त अनुदान

(क) अनुच्छेद 179 के उपबन्धों के अनुसार निर्मित किसी विधि द्वारा किसी विशेष सेवा पर चालू वित्तीय वर्ष के वास्ते व्यय किये जाने के लिये प्राधिकृत कोई राशि उस वर्ष के प्रयोजन के लिए अपर्याप्त पाई जाती है अथवा उस वर्ष के आर्थिक वित्त विवरण में अपेक्षित

न की गई किसी नई सेवा पर अनुपूरक अथवा अपर व्यय की चालू वित्तीय वर्ष में आवश्यकता पैदा हो गई है; अथवा

(ख) किसी वित्तीय वर्ष में किसी सेवा पर, उस सेवा और उस वर्ष के लिये अनुदान की गई राशि से अधिक कोई धन व्यय हो गया है, तो राज्यपाल यथास्थिति राज्य के विधानमण्डल के सदन अथवा सदनों के समक्ष उस व्यय की प्राक्कलित की गई राशि को दिखाने वाला दूसरा विवरण रखवायेगा अथवा यथास्थिति राज्य की विधानसभा में ऐसी अतिरिक्त कर के लिए मांग उपस्थित करायेगा।

(2)ऐसे किसी विवरण और व्यय या मांग के संबंध में, तथा राज्य की संचित निधि में से ऐसे व्यय अथवा ऐसी मांग से संबंधित अनुदान की पूर्ति के लिये धनों का विनियोजन प्राधिकृत करने के लिये बनाई जाने वाली किसी विधि के संबंध में भी, पिछले तीन अनुच्छेदों के उपबन्ध वैसे ही प्रभावी होंगे, जैसे कि वे वार्षिक वित्त विवरण तथा उसमें वर्णित व्यय अथवा अनुदान की किसी मांग तथा राज्य की संचित निधि में से ऐसे किसी व्यय या अनुदान की पूर्ति के लिये धनों का विनियोजन प्राधिकृत करने के लिये बनाई जाने वाली विधि के संबंध में प्रभावी है।''

[(संशोधन स्वीकृत हुआ। संशोधित रूप से अनुच्छेद १८० संविधान में जोड़ दिया गया।)]

अनुच्छेद १८१

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

''कि अनुच्छेद 181 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:

181. (1) इस अध्याय के पूर्वगामी उपबन्धों में किसी बात के होते हुए भी किसी राज्य की विधानसभा को–

लेखानुदान प्रत्ययानुदान और अपवादानुदान

(क) किसी वित्तीय वर्ष के भाग के लिए प्राक्कलित व्यय के बारे में किसी अनुदान को, उस अनुदान के लिए मतदान करने के लिये अनुच्छेद 203 में विहित प्रक्रिया की पूर्ति लम्बित रहने तक तथा उस व्यय के संबंध में अनुच्छेद 204 के उपबन्धों के अनुसार विधि के पारण के लम्बित रहने तक, पेशगी देने की;

(ख) जब कि किसी सेवा की महत्ता या अनिश्चित रूप के कारण मांग ऐसे ब्यौरे के साथ वर्णित नहीं की जा सकती, जैसा की वार्षिक वित्त विवरण में साधारणतया दिया जाता है, तब राज्य के सम्पत्ति स्रोतों पर अप्रत्याशित मांग की पूर्ति के लिये अनुदान करने की;

(ग) किसी वित्तीय वर्ष की चालू सेवा का जो अनुदान भाग न हो ऐसा आप वादिक

अनुदान करने की शक्ति होगी तथा उक्त अनुदान जिन प्रयोजनों के लिये किये गये हैं उनके लिये राज्य की संचित निधि में से धन निकालना विधि द्वारा प्राधिकृत करने की शक्ति राज्य के विधानमंडल की होगी।

(2) खण्ड (1) के अधीन किये जाने वाले किसी अनुदान तथा उस खण्ड के अधीन बनाई जाने वाली किसी विधि के संबंध में अनुच्छेद 178 और 179 के उपबन्ध वैसे ही प्रभावी होंगे, जैसे कि वे वार्षिक वित्त विवरण में वर्णित किसी व्यय के बारे में किसी अनुदान के करने के तथा राज्य की संचित निधि में से ऐसे व्यय की पूर्ति के लिये धनों का विनियोजन प्राधिकृत करने के लिये बनाई जाने वाली विधि के संबंध में प्रभावी है।''

[(संशोधन स्वीकृत हुआ। संशोधित रूप में अनुच्छेद संविधान में जोड़ा गया।)]

अनुच्छेद १८२

माननीय सभापतिः प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 182 संविधान का अंग बने।''

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं एक छोटा सा संशोधन पेश करना चाहता हूँ।

''कि अनुच्छेद 182 में ''राज्य का राजस्व'' शब्दों के स्थान पर ''भारत की संचित निधि'' शब्द रख दिये जायें।''

माननीय सभापतिः कोई और संशोधन नहीं है।

[(प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। संशोधित रूप में अनुच्छेद 182 संविधान में जोड़ा गया।)]

अनुच्छेद १८३

माननीय सभापतिः क्या कोई और कुछ कहना चाहता है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं करता।

माननीय सभापतिः प्रश्न यह है:

''कि अनुच्छेद 183 के खण्ड (1) में ''कर सकता है'' शब्दों के स्थान पर ''कौन करेगा'' शब्द रख दिये जायें और अन्त में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:-

''विधानसभा के पहले सत्र की तारीख से छः महीने के भीतर''

[(श्री आर.के. सिधवा का संशोधन अस्वीकृत हो गया। अनुच्छेद 183 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

नवीन अनुच्छेद १८३-क

माननीय सभापति : डॉ. अम्बेडकर का एक नया अनुच्छेद 183-क है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 183 के पश्चात् निम्न नया अनुच्छेद जोड़ दिया जाए:-

राज्य के विधानमंडल में वित्तीय कार्य संबंधी प्रक्रिया का विधि द्वारा विनियमन

(क) वित्तीय कार्य को समय के अन्दर समाप्त करने के प्रयोजन से किसी राज्य का विधानमंडल विधि द्वारा, किसी वित्तीय विषय से अथवा राज्य की संचित निधि में से धन का विनियोजन करने वाले किसी विधेयक से संबंधित राज्य के विधानमंडल के सदन या सदनों की प्रक्रिया और कार्य-संचालन का विनियमन कर सकेगा तथा यदि, और जहाँ तक इस प्रकार बनाई हुई किसी विधि का कोई उपबंध अनुच्छेद 208 के खण्ड (1) के अधीन राज्य के विधानमंडल के सदन या किसी सदन द्वारा बनाए गए नियम से, अथवा उस अनुच्छेद के खण्ड (2) के अधीन राज्य के विधानमंडल के संबंध में प्रभावी किसी नियम या स्थायी आदेश से, असंगत है तो, और वहां तक, ऐसा उपबंध अभिभावी होगा।"

अध्यक्ष : क्या कोई और कुछ कहना चाहता है?

प्रश्न यह है:

"कि नया अनुच्छेद 183-क संविधान में जोड़ दिया जाए।"

(प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद १८३-संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २१७

***माननीय सभापति :** मुझे कोई संशोधन दिखाई नहीं दिया है।

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना : मैंने उसकी सूचना आज प्रात:काल दी थी। मैं प्रस्ताव पेश करता हूँ ...

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई : जनरल) : उनके संशोधन की प्रतियाँ हमें नहीं मिली हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : जनरल) : हम यह नहीं समझ सकते हैं कि वे क्या पेश कर रहे हैं?

*. सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 10 जनवरी, 1949, पृ. 788

माननीय सभापति : हमारे बैठने के कुछ मिनट पूर्व ही उन्होंने संशोधन की सूचना दी है। परन्तु मुझे कहा गया है कि वह न्यूनाधिक रूप में अक्षरशः वैसा ही है जैसा कि संशोधन संख्या 2741 है।

* * * * *

+**प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना :** श्रीमान्, मैं समझता हूँ कि ऐसे मौलिक महत्त्व के अनुच्छेदों को केवल इस आधार पर इस सभा में बिना ध्यान दिए नहीं आने देना चाहिए कि कुछ संशोधन जिनकी सदस्यों ने सूचना दी थी, वे पेश नहीं किए गए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इस सम्बन्ध में मैं एक-दो बातें रखना चाहूँगा। यह कदाचित महत्त्वपूर्ण विषय प्रतीत होता है। सर्वप्रथम मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह संशोधन है अथवा किसी संशोधन पर संशोधन है। यदि यह संशोधन पर संशोधन है तो इसको तब तक पेश नहीं किया जा सकता जब तक कि मूल संशोधन पेश न किया जाए।

माननीय सभापति : यह संशोधन संख्या 2743 पर संशोधन है जिसको श्री नजरुद्दीन अहमद द्वारा पेश किया जा चुका है। माननीय सदस्य अपनी सूचना में कहते हैं कि उनका संशोधन संख्या 2741, 2742, 2743, 2744 और 2745 पर है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यदि इसको संशोधन संख्या 2743 पर संशोधन के रूप में माना जाता है तो यह स्पष्ट है कि चूंकि वह संशोधन संख्या 2743 के क्षेत्र से बहुत परे है इसको तब तक पेश नहीं किया जा सकता जब तक कि सदस्य आपको इस बात का संतोष न करा दें कि वह मूल संशोधन का सार रूप में परिवर्तन नहीं कर रहा है। जिस रूप में यह है, उस रूप में यह उस संशोधन की सही-सही पुनरावृत्ति है, जो सर्वश्री सन्थानम्, अनन्त शयनम आयंगर तथा अन्य सदस्यों के नाम से है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा बाद में रखे गए निम्नलिखित संशोधन स्वीकृत हो गए :

"कि अनुच्छेद २१७ की धारा (२) में 'भाग-एक' शब्द और अंक के स्थान पर 'भाग-तीन' शब्द और अंक जोड़ दिया जाए।"

(संशोधन स्वीकृत हुए, यथा संशोधित अनुच्छेद २१७ संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 789

++ पूर्वोक्त पृष्ठ 790

अनुच्छेद २२४

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं चाहता हूँ कि अनुच्छेद 224 और 225 स्थगित रखे जाएं।

माननीय सभापति : अनुच्छेद 224 और 225 स्थगित किए जाते हैं।

* * * * *

अनुच्छेद २२६

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं औपचारिक रूप से संशोधन संख्या 2775 पेश करता हूँ।

इसके बाद मैं उस पर एक संशोधन पेश करता हूँ।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 2775 के स्थान पर निम्न संशोधन रखा जाए, और

(क) इस प्रकार पुनरांकित उपर्युक्त खण्ड के अंत में, जब तक वह संकल्प प्रवृत्त है, शब्द प्रविष्ट किए जाएं; तथा

(ख) इस प्रकार पुनरांकित उपर्युक्त अनुच्छेद 226 के खण्ड (1) के पश्चात् निम्न खण्ड प्रविष्ट किए जाएं:

[(2) खण्ड (1) के अधीन पारित संकल्प एक वर्ष से अनधिक ऐसी कालावधि के लिए प्रवृत्त रहेगा, जैसा कि उसमें उल्लिखित हो:

परन्तु यदि और जितनी बार, किसी ऐसे संकल्प को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वला संकल्प खण्ड (1) में उपबन्धित रीति से पारित हो जाए तो ऐसा संकल्प उस तारीख से आगे, जिसको कि वह इस खण्ड के अधीन अन्यथा प्रवृत्त न रहता एक वर्ष की और कालावधि तक प्रवृत्त रहेगा।

(3) संसद द्वारा निर्मित कोई विधि, जिसे संसद खण्ड (1) के अधीन संकल्प के पारण के अभाव में बनाने में सक्षम न होती, संकल्प के प्रवृत्त न रहने से छः मास की कालावधि की समाप्ति पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के अतिरिक्त प्रभावी न होगी, जो उन्नत कालावधि की समाप्ति से पूर्व की गई या की जाने से छोड़ दी गई है।]

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 13 जून, 1949, पृ. 793

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 794

माननीय सभापति : मैं संशोधन पर मतदान करने से पूर्व डॉ. अम्बेडकर से पूछना चाहता हूँ कि क्या उन्हें कुछ कहना है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अब तक बहुत कुछ कहा जा चुका है। जब तक आप बोलने को नहीं कहते मैं कुछ नहीं कहना चाहूँगा।

माननीय सभापति : वह आपकी इच्छा है।

(डॉ. अम्बेडकर द्वारा संशोधित रूप में अुनच्छेद २२६ स्वीकृत हो गया ओर संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २२९

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2781 ओर 2783 के निर्देश से अनुच्छेद 229 के खण्ड (1) के स्थान पर निम्न खण्ड रखा जाए:

[(1) यदि किन्हीं दो अथवा अधिक राज्यों के विधानमंडलों को यह वांछनीय प्रतीत हो कि उन विषयों में से, जिनके बारे में संसद को, इस संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 में उपबन्धित रीति के अतिरिक्त, उन राज्यों के लिए विधि बनाने की शक्ति नहीं है, किसी विषय का विनियमन ऐसे राज्यों में संसद विधि द्वारा करे तथा यदि उन राज्यों में से प्रत्येक विधानमंडल के सदन अथवा जहाँ दो सदन हों वहां दोनों सदनों ने उसके लिए संकल्पों का पारण किया है, तो उस विषय का तद्नुकूल विनियमन करने के लिए किसी अधिनियम का पारण करना संसद के लिए विधि-संगत होगा तथा इस प्रकार पारित कोई अधिनियम ऐसे राज्यों पर लागू होगा तथा किसी अन्य राज्य को, जो तत्पश्चात् अपने विधानमंडल के सदन अथवा जहाँ दो सदन हों, वहां दोनों सदनों में से प्रत्येक से उस लिए पारित संकल्प द्वारा उसको अंगीकार करे लगाू होगा।]

थोड़े से संक्षिप्त वाक्यों में मैं इस संशोधन की व्याख्या करना चाहूँगा। जिस रूप में मूल अनुच्छेद था उसमें कहा गया था: "यदि एक अथवा अधिक राज्यों के विधानमंडल अथवा विधान मंडलों को यह वांछनीय प्रतीत हो, इत्यादि-इत्यादि।" नए संशोधन में कहा गया है: "यदि किन्हीं दो अथवा अधिक राज्यों के विधानमंडलों को यह वांछनीय प्रतीत हो, इत्यादि-इत्यादि।" नए संशोधन के अधीन विधि बनाने के लिए संसद की

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 7 जून, 1949, पृ. 799-800

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 809

सहायता प्राप्त करने का अधिकार होगा, यदि केवल दो या अधिक राज्य मिल जाते हैं और संकल्प भेजते हैं। अनुच्छेद 229 के उप-खण्ड (1) में अन्य परिवर्तन इस मुख्य संशोधन के आनुषंगिक मात्र हैं; अर्थात् शक्ति को केवल तभी सहायतार्थ काम में लिया जा सकता है जबकि दो अथवा अधिक राज्य चाहें न कि एक राज्य।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मेरे मित्र श्री सन्थानम् ने जो प्रश्न उठाया है, उसको मैंने ठीक समझ लिया है, पर मेरा विचार है कि उन्होंने उप-खण्ड (2) को सावधानी से नहीं पढ़ा। महत्त्वपूर्ण शब्द उसी तरीके से हैं, जिससे कि राज्य के विधानमंडल, जिनके हित में यह विधान उसी रूप में पारित किया जाता है, अर्थात् संकल्प द्वारा यदि इस बात से सहमत हैं कि उस विधान का संशोधन अथवा निरसन किया जाए, तो संसद को ऐसा करना पड़ेगा।

माननीय श्री के. सन्थानम् : संशोधित किया जा सकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : किया जा सकता है का अर्थ किया जाएगा है। ऐसी कोई कठिनाई नहीं है।

[डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकार किया गया। यथासंशोधित अनुच्छेद 229 संविधान में जोड़ा गया।]

* * * * *

अनुच्छेद २३०

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 230 में "किसी राज्य अथवा उसके किसी भाग में" शब्दों के स्थान पर "सम्पूर्ण भारत अथवा उसका कोई भी क्षेत्र" शब्द प्रतिस्थापित कर दिए जाएँ।"

(बिना किसी चर्चा के संशोधन स्वीकृत हुआ। यथासंशोधित अनुच्छेद संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २३१

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2788 के निर्देश से अनुच्छेद 231 के

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 13 जून, 1949, पृ. 811

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 812

खंड (2) में "भाग 1 शब्द और संख्या" के पश्चात् अथवा "भाग 3 शब्द और संख्या" प्रविष्ट की जाए।"

* * * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्रीमान्, मैं इस बात से सहमत हूँ कि श्रीमान पिल्लै के प्रश्न के लिए व्याख्या अपेक्षित है। यह व्याख्या यह है। मुझे विश्वास है कि वे इस बात से सहमत होंगे कि विरोध के संबंध में अनुच्छेद 231 में जिस नियम का उल्लेख किया गया है, उसका पालन केवल वहीं तक करना होगा, जहां तक कि संसद द्वारा निर्मित भावी विधि का संबंध है। वे देखेंगे कि अनुच्छेद 231 में "चाहे पहले अथवा बाद में पारित" शब्द है। निस्संदेह इस संविधान के प्रारम्भ होने के पश्चात् संसद द्वारा निर्मित विधि के संबंध में विरोध के नियम का दोनों भाग 1 में के राज्यों और भाग 3 में उल्लिखित राज्यों द्वारा निर्मित विधियों के संबंध में समान रूप से प्रयुक्त होगा। संविधान के पारित होने से पूर्वकालीन निर्मित विधियों के संबंध में विरोध के प्रश्न की स्थिति यह है। जैसा कि मैंने कई बार इस सदन में कहा है कि यह हमारी इच्छा है और मुझे विश्वास है कि सदन की भी यही इच्छा है कि भाग 1 और 3 में के राज्यों में परस्पर कोई विशिष्ट भेद किए बिना समस्त राज्यों में संविधान के समस्त अनुच्छेदों को साधारणतया प्रयुक्त करना चाहिए। यह अच्छी बात नहीं है कि जब कभी आप कोई अनुच्छेद पारित करें तो भाग 3 में के राज्यों को कुछ बचत की सुविधा देने के लिए उस अनुच्छेद के साथ एक परन्तुक प्रविष्ट करें, यद्यपि इस बात में कोई संदेह नहीं है कि भाग 3 में के राज्यों द्वारा निर्मित विधियों के संबंध में कुछ बचत करनी होगी। जैसा कि मैंने कहा था, एक नए भाग अथवा एक नई अनुसूची में, जिसमें भाग 3 में के राज्यों के संबंध में रक्षण का अधिनियम बनाया जाएगा, इस कार्य का करना प्रस्थापित किया गया है, जिससे कि जहाँ तक इस संविधान से पूर्व की निर्मित विधियों के प्रवर्तन में आने का संबंध है, उनकी रक्षा उस विशेष प्रपत्र अथवा विशेष अनुसूची में किसी अधिनियमित प्रावधान द्वारा की जाएगी। इस विषय में मैं एक बात और कहना चाहूँगा, वह यह है कि यद्यपि भाग 3 में के राज्यों के लिए उस विशेष भाग में रक्षण देना प्रस्थापित किया गया है, फिर भी वह रक्षण अनन्य नहीं हो सकता क्योंकि उसमें दिए गए रक्षण का, कम से कम उस विशेष भाग में के कुछ उपबन्धों का अनुच्छेद 307 के अनुसार पालन किया जाएगा, जो राष्ट्रपति को अनुकूलन करने का अधिकार देता है। वह अनुकूलन भाग 1 में के तथा भाग 3 में के दोनों राज्यों में लागू होगा। अतः जहाँ तक संसद द्वारा अथवा भाग 3 में के राज्यों के विधानमंडलों द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ के पूर्व निर्मित विधि का संबंध है, उनकी सर्वप्रथम अनुच्छेद 231 के प्रवर्तन से रक्षा की जाएगी, परन्तु वे अनुकूलन पर विचार करने वाले अनुच्छेद 307 के अधीन रहेगी।

[(डॉ. अम्बेडकर का पूर्व उल्लिखित संशोधन स्वीकृत हुआ। संशोधित रूप में अनुच्छेद 231 संविधान में जोड़ा गया।)]

* * * * *

अनुच्छेद २३२

माननीय सभापति : हम अनुच्छेद 232 को लेते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 232 के शीर्षक विधायी शक्तियों पर निर्बन्धन' को निकाल दिया जाए।"

आपकी अनुमति से मैं अपना नया संशोधन पेश करता हूँ:

(1) कि 'भाग 1 और शब्द संख्या' के पश्चात् 'अथवा भाग 3 शब्द और संख्या' प्रविष्ट की जाएं, और

(2)अनुच्छेद 232 के खण्ड (क) के पश्चात् निम्न खण्ड प्रविष्ट किया जाए:

[(कक) जहां शासक की सिफारिश अपेक्षित थी, वहां शासक या राष्ट्रपति ने]

श्रीमान्, मैं यह समझ गया हूँ कि 'शासक' शब्द के प्रयोग पर कुछ भावुक आपत्ति है। मैं इस भावुकता को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ और इस कारण मैं यह प्रस्थापित करना चाहता हूँ कि सदन इस संशोधन को इस समय स्वीकार कर ले और 'शासक' शब्द के स्थान में कोई दूसरा अच्छा शब्द खोजने के कार्य को मसौदा-समिति पर छोड़ दिया जाए। अन्यथा केवल उसी कारण के आधार पर कि इस समय हम 'शासक' शब्द के स्थान में कोई अधिक उपयुक्त शब्द नहीं खोज सकते हैं, इस पूरे के पूरे अनुच्छेद को व्यर्थ ही स्थगित रखना पड़ेगा।

* * * * *

अनुच्छेद २३४

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 234 में निम्न नवीन खण्ड प्रविष्ट किया जाए:

[(3) जहाँ इस अनुच्छेद के पूर्ववर्ती खण्ड के अधीन संचार साधनों के निर्माण अथवा उनको बनाए रखने के बारे में, किसी राज्य को दिए गए किसी निदेश के पालन में उससे अधिक खर्च होता है जो, यदि ऐसा निदेश नहीं दिया गया

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 13 जून, 1949, पृ. 811

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 812

होता तो, राज्य के मामूली कर्त्तव्यों के पालन में खर्च होता, वहाँ उस राज्य द्वारा किए गए अतिरिकत खर्चों के बारे में भारत सरकार द्वारा उस राज्य को ऐसी राशि दी जाएगी जो करार पाई जाए अथवा करार के अभाव में, जिसे भारत के मुख्य न्यायाधिपति द्वारा नियुक्त मध्यस्थ निर्धारित करे।]

[संशोधित रूप में अनुच्छेद २३४ संविधान में प्रविष्ट किया गया। संशोधन स्वीकार किया गया।]

* * * * *

अनुच्छेद २३८

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं औपचारिक रूप से संशोधन संख्या 2807 पेश करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 238 के परन्तुक में, संघ के साथ इस प्रकार के राज्य द्वारा उस पक्ष में की गई किसी प्रकार की शर्तों के अन्तर्गत" शब्दों के स्थान पर "भारत राज्य सरकार अथवा भारत सरकार अथवा इस संविधान के अनुच्छेद के अन्तर्गत संसद द्वारा बनाए गए किसी कानून के अन्तर्गत उस पक्ष में किए गए किसी तंत्र अथवा करार की शर्तों के अन्तर्गत" शब्द रख दिए जाएं।

मैं आगे और प्रस्ताव पेश करता हूँ:

"(1) किसी संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2807 के निर्देश से अनुच्छेद 238 के खण्ड (2) में 'कानून द्वारा' शब्द के पश्चात् 'संसद द्वारा बनाए गए' शब्द प्रविष्ट किए जाएं।

(2) कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2807 के निर्देश से अनुच्छेद 238 का परन्तुक अपमार्जित किया जाए।"

(संशोधन स्वीकार किया गया। संशोधित रूप में अनुच्छेद २३८ संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २३९

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 13 जून, 1949, पृ. 813

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 813

++ पूर्वोक्त पृष्ठ 814–15

"कि अनुच्छेद 239 में 'राज्य' शब्द के पूर्व, जहाँ कि वह पंक्ति 29 में दूसरी बार आता है, 'अन्य' शब्द प्रविष्ट किया जाए।"

(संशोधन स्वीकार किया गया। संशोधित रूप में अनुच्छेद २३९ संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २४०

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 240 के खण्ड (1) के स्थान में निम्न नए खण्ड रखे जाएं,

[(1) यदि राष्ट्रपति के पास कोई उपर्युक्त प्रकार की शिकायत आती है और यदि उसकी यह सम्पत्ति नहीं है कि अन्तर्ग्रस्त वाद-पद इस प्रकार की कार्यवाही करने के लिए यथेष्ट रूप से महत्त्वपूर्ण नहीं है तो वह अपने अनुदेशों के अनुसार, जिनको वह देगा, अनुसंधान करने के लिए एक आयोग नियुक्त करेगा जो उन विषयों पर, जिनका शिकायत से संबंध है, या उन विषयों पर, जिनका राष्ट्रपति निर्देश करे, राष्ट्रपति के पास प्रतिवेदन भेजेगा।

(1क) आयोग में ऐसे व्यक्ति होंगे जिनको सिंचाई, यांत्रिकी, प्रशासन, वित्त अथवा विधि का उतना विशिष्ट ज्ञान तथा अनुभव हो जितना राष्ट्रपति इस प्रकार की जांच-पड़ताल के आवश्यक समझें।]

(प्रस्ताव स्वीकार किया गया। संशोधित रूप में अनुच्छेद २४० संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद ११२ ख

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि संशोधन संख्या 23 के स्थान में निम्न संशोधन रखा जाए:-

"कि नए अनुच्छेद 112-क के पश्चात् निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाए।

उच्चतम न्यायालय का दंड विषयों में अपीलीय क्षेत्राधिकार

112-ख. संसद विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय को भारत सरकार के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी निर्णय अथवा अन्तिम आदेश अथवा दंडादेश की, उन शर्तों और परिसीमाओं के अधीन जो उस

विधि में उल्लिखित हों, अपील स्वीकार करने और सुनने की शक्तियां प्रदान करेगी।

अनुच्छेद १११-क

अध्यक्ष : डॉ. अम्बेडकर अब अपना संशोधन पेश करेंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई : जनरल) : मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ, श्रीमान:

"कि सूची 1 (पांचवे सप्ताह) के संशोधन नं. 23 और 24 के संबंध में, नवीन अनुच्छेद 111-क (1) भारत राज्य क्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय द्वारा, दण्ड कार्यवाही में दिए हुए किसी निर्णय, अन्तिम आदेश या दण्डादेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी यदि -

(क) उच्च न्यायालय ने अपील में किसी अभियुक्त व्यक्ति की विमुक्ति के आदेश को उलट दिया है तथा उसको मृत्यु-दण्डादेश दिया है; अथवा

(ख) उच्च न्यायालय ने अपने अधीन न्यायालय से किसी मामले को परीक्षण के हेतु अपने पास मंगवा लिया है तथा ऐसे परीक्षण में अभियुक्त व्यक्ति को दोषी-सिद्ध ठहराया है और मृत्यु-दण्डादेश दिया है; अथवा

(ग) उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किए जाने लायक है।"

परन्तु इस खण्ड के उपखण्ड (ग) के अधीन होने वाली अपील, ऐसे नियमों के अधीन रह कर जिन्हें कि उच्चतम न्यायालय समय-समय पर बनाए तथा ऐसी शर्तों के अधीन रहकर जो उच्च न्यायालय द्वारा स्थापित या अपेक्षित की जाए, ही होगी।

(2)संसद विधि द्वारा ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन, जो ऐसी विधि में उल्लिखित की जाएं, उच्चतम न्यायालय को भारत राज्य क्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय की दण्ड कार्यवाही में दिए गए किसी निर्णय, अन्तिम आदेश अथवा दण्डादेश की अपील लेने और सुनने की और भी शक्ति दे सकेगी।"

मैं इस समय कुछ नहीं कहना चाहता हूँ, परन्तु अपने नए संशोधन पर होने वाले वाद-विवाद को सुनने के बाद के लिए मैं अपने विचार सुरक्षित रखूँगा।

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 13 जून, 1949, पृ. 817

\+ पूर्वोक्त पृष्ठ 817

++ पूर्वोक्त पृष्ठ 818

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अध्यक्ष महोदय, चन्द बातें कहने के लिए मैं खड़ा हो रहा हूँ ताकि सभा को इस बात का ठीक-ठीक पता चल जाए कि इस नवीन अनुच्छेद 111-क को किस लिए रखा जा रहा है। इस सम्बन्ध में पहली बात मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि अनुच्छेद 111-क को इस अभिप्राय से नहीं रखा जा रहा है कि उच्चतम न्यायालय को आपराधिक मामलों की सुनवाई का आम क्षेत्राधिकार दे दिया जाए जो क्षेत्राधिकार उसे इस अनुच्छेद द्वारा दिया जा रहा है, वह बड़ा ही सीमित है।

मैं उच्चतम न्यायालय को आपराधिक मामलों के सम्बन्ध में वह अपीलीय क्षेत्राधिकार जो कि अनुच्छेद 111-क के उप-खण्डों में उल्लिखित है, क्यों देना वांछनीय समझता हूँ, इसे समझने के लिए मैं उप-खण्ड (क), (ख) को उप-खण्ड (ग) से पृथक कर देना चाहता हूँ क्योंकि दोनों का प्रयोजन भिन्न है। जैसा कि सभा को मालूम है, उपखण्ड (क) और (ख) के अनुसार उच्चतम न्यायालय को अपीलीय क्षेत्राधिकार केवल उन्हीं मामलों में होगा, जहाँ मृत्यु दण्ड दिया गया हो और अन्य मामलों में नहीं। यह बात यहाँ ध्यान में रखनी होगी।

अब मैं संक्षेप में यह बताऊँगा कि उच्चतम न्यायालय को सीमित अपीलीय क्षेत्राधिकार देना क्यों आवश्यक है वह सिर्फ उन्हीं मामलों में जहाँ मृत्यु दण्ड दिया गया है, अपील की सुनवाई कर सकता है। सभा को यह मालूम होना चाहिए कि जहाँ तक कि अपने अपराध विषयक कानून-विज्ञान का सम्बन्ध है, जैसा कि दण्ड-प्रक्रिया-संहिता में दिया हुआ है, इस बात को एक सिद्धान्त के रूप में मान लिया गया है कि अगर अभियुक्त व्यक्ति को मृत्यु-दण्डादेश दिया जाता तो उसे उस दण्डादेश के विरुद्ध अगर ज्यादा नहीं तो कम से कम एक अपील का अधिकार मिलना ही चाहिए।

माननीय सभापति : पर यहाँ मैं आपको एक बात बताऊंगा और वह यह कि आपके संशोधन के अन्दर ऐसा मामला नहीं आता है, जहाँ दण्डादेश को बढ़ाकर मृत्यु दण्डादेश दिया गया हो।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : बात यह है कि ऐसे मामलों को हम यहाँ नहीं रखना चाहते। उन मामलों में जहाँ दण्डादेश को बढ़ाकर मृत्यु दण्डादेश दिया गया है, उच्चतम न्यायालय को हम अपीलीय क्षेत्राधिकार नहीं देना चाहते हैं। हम ऐसा जानबूझकर कर रहे हैं। और सभा को भी सम्भवतः यह मालूम होगा। यह एक मानी हुई बात है कि जिस मामले में, अभियुक्त व्यक्ति को मृत्यु-दण्डादेश दिया गया है, वहाँ अभियुक्त को कम से कम उस दण्डादेश के विरुद्ध एक अपील का अधिकार मिलना ही चाहिए।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 13 जून, 1949, पृ. 824

\+ पूर्वोक्त, 14 जून, 1949, पृष्ठ 840

++ पूर्वोक्त 14 जून, 1949, पृष्ठ 853-57

यह बात एक सिद्धांत के रूप में मान ली गई है और इस सिद्धांत को देखते हुए तथा दण्ड-प्रक्रिया-संहिता के प्रावधानों पर गौर करते हुए हम यह देखते हैं कि यहां तीन तरह के मामलों में इस सिद्धान्त की अवहेलना की गई है या इसे अमल में नहीं लाया गया है। एक तो ऐसा मामला जिसमें जिला न्यायाधीश सेशन न्यायाधीश के रूप में प्रकार्य करते हुए अभियुक्त व्यक्ति को बरी कर देता है, पर हुकूमत अपने अपीलीय क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए अभियुक्त के विमुक्ति आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील करती है और उच्च न्यायालय अभियुक्त व्यक्ति को मृत्यु-दण्डादेश देता है। ऐसे मामले में अपील का अधिकार नहीं दिया गया है। उक्त सिद्धांत के सम्बन्ध में यहाँ एक अपवाद ही तो यह रखा गया है।

दूसरे मामले वे हैं, जिनमें कलकत्ता, बम्बई या मद्रास के उच्च न्यायालय के सेशन न्यायाधीश, सेशन-न्याायालय के रूप में बैठकर अभियुक्त व्यक्ति को बरी कर देते हैं पर हुकूमत जब विमुक्ति आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील करती है तो उच्च न्यायालय अपने अपीलीय क्षेत्राधिकार के अधीन उस मामले की सुनवाई करके अभियुक्त व्यक्ति को मृत्यु-दण्डादेश देता है। ऐसे मामलों के सम्बन्ध में भी अपील की व्यवस्था यहाँ नहीं रखी गई है।

श्री नजरुद्दीन अहमद : ऐसे मामलों में तो अपील का अधिकार है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं, ऐसे मामलों में अपील का अधिकार नहीं दिया गया है।

श्री नजरुद्दीन अहमद : दण्ड-प्रक्रिया-संहिता की धारा 411-क के अधीन ऐसे मामलों में अपील की जा सकती है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : धारा 411-क केवल कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के उच्च न्यायालयों के सम्बन्ध में ही लागू होती है। और वहाँ भी सभी मामलों के सम्बन्ध में या ऐसे मामले के सम्बन्ध में लागू नहीं होती है, जहाँ उच्च न्यायालयों ने धारा 506 के अधीन सुनवाई की हो। धारा 411-क का दायरा केवल उन्हीं मामलों तक सीमित है जिन पर उच्च न्यायालय ने आरम्भिक न्यायालय के रूप में बैठकर निर्णय दिया है। ऐसे निर्णयों के विरुद्ध अपील की जा सकती है। इसलिए, श्रीमान्,

पण्डित लक्ष्मीकान्त मैत्रा : धारा 526 में साधारण मामलों के एक न्यायालय से दूसरे न्यायालय में भेजे जाने के बारे में व्यवस्था है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ऐसा मामला जो अधीन न्यायालय के उच्च न्यायालय के पास जाता है और वहाँ उसकी सुनवाई होती है, उसमें अपील का अधिकार नहीं दिया गया है। प्रस्तुत अनुच्छेद के द्वारा एक असाधारण क्षेत्राधिकार की व्यवस्था की

गई है। सो इन तीन तरह के मामलों में, उस सिद्धांत की कि जिस व्यक्ति को मृत्यु-दण्ड मिला हो, उसे कम से कम एक अपील का अधिकार होना ही चाहिए, सर्वथा उपेक्षा की गई है। मैं समझता हूँ कि इस बात को देखते हुए कि वर्तमान युग तथा भारतीय जनता पर्याप्त रूप से विवेक सम्पन्न हो गई है, ऐसा प्रावधान होना ही चाहिए। उपखण्ड (क) और (ख) का उद्देश्य यही है कि ऐसे मामलों में जहाँ अभियुक्त व्यक्ति को प्रथम बार के न्यायालय में तो विमुक्त कर दिया गया हो, पर उच्च न्यायालय ने उसे मृत्यु दण्डादेश दिया हो, अपील का अधिकार प्राप्त रहे। मैं नहीं समझता कि सद्विवेक या मानवता का खयाल रखते हुए कोई भी व्यक्ति ऐसा होगा जो उप-खण्ड (क) और (ख) में रखे गए प्रावधानों के विरुद्ध कोई आपत्ति उठाएगा।

अब मैं उपखण्ड (ग) को लेता हूँ। सभा को यह स्मरण होगा कि दण्ड-प्रक्रिया-संहिता की धारा 411 के अधीन, जहां तक कि कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के उच्च न्यायालयों का सम्बन्ध है, आज भी यह प्रावधान प्रवर्तन में है। 1943 में विधानमण्डल द्वारा यह अधिकार प्राप्त किया गया था कि अगर उच्च न्यायालय यह प्रमाणित करता है कि मामला अपील के लायक है तो प्रिवी कौंसिल में मामले की अपील की जा सकती है। यह जानबूझकर प्रदत्त किया गया था। इसलिए, दण्ड प्रक्रिया-संहिता की धारा 411 में जो प्रावधान हैं, उसके सम्बन्ध में हमारे सामने दो ही प्रश्न हैं। या तो उस प्रावधान को बिल्कुल ही हटा दिया जाए या इसे अन्य उच्च न्यायालयों के लिए भी लागू कर दिया जाए। धारा 411 के प्रावधानों को, जिनके अनुसार उच्च न्यायालय के यह प्रमाणित करने पर कि मामला अपील के लायक है किसी मामले की अपील की जा सकती है, अगर हटा दिया जाता है तो इसका मतलब यह होगा कि आप एक चालू अधिकार को, जिसको जनता तीन भिन्न प्रान्तों में प्रयोग में लेती आई है जानबूझकर हटा रहे हैं। एक ऐसे न्यायिक अधिकार को वापस लेना जो अर्से से जनता को प्राप्त रहा है, कुछ असंगत सा प्रतीत होता है। इसलिए दूसरा उपाय यही रह जाता है कि इसके प्रावधानों के दायरे को इस तरह बढ़ा दिया जाए कि अन्य सभी न्यायालयों पर वह लागू हो सके। मेरे संशोधन में यही उपाय अपनाया गया है, अर्थात् इसे अन्य उच्च न्यायालयों के सम्बन्ध में भी लागू कर दिया गया है। माननीय मित्रगण, जो इस आशंका से विचलित हो रहे हैं कि इससे उच्चतम न्यायालय में आपराधिक अपीलें की बाढ़ आ जाएगी, वह मेरी समझ से, इस सम्बन्ध में दो महत्त्वपूर्ण बातों को भूल जाते हैं। एक तो इस बात को वह भूल रहे हैं कि नवीन अनुच्छेद के खण्ड (1) के उप-खण्ड (क) और (ख) द्वारा अपील का जो अधिकार दिया जा रहा है, वह किसी भी समय, जबकि विधानमंडल मृत्युदण्ड को उठा देगा, स्वतः समाप्त हो जाएगा। मृत्युदण्ड के सम्बन्ध में आज दुनिया के सभी भागों में जो कुछ कहा जा रहा है, उसका खयाल करते हुए तथा अपनी परम्परा का खयाल करते हुए, अगर विधानमण्डल मृत्युदण्ड को उठा देता है तो फिर उच्चतम

न्यायालय में अपील करने की कोई आवश्यकता ही नहीं रह जाएगी और उस हालत में यह उप-खण्ड (क) और (ख) स्वत: प्रवर्तन शून्य हो जाएंगे और उच्चतम न्यायालय का कार्यभार, जहाँ कि कि आपराधिक मामलों का सम्बन्ध है, अगर बिल्कुल ही नहीं तो बहुत कुछ कम हो जाएगा।

जहाँ तक उप-खण्ड (ग) का सम्बन्ध है, आप यह देखेंगे कि इसके साथ एक परन्तुक रख कर इस प्रावधान को सीमित कर दिया गया है। परन्तुक में कहा गया है "परन्तुक इस खण्ड के उप-खण्ड (ग) के अधीन होने वाली अपील, ऐसे नियमों के अधीन रह कर, जिन्हें कि उच्चतम न्यायालय समय-समय पर बनाएं, तथा ऐसी शर्तों के अधीन रहकर, जो उच्च न्यायालय द्वारा स्थापित या अपेक्षित की जाए, ही होगी।" इसलिए प्रमाण-पत्र सम्बन्धी जो व्यवस्था है, वह ऐसी नहीं है कि प्रमाण-पत्र की माँग करते ही वह उपलब्ध हो जाएगा और उसके आधार पर अपील की खुली सुविधा मिल जाएगी। इस सम्बन्ध में, उच्च न्यायालय की जो शर्त और प्रतिबन्ध रखेगा तथा उच्चतम न्यायालय जो नियम बनाएगा उनके अधीन रहकर ही, उप-खण्ड (ग) के अधीन कोई अपील की जा सकेगी। इसलिए यह मालूम होना चाहिए कि उप-खण्ड (ग) एक बड़ा कठोर प्रावधान है। यह लचीला नहीं है और न उतना व्यापक ही है जैसा कि लोग समझ रहे हैं।

पण्डित लक्ष्मीकान्त मैत्रा : परन्तुक जोड़ देने पर यह प्रावधान लचीला नहीं रह जाता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हाँ, मैं भी यही कह रहा हूँ। परन्तुक के साथ यह प्रावधान लचीला नहीं रह जाता है।

अब मैं अपने संशोधन के खण्ड (2) को लेता हूँ। इसके द्वारा उच्चतम न्यायालय के आपराधिक क्षेत्राधिकार को और विस्तृत करने की शक्ति संसद को दी गई है और संशोधन में दिए गए तीन तरह के मामलों के अलावा अन्य मामलों के सम्बन्ध में भी संसद उसको और आपराधिक क्षेत्राधिकार प्रदान कर सकती है। इस सम्बन्ध में एक विचारधारा यहाँ यह रही है कि जो तीन तरह के मामले संशोधन के खण्ड (1) में उल्लिखित किए गए हैं, वह काफी हैं और अब इस बात के लिए रास्ता खुला नहीं रखना चाहिए संसद चाहे तो उच्चतम न्यायालय के आपराधिक क्षेत्राधिकार को और विस्तृत कर दे। उप-खण्ड (क) और (ख) द्वारा जो आपराधिक क्षेत्राधिकार यहाँ दिया गया है वह इस अधिकार के संबंध में अन्तिम सीमा होनी चाहिए इसका एकमात्र उत्तर, जो मैं दे सकता हूँ, वह यह है। यह समझना और सोचना बड़ा कठिन है कि आगे चलकर क्या स्थिति हो सकती है। पर अगर कोई व्यक्ति यह कहता है कि आगे चलकर ऐसी कोई स्थिति ही उत्पन्न नहीं होगी, जिसमें यह अपेक्षित हो कि संसद उच्चतम न्यायालय

के आपराधिक क्षेत्राधिकार को और विस्तृत करे, तो मेरी समझ से तो हमें इस बात पर विश्वास और भरोसा कर लेना चाहिए। पर यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न ही हो जाए तो खण्ड (2) के प्रावधान के अभाव में यहाँ क्या स्थिति होगी? स्थिति यह होगी कि उस हालत में हमें, उस प्रक्रिया के अनुसार जिसे एतदर्थ हम किसी आगामी भाग में रखना चाहते हैं, इस संविधान में संशोधन करना पड़ेगा। इसलिए सवाल यह उठता है कि क्या करना ठीक होगा? क्या यह ठीक होगा कि इस प्रावधान को ऐसा कठोर बनाया जाए कि संविधान में बिना संशोधन किए संसद को भी यह अधिकार न रहे कि इस सम्बन्ध में वह कोई परिवर्तन कर सके या यह ठीक होगा कि संसद को इस सम्बन्ध में कानून बनाने की शक्ति देकर समय, स्थिति और कैसा कानून बने, इन सब बातों को संसद पर छोड़ दिया जाए – इस प्रावधान को लचीला बनाया जाए?

माननीय श्री के. सन्थानम् (मद्रास : जनरल) : मैं यह बताऊँ कि अनुच्छेद 114 के अधीन, उच्चतम न्यायालय को क्षेत्राधिकर देने की शक्ति संसद की है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अनुच्छेद 114, मेरा खयाल है, उस विषय से सम्बन्ध नहीं रखता है। मेरे पास उसकी प्रति नहीं है, वरना मैं उत्तर में सब कुछ बता देता। यह अनुच्छेद तो संघ-सूची के सम्बन्ध में है।

माननीय श्री के. सन्थानम् : संघ-सूची में दिए गए विषयों के सम्बन्ध में जो क्षेत्राधिकार उच्चतम न्यायालय को प्राप्त है, उसी की चर्चा इस अनुच्छेद में है।

माननीय डॉ. बी.आर. अमबेडकर : हाँ, यह अनुच्छेद उक्त क्षेत्राधिकार के सम्बन्ध में ही है। पर मान लीजिए सहगामी सूची के सम्बन्ध में यदि उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार को विस्तृत करना हो तो इसके लिए अनुच्छेद 114 का उपयोग तो नहीं किया जा सकता है।

अब, श्रीमान्, मैं उन बातों को लेता हूँ जो माननीय मित्र श्री अल्लादि कृष्णास्वामी ने इसके सम्बन्ध में कही है। उनकी आलोचनाएं अधिकतर उप-खण्ड (ग) के सम्बन्ध में है। पहली आपत्ति उनकी यह है कि उप-खण्ड (ग) की उपयोगिता ही क्या रह जाती है जबकि उसके प्रावधानों पर परन्तुक रख कर इतना ज्यादा प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। उनका मतलब यह है कि जब उच्चतम न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों के अधीन ही अपील की जा सकती है तो फिर इस उप-खण्ड (3) को रखने में लाभ ही क्या है?

पं. लक्ष्मीकांत मैत्रा : जिस उप-खण्ड का जिक्र है, वह उप-खण्ड (ग) है न कि उपखण्ड (3)।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : भूल के लिए मुझे खेद है। उप-खण्ड (ग)

---

*· डाट्स व्यवधान दर्शाते हैं।

का ही जिक्र है। आपका कहना यह है कि उपखण्ड (ग) को रखने में कोई लाभ नहीं है अगर परन्तुक में दिए गए प्रतिबन्धों से उसे आप जकड़ देते हैं। इस सम्बन्ध में पहली बात उन्हें यह याद दिलाऊँगा कि इस उप-खण्ड का जो परन्तुक है वह अक्षरश: उन परन्तुकों से मिलता है, जो दण्ड-प्रक्रिया-संहिता की धारा 411 के साथ तथा जो व्यवहार-प्रक्रिया-संहिता की धारा 109 के साथ रखे गए हैं। माननीय मित्र श्री अल्लादि कृष्णास्वामी को स्मरण होगा कि उच्चतम न्यायालय के व्यवहार-विषयक अपीलीय क्षेत्राधिकार के सम्बन्ध में हमने एक खण्ड ऐसा रखा है जो अनुच्छेद 111 (क) के खण्ड (1) के उप-खण्ड (ग) से अक्षरश: मिलता हुआ है। अब मेरा कहना यह है कि अगर अनुच्छेद 111 के खण्ड (1) के उप-खण्ड (ग) को रखने में कोई लाभ है? जबकि वहाँ भी उच्चतम न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमादि के प्रतिबन्ध रखे गए हैं तो मेरी सहज बुद्धि यही कहती है कि प्रस्तुत उप-खण्ड (ग) को रखने में भी अवश्य ही लाभ है, भले ही परन्तुक के प्रावधानों द्वारा उसे भी सीमित ही क्यों न कर दिया गया है। माननीय मित्र ने यह भी कहा है कि अनुच्छेद 112 में एक प्रावधान ऐसा है जो उच्चतम न्यायालय को यह अधिकार देता है कि वह विशेष अनुमति प्रदान कर किसी भी मामले की अपील ग्रहण कर सकता है और यह अनुच्छेद व्यवहार-विषयक अपीलों तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह एक व्यापक अनुच्छेद है जिसमें किसी वाद या विषय की अपील को विशेष अनुमति द्वारा ग्रहण करने की बात कही गई है। उनका कहना यह था कि जब अनुच्छेद 112 है ही तो इस उप-खण्ड (ग) को रखने से क्या लाभ? उसके सम्बन्ध में भी मेरा वही जवाब है जो पहले दे चुका हूँ। जब अनुच्छेद 112 में यह बता ही दिया गया है कि उच्चतम न्यायालय को उच्च न्यायालय पर व्यवहार-विषयक मामलों में क्या क्षेत्राधिकार प्राप्त रहेगा तो फिर अनुच्छेद 111 के उप-खण्ड (ग) को ही रहने की क्या जरूरत है? अगर अनुच्छेद 112 में रहते हुए भी व्यवहार विषयक अपीलों के सम्बन्ध में अनुच्छेद 111 के उप-खण्ड (ग) को हम रखते हैं तो फिर अनुच्छेद 111 (क) के उपखण्ड (ग) को रखने में आपको क्या आपत्ति है? यहाँ जो बात ध्यान में रखने की है, वह यह है कि अनुच्छेद के सम्बन्ध में उच्चतम न्यायालय को यह स्वतंत्रता दे दी गई है कि अपीलों को ग्रहण करने के बारे में जो भी शर्तें वह रखना चाहें, रख सकता है। इस सम्बन्ध में उसके क्षेत्राधिकार पर कोई प्रतिबन्ध नहीं रखा गया है।

श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर : व्यवहार-विषयक अपीलों के सम्बन्ध में तो वहाँ एक शर्त दी गई है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हाँ, यह सच है। मैं नहीं जानता कि उच्च्तम न्यायालय द्वारा इस अनुच्छेद का निर्वचन किस रूप में किया जाएगा। यह बात उच्चतम न्यायालय पर छोड़ दी गई है कि वही इसका निर्वचन करे। हो सकता है, उच्चतम

न्यायालय उसका निर्वचन उसी रूप में करे, जिस रूप में कि प्रिवी कौंसिल ने किया है या वह जैसा भी चाहे उसका निर्वचन कर सकता है। हो सकता है कि उच्चतम न्यायालय इसका ऐसा निर्वचन करे जो सीमित हो या यह भी हो सकता है कि उसका निर्वचन अधिक व्यापक हो। अगर सीमित रूप में इसका निर्वचन किया जाता है तो इसमें मुझे सन्देह नहीं है कि यह उप-खण्ड (ग) कुछ काम का सिद्ध होगा। इसलिए मेरा यह कहना है, श्रीमान्, कि मेरा संशोधन ऐसा है कि इससे हमारी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है और उन लोगों की अन्तर्रात्मा को भी सन्तोष पहुँच जाता है जिनको यह आपत्ति है कि बिना एक अपील का मौका दिए किसी भी अभियुक्त व्यक्ति को कभी फांसी नहीं मिलनी चाहिए। मैं समझता हूँ कि यह संशोधन इस रूप में शब्दबद्ध किया गया है कि आपराधिक अपीलों के कारण, प्रशासन की दृष्टि से या किसी तरह, उच्चतम न्यायालय पर कभी अधिक कार्यभार नहीं पड़ेगा। आशा है मित्रगण अपने संशोधनों को अब वापस ले लेंगे और मेरे संशोधन को स्वीकार करेंगे।

श्री सी. सुब्रह्मण्यम् (मद्रास : जनरल) : एक स्पष्टीकरण चाहता हूँ श्रीमान्। भाषा सम्बन्धी अन्तर का प्रभाव...

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अब कोई प्रश्न करने का मौका नहीं रह गया है। इसके लिए काफी देर हो चुकी है।

माननीय सभापति : माननीय डॉ. ने अपने जवाब में यह नहीं बतलाया कि इन दो तरह के मामलों में, एक तो उनमें जिनमें कि उच्च न्यायालय ने पहले के न्यायालय द्वारा किए हुए दण्डादेश को बढ़कार मृत्यु का दण्डादेश दे दिया है और उनमें जिनमें विमुक्ति-आदेश को उलट कर उसने मृत्यु-दण्डादेश दिया है, आपने यहाँ क्या अन्तर रखा है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : दण्डदेश की वृद्धि के विरुद्ध अपील में तथा विमुक्ति-आदेश के विरुद्ध अपील में दो बातों का अन्तर है। जब उच्च न्यायालय किसी अभियुक्त-व्यक्ति को अधीन न्यायालय द्वारा दिए गए दण्डादेश में वृद्धि करता है तो वहाँ वह अभियुक्त को प्रथम बार सिद्ध-दोष नहीं ठहराता है, बल्कि वह व्यक्ति को पहले से सिद्ध-दोष ठहराया हुआ रहता है। पर विमुक्ति आदेश के विरुद्ध की गई अपील की सुनवाई में उच्च न्यायालय पहले वाले न्यायालय के निर्णय को उलट देता है और अभियुक्त व्यक्ति को सिद्ध-दोष ठहरा देता है। दूसरा अन्तर इन दोनों में यह है कि दण्डादेश की वृद्धि में कार्यवाही उस रूप में चलाई जाती है मानो कोई नियमित अपील का मामला हो और ऐसे मामले में अभियुक्त व्यक्ति को दण्ड-प्रक्रिया-संहिता के अधीन अपील का संवैधानिक अधिकार प्राप्त रहता है। वह यह बता सकता है कि न केवल दण्डादेश की वृद्धि ही अनुचित है, बल्कि मामले के तथ्यों को देखते हुए उसे दोषी ठहराना भी

औचित्य-शून्य है। दण्डादेश की वृद्धि के मामलों में एक अपील का अधिकार पहले ही से प्राप्त है। ऐसी हालत में उसमें और आगे अपील की व्यवस्था अनावश्यक है। तीसरी बात यह है कि संशोधन में दोष सिद्धि या विमुक्ति को अपील का आधार माना गया है। दण्डादेश किस तरह का है या सजा कैसी दी गई है, इसे संशोधन में अपील-विषय अधिकार का आधार नहीं माना गया है।

माननीय सभापति : मान लीजिए किसी मामले में सेशन अदालत की राय यह है कि मामला संगीन चोट का है। पर चोट के फलस्वरूप मृत्यु होने पर भी उस मामले में अदालत कारावास का दण्ड देती है। अब फर्ज कीजिए अदालत के इस फैसले के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील होती है और उसकी राय यह होती है कि मामला हत्या का है, संगीन चोट का नहीं और वह मृत्यु-दण्डादेश देता है। अब यहाँ उच्च न्यायालय ने हत्या के लिए पहली बार अभियुक्त को दोषी ठहराया और मृत्यु दण्डादेश भी यहाँ पहली बार ही दिया गया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : संशोधन में जो योजना रखी गई है, फिलहाल मैं उससे आगे जाने के लिए तैयार नहीं हूँ। आगे चलकर अगर संसद यह समझे कि ऐसे मामले में अपील का अधिकार होना चाहिए तो खण्ड (2) के अधीन उसे ऐसी व्यवस्था करने की पूरी स्वतंत्रता रहेगी।

माननीय सभापति : यह तो दूसरी बात है और इसके बारे में फैसला देना सभा का काम है। पर जहाँ तक कि मेरा संबंध है, मैं नहीं समझ सका कि दोनों में क्या अन्तर है।

श्री एच.पी. पातस्कर (बम्बई : जनरल) : डॉ. अम्बेडकर के मूल संशोधन संख्या 24 पर मैंने एक संशोधन पेश किया है, जो संशोधन नं. 25 है।

माननीय सभापति : अब इसके लिए समय नहीं रह गया है। मैं समझता हूँ कि इस बात को उठाने में बड़ी देर कर दी है। अब इस मौके पर हम इस प्रश्न को उठाने की अनुमति नहीं दे सकते।

अब मैं विभिन्न संशोधनों पर राय लूँगा। जो सदस्य यह समझते हों कि डॉ. अम्बेडकर के इस नए संशोधन में उनके संशोधन की बातें आ जाती हैं, वे आशा है, कृपया अपने संशोधनों को वापस ले लेंगे।

(डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकृत हुआ। दूसरे अधिकार संशोधन वापस ले लिए गए, एक अस्वीकृत हुआ। यथासंशोधित रूप में अनुच्छेद-तीन-क संविधान में शामिल किया गया।)

* * * * *

अनुच्छेद १६४

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मेरा प्रस्ताव है :

"कि अनुच्छेद 164 की धारा (1) में "किए गए प्रावधान के अनुसार बचाए" शब्दों के स्थान पर "अन्यथा किए गए प्रावधान के अनुसार बचाएँ" शब्द रख दिए जाएँ।

(चर्चा किए बगैर संशोधन स्वीकृत हुआ। यथासंशोधित अनुच्छेद १६४ संविधान में शामिल किया गया।)

* * * * *

अनुच्छेद १६७-क

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय इस बहस के दौरान यहाँ बहुत से प्रश्न उठाए गए हैं और मैं चाहूँगा कि उनका एक-एक करके उत्तर दूँ। माननीय मित्र श्री सिंधवा की बात को अगर मैंने ठीक-ठीक सुना है तो उन्होंने अनुच्छेद 165 का जिक्र किया है, जिसमें शपथ लेने या प्रतिज्ञान करने की बात कही गई है। इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में तो यही बात है कि अगर इसके प्रावधानों की पूर्ति नहीं की जाती है तो इससे सदस्य का स्थान नहीं रिक्त हो जाता है। इस अनुच्छेद में सिर्फ यही कहा गया है कि जब तक कोई व्यक्ति शपथ न ले ले तब तक न तो वह सभा की कार्यवाही में भाग ले सकेगा और न मतदान कर सकेगा। बस, इतना ही इसमें कहा गया है। इसलिए, इसको लेकर मेरी समझ में यहाँ कोई कठिनाई पैदा नहीं होती।

श्री आर.के. सिंधवा : तो ऐसा मामला, आखिर निर्वाचन अयोग के पास ही क्यों भेजा जाए?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं उस बात की ओर आ ही रहा हूँ। जहाँ तक अनुच्छेद 165 का सम्बन्ध है, मेरा खयाल है कि इसमें और 167 में क्या बुनियादी फर्क है इसे वह समझते होंगे। अनुच्छेद 165 के सम्बन्ध में तो यही है कि शपथ न लेने पर सदस्य का स्थान रिक्त नहीं हो जाता है। उस पर केवल यह निर्योग्यता लागू हो जाती है कि वह सभा की कार्यवाही में भाग ले सकेगा।

अब मैं मुख्य संशोधन को लेता हूँ, जिसे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णामाचारी ने पेश किया है। उनका संशोधन है नवीन अनुच्छेद 167-क को रखने के बारे में। सिवाए एक बात के, जिसका कि मैं अभी-अभी उल्लेख करूँगा, अन्य सभी बातों के ख्याल से यह संशोधन बिल्वुल सही है। राज्यपाल पर फैसला देने का काम सौंपने का कारण यह है कि आम कायदे के अनुसार ऐसी अनर्हता के सम्बन्ध में निर्णय देने का भार, जिसको

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 14 जून, 1949, पृ. 860

लेकर सदस्य का स्थान रिक्त होता हो, उसी खास अधिकारी को सौंपा जाता है जिसे उस रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए निर्वाचन कराने की शक्ति प्राप्त रहती है। यद्यपि यह बात लिखित रूप में नहीं कही गई है पर इसे सभी अच्छी तरह समझते हैं कि अनुच्छेद 167 के वर्णित किसी अनर्हता के कारण सदस्य का स्थान रिक्त हो गया है या नहीं उसका निर्णय यही अधिकारी करेगा, जिसे उस रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए निर्वाचकों से यह कहने की शक्ति प्राप्त रहेगी कि वह उस स्थान के लिए अपना प्रतिनिधि चुने। इसके बारे में कोई सन्देह नहीं है कि अपने नवीन संविधान में राज्यपाल को ही यह शक्ति दी गई है कि निर्वाचकों से अपना प्रतिनिधि चुनने को वह कहे। ऐसी दशा में, अनर्हता सम्बन्धी कारण पर स्थान रिक्त घोषित करने की शक्ति, लाजिमी है कि राज्यपाल को ही प्राप्त रहनी चाहिए। इसलिए जहाँ तक कि अनुच्छेद 167-क के खण्ड (1) का सम्बन्ध है, उसे स्वीकार करने में मुझे कोई कठिनाई दिखाई नहीं देती।

अब मैं खण्ड (2) को लेता हूँ। यह खण्ड कुछ अधिक व्यापक हो गया है। इसमें यह कहा गया है कि अनर्हता सम्बन्धी प्रश्न का निर्णय राज्यपाल निर्वाचन आयोग को मंतव्य जानने के बाद करेगा और निर्वाचन आयोग का मंत्र मंतव्य मानने के लिए वह बाध्य होगा। यदि सदस्यगण अनुच्छेद 167 पर दृष्टिपात करें तो देखेंगे कि जहां तक (क) से (घ) तक के उपखण्डों में वर्णित अनर्हता का सम्बन्ध है वस्तुतः आयोग ऐसी स्थिति में नहीं है कि उनके सम्बन्ध में राज्यपाल को कोई राय दे सके क्योंकि उसमें सभी बातें ऐसी हैं जो निर्वाचन आयोग के कार्यक्षेत्र से बाहर की हैं। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति परिलाभ का कोई पद धारण करता है या कोई सदस्य विकृत मस्तिष्क का है अथवा वह अनुन्मुक्त दिवालिया है या वह किसी विदेशी सत्ता के प्रति निष्ठा रखता है, ये सब ऐसे मसले हैं जो निर्वाचन आयोग की परिधि के सर्वथा बाहर की चीजें हैं। इसलिए उन प्रश्नों के बारे में राज्यपाल को राय देने के लिए निर्वाचन आयोग को कभी भी समुचित निकाय नहीं कहा जा सकता। पर जहां तक उप-खण्ड (ङ) का सम्बन्ध है, मैं समझता हूँ कि उसके बारे में निर्वाचन आयोग राय दे सकता है क्योंकि उपखण्ड (ङ) के अंतर्गत अनर्हता का प्रश्न किसी भ्रष्टाचार या किसी अवांछित वृत्ति में लिप्त रहने के कारण उठ सकता है जिसमें निर्वाचन-कानून के अनुसार सदस्य को अयोग्य करार दिया जा सकता है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : क्या निर्वाचन आयोग आवश्यक जाँच-पड़ताल नहीं कर सकता?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यहाँ जाँच-पड़ताल का प्रश्न ही कहाँ उठता है? इस बात का निश्चय करने के लिए कि कोई व्यक्ति अनुन्मुक्त दिवालिया है या नहीं जाँच-पड़ताल की कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिए मेरा कहना यह है कि अनुच्छेद

167-क का खण्ड (3) है तो ठीक लेकिन यह उन्हीं स्थितियों तक सीमित रहना चाहिए जिनका उल्लेख उप-खण्ड (ङ) में किया गया है। इसलिए आपकी अनुमति से, मैं खण्ड (2) में यह संशोधन रखना चाहूँगाः

"गत पूर्ववर्ती अनुच्छेद के खण्ड (1) के उप-खण्ड (ङ) में दी हुई अनर्हताओं को लेकर उठने वाले किसी प्रश्न पर विनिश्चय देने से पूर्व राज्यपाल निर्वाचन आयोग की राय लेगा तथा ऐसी राय के अनुसार ही कार्य करेगा।"

माननीय सभापति : श्री टी.टी. कृष्णामाचारी द्वारा प्रसारित संशोधन में, जैसा कि मैं समझ पाता हूँ, निर्वाचन के पहले या निर्वाचन काल में उत्पन्न होने वाली अनर्हता का प्रश्न नहीं रखा गया है। उसमें तो निर्वाचन के बाद विधानमण्डल का सदस्य हो जाने पर अगर कोई व्यक्ति किसी अनर्हता का भागी हो जाता है तो उसके सम्बन्ध में उठने वाले प्रश्न की बात कही गई है। ऐसे प्रश्नों का निपटारा निर्वाचन आयोग करेगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्! किसी अभ्यर्थी के विरुद्ध कोई याचिका (petition) आने पर आयोग उसकी जाँच करेगा और हो सकता है निर्वाचन काल में किए गए कुछ अपराधों के लिए वह अभ्यर्थी को दोषी पाए जाने पर इस बीच निर्वाचन समाप्त हो चुका होगा और अभ्यर्थी सदस्य के रूप में अपना स्थान ग्रहण कर चुका होगा।

माननीय सभापति : क्या ऐसे मामलों को निपटाने का अधिकार निर्वाचन-आयोग को नहीं है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : है, पर होता यह है कि ज्यों ही कोई व्यक्ति निर्वाचित हो जाता है, उसे शपथ लेने और प्रतिज्ञान करने पर सभा में बैठने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। वह सभा में बैठता है और बाद में उसका प्रतिद्वंद्वी अभ्यर्थी निर्वाचन के सम्बन्ध में याचिका (चमजपजपवद) दाखिल करता है और न्यायालय के इस निर्णय पर कि निर्वाचन कानून के अधीन वह कतिपय अपराधों का दोषी है, वह व्यक्ति अपने स्थान से हटा दिया जाता है। यह मामला भी उप-खण्ड (ङ) के अन्दर आएगा। जब किसी व्यक्ति ने सदस्य के रूप में सभा में स्थान ग्रहण कर लिया है, उसके बाद....'

माननीय सभापति : मुझे ऐसा मालूम होता है कि यहाँ दो तरह की अनर्हताओं का उल्लेख है। कोई सदस्य सदस्य होने के पूर्व या निर्वाचन काल में, किसी अनर्हता का भागी हो सकता है। ऐसे मामलों को निपटाने का अधिकार निर्वाचन न्यायाधिकरण होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह तो इस बात पर निर्भर करता है कि आगे चलकर क्या प्रक्रिया इसके लिए निर्धारित करते हैं।

माननीय सभापति : पर सभा में स्थान ग्रहण करने के बाद भी, हो सकता है कोई

सदस्य किसी अनर्हता का भागी हो जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसी का प्रावधान तो उप-खण्ड (ङ) में किया गया है।

माननीय सभापति : फिर अन्य अनर्हताएं भी किसी पर लागू हो सकती हैं। कोई व्यक्ति विकृत मस्तिष्क का हो सकता है या अनुन्मुक्त दिवालिया हो सकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इन सबका प्रावधान यहाँ किया गया है। यह सब अनर्हताएँ सदस्यों के लिए लागू होती हैं।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : कृपया संशोधन को पढ़िए तो।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अनर्हताएँ दो तरह की हैं। एक तो वह अनर्हताएँ हैं जो अभ्यर्थी के लिए लागू होती हैं। जिन लोगों पर यह अनर्हताएँ लागू होती हैं, वह निर्वाचन के लिए उम्मीदवार ही नहीं बन सकते। दूसरी अनर्हताएँ वह हैं जो सदस्यों के लिए लागू होती हैं। चुने जाने के बाद अगर कोई अनुच्छेद 167 में उल्लिखित अनर्हता का भागी हो जाता है, वह सभा में बैठ नहीं सकता। दोनों अनर्हताएँ भिन्न हैं। दोनों को मिलाकर गफलत न पैदा कीजिए।

माननीय श्री के. सन्थानम् : 167-क के अन्दर दोनों ही आ जाती हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ऐसा हो सकता है। मैं मसले को समझाए देता हूँ। सब कुछ इस बात पर निर्भर करता है, कि किस तरह की प्रक्रिया हम इसके लिए निर्धारित करते हैं। अगर हम यह प्रक्रिया बरतना तय करते हैं कि अभ्यर्थी चुनाव के लिए अर्ह है या नहीं, इसे हम आरम्भिक प्रश्न यानी चुनाव से पहले उठने वाला प्रश्न मानेंगे तो उस हालत में अनुच्छेद 167 नहीं लागू होगा। पर इसके प्रतिकूल अगर हम यह वर्तमान प्रक्रिया बरतते हैं कि चुनाव सम्बन्धी सभी प्रश्नों पर मय इस प्रश्न के कि अभ्यर्थी चुनाव के लिए अर्ह है या नहीं, विचार किया जा सकता है, तो उस हालत में अनुच्छेद 167 लागू होगा। मेरा तथा मसौदा-समिति का इरादा यही है कि एक ऐसा प्रावधान कर दिया जाए जिसके अनुसार निर्वाचन आयोग कतिपय आरंभिक प्रश्नों का निपटारा कर दे ताकि चुनाव के सम्बन्ध में जो विवाद उठें, वह केवल इसी प्रश्न को लेकर कि चुनाव ठीक तरह से प्रचालित हुआ था या नहीं। पर यहाँ यह सारी बातें एक ही जगह रख दी गई हैं।

माननीय सभापति : अब आता है श्री टी.टी. कृष्णमाचारी का संशोधन:

"कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2441 के स्थान पर निम्नलिखित नया संशोधन रखा जाए:

"कि अनुच्छेद 167 के बाद निम्नलिखित नया अनुच्छेद रखा जाए:

167-क (1) यदि किसी राज्य विधानमण्डल के सदस्य के गत पूर्ववर्ती अनुच्छेद के खण्ड (1) में वर्णित अनर्हताओं में भागी होने का कोई प्रश्न उठता है तो वह प्रश्न राज्यपाल को निर्णय के लिए सौंपा जाएगा और उसका निर्णय अंतिम होगा।

(2) ऐसे किसी प्रश्न पर निर्णय देने से पूर्व राज्यपाल निर्वाचन-आयोग की राय लेगा तथा राय के अनुसार कार्य करेगा।"

(संशोधन स्वीकृत हुआ। नया अनुच्छेद १६७-क संविधान में शामिल किया गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २०३

माननीय सभापति : अब हम अनुच्छेद 203 को लेते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इस पर अभी विचार रुका रहेगा।

श्री टी.टी. कृष्णामाचारी : अनुच्छेद 203 (2) (ख) के सम्बन्ध में यह प्रश्न है कि इसे यों ही रखा जाए या इसमें कुछ संशोधन कर दिया जाए। इस पर विचार कर लेने के लिए हमें कुछ समय चाहिए। कल तक, इस पर विचार कर हम तैयार हो जाएंगे।

* * * * *

नवीन अनुच्छेद २०९-क

माननीय सभापति : कुछ नए अनुच्छेद प्रस्तावित किए गए हैं यथा 209-क।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : 209-क पर विचार अभी रुका रहेगा।

माननीय सभापति : इसके सम्बन्ध में एक संशोधन की सूचना प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना ने दे रखी है।

प्रो. शिब्बनलल सक्सेना : उसे रोका जा सकता है।

* * * * *

अनुच्छेद २०३

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई : जनरल) : माननीय सभापति महोदय, मैं प्रस्तुत करता हूँ:

"अनुच्छेद 203 के हाशिए शीर्षक में निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:-

"उच्च न्यायालय का सभी न्यायालयों पर अधीक्षण का अधिकार।"

मैं यह भी प्रस्तुत करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 203 के खंड (2) में 'उच्च न्यायालय' शब्दों से पहले 'बिना किसी पूर्वाग्रह के सामान्यतः पूर्ववर्ती उपबंधों' शब्द रखे जाएँ।"

मैं यह भी प्रस्तुत करता हूँ:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2664 के संदर्भ में –

(i) अनुच्छेद 203 के खंड (1) में 'सभी न्यायालय' शब्दों के बाद 'और अधिकरण' शब्द रखे जाएं;

(ii) अनुच्छेद 203 के खंड (2), उपखंड (ख) हटा दिया जाए।"

संशोधन स्वीकृत हुए।

(उपर्युक्त संशोधनों के साथ संशोधित अनुच्छेद २०३ संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २७०

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2975 और 2976 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 270 में "परिसंपत्तियाँ और दायित्व" शब्दों के स्थान पर "परिसंपत्तियाँ, दायित्व और बाध्यता" शब्द रखे जाएं।"

जहाँ तक मि. नजरुद्दीन अहमद के संशोधन का सम्बन्ध है, क्या मैं यह कह सकता हूँ कि वे यह भूल गए हैं कि इस संविधान के अधीन जो सरकार अस्तित्व में आएगी उसे हमने 'भारत सरकार' कहा है और इस समय की सरकार को 'भारत अधिराज्य की सरकार' कहा है इसलिए, यदि उनका संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो उसका अर्थ यह होगा कि भारत सरकार, भारत सरकार के दायित्वों, आभारों और परिसंपत्तियों की उत्तराधिकारिणी होगी। यह बहुत बेढंगा पाठ होगा। इसलिए जो शब्द रखे गए हैं, वे उपयुक्त हैं और उन्हें रहने देना चाहिए।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 14 जून, 1949, पृ. 873

\+ पूर्वोक्त, पृष्ठ 873

++ पूर्वोक्त, पृष्ठ 15 जून, 1949, पृष्ठ 875

#पूर्वोक्त, पृष्ठ 877

माननीय श्री के. सन्थानम् (मद्रास : जनरल) : मेरे विचार से हम इस अनुच्छेद को स्वीकार करने में बहुत जल्दी कर रहे हैं। हम भारतीय राज्यों को प्रान्तों के अनुरूप ही बनाने का प्रयास करते रहे हैं किन्तु हम यहाँ केवल यह उपबन्धित कर रहे हैं कि पहले के प्रान्त उसी प्रकार रहेंगे किन्तु राज्यों के लिए इस प्रकार का कोई उपबंध नहीं रखा गया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : आपके संशोधन का आशय क्या है?

माननीय श्री के. सन्थानम् : कोई संशोधन पेश नहीं कर रहा हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अध्यक्ष महोदय, मैं नहीं समझता था कि इस अनुच्छेद पर इतना वाद-विवाद होगा। किन्तु चूंकि वाद-विवाद हुआ है, इसलिए मैं यह आवश्यक समझता हूँ कि जिस भ्रम अथवा संदेह की ओर संकेत किया गया है, अथवा जो कठिनाइयाँ बताई गई हैं, उन्हें दूर करने के उद्देश्य से मैं कुछ शब्द कहूँ।

पहला प्रश्न यह उठाया गया है कि अनुच्छेद 270 को संविधान में प्रविष्ट करने की आवश्यकता ही क्या है? इसका बहुत सीधा-सादा उत्तर है। माननीय सदस्यों को यह स्मरण होगा कि 1935 के अधिनियम के प्रवर्तन में आने के पूर्व भारत सरकार की परिसंपत्तियों, दायित्वों तथा सम्पत्ति के सम्बन्ध में प्राधिकार एक निगम को प्राप्त था जो सपरिषद्-सचिव के नाम से कहा जाता था। सपरिषद्-सचिव को ही भारत के सब राजस्व तथा सम्पत्ति प्राप्त थी और उस पर भारत सरकार की सभी बाध्यताओं का दायित्व भी था। 1935 के पहले भारत सरकार एक सत्तात्मक सरकार थी। भारत सरकार की अथवा प्रान्तों की कोई सम्पत्ति नहीं थी। सब सम्पत्ति उस निगम की थी जो सपरिषद्-सचिव के नाम से कहा जाता था। उसके विरुद्ध व्यवहार-वाद उपस्थित किया जा सकता था और वह स्वयं व्यवहार-वाद उपस्थित कर सकता था। 1935 के भारत सरकार के अधिनियम द्वारा एक बहुत सारभूत परिवर्तन किया गया अर्थात् उसके अधीन भारत सराकर की ओर से सपरिषद्-सचिव को प्राप्त परिसंपत्तियां और दायित्व दो भागों में विभाजित किए गए अर्थात् भारत सरकार को बाँट में दी हुई और उसके नाम पर अलग रखी हुई परिसंपत्तियाँ और प्रान्तों के नाम पर अलग रखी हुई परिसंपत्तियाँ और दायित्व। यह सच है कि चूंकि भारत सरकार पर भारत सचिव का अधिकार पूर्णतया समाप्त नहीं हुआ था, इसलिए भारत सरकर को तथा विभिन्न प्रान्तों को बांट में दी हुई सम्पत्ति भारत सरकार के अधिनियम की धारा 172 जो कि प्रासंगिक धारा है, में इस प्रकार वर्णित की गई थी कि उसका स्वामित्व भारत सरकार की ओर से तथा विभिन्न प्रान्तों की ओर से सम्राट को प्राप्त होगा। इसके साथ ही तथ्य यह है कि दायित्व परिसंपत्तियाँ और सम्पत्ति विभाजन की गई और विभिन्न एककों तथा केन्द्र में भारत सरकार के नाम पर रखी गई। अब हमें यह समझना है कि इस संविधान को पारित करने का क्या प्रभाव होगा। इस संविधान के पारित होने

से 1935 के भारत सरकार के अधिनियम का विरसन तथा निराकरण हो जाएगा। यदि आप निरसित अधिनियमों की अनुसूची को देखें तो आपको ज्ञात होगा कि उसमें 1935 के भारत सरकार के अधिनियम का भी उल्लेख है। यह स्पष्ट है कि जब आप भारत सरकार के अधिनियम का निरसन करने जा रहे हैं, जिसमें परिसंपत्तियों, दायित्वों और सम्पत्ति के लिए उपबंध हैं, तो आपको संविधान में किसी स्थल पर इसका उल्लेख करना होगा कि भले ही भारत सरकार के अधिनियम का निरसन हो गया हो किन्तु विभिन्न प्रान्तों की जो परिसंपत्तियाँ हैं, वे उन्हीं की रहेंगी। अन्यथा 1935 के भारत सरकार के अधिनियम के निरसित होने पर परिसंपत्तियों और दायित्वों के सम्बन्ध में कोई उपबंध न रह जाएगा। वास्तव में हम वही कर रहे हैं जो किसी अधिनियम को निरसित करने पर साधारणतया किया जाता है। साधारणतया यही कहा जाता है कि यद्यपि अमुक-अमुक अधिनियम निरसित हो गए हैं किन्तु अमुक-अमुक कार्य उसी रूप में होते रहेंगे जैसे कि वे पहले होते थे। बस इतना ही किया जा रहा है। अनुच्छेद 270 में केवल यह कहा गया है कि यद्यपि 1935 के भारत सरकार के अधिनियम का निरसन हो गया है किन्तु केन्द्रीय सरकार के विभिन्न एककों की परिसंपत्तियाँ तथा दायित्व पहले के समान ही रहेंगे। दूसरे शब्दों में 1935 के अधिनियम के अधीन जो भारत सरकार थी और जो प्रान्त थे उनके ये एकक उत्तराधिकारी होंगे। मुझे आशा है कि अब सभा की समझ में आ गया होगा कि इस खण्ड को प्रविष्ट करना क्यों आवश्यक है।

अब मैं दूसरे प्रश्न को उठाता हूँ। यह कहा गया है कि अनुच्छेद 270 में भारतीय राज्यों के दायित्वों, परिसंपत्तियों और सम्पत्ति का कोई उल्लेख नहीं है। दो मामले ऐसे हैं जिनमें विभेद करना आवश्यक है। पहले हमें उन भारतीय राज्यों को अलग श्रेणी में रखना है जो संविधान में तद्रूप समाविष्ट किए जा रहे हैं और उनके क्षेत्र तथा उनके सम्बन्ध में किसी अन्य विषय के बारे में कोई परिवर्तन नहीं किया जा रहा है। उदाहरणार्थ मैसूर राज्य को लीजिए, जो आज एक स्वतंत्र राज्य है। वह संविधान में सम्भवतः बिना किसी रूप भेद के समाविष्ट किया जाएगा। दूसरी श्रेणी उन राज्यों की है जो निकटवर्ती भारतीय प्रान्तों में समाविष्ट हो गए हैं। तीसरी श्रेणी उन राज्यों की है जिन्होंने मिलकर बड़े संघ स्थापित कर लिए हैं परन्तु जो भारतीय प्रान्तों में समाविष्ट नहीं हुए हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मैसूर राज्य के संविधान में अनुच्छेद 270 के अनुरूप एक इस आशय का उपबंध होगा कि मैसूर की वर्तमान सरकार की परिसंपत्तियाँ, दायित्व और सम्पत्ति नवीन सरकर को प्राप्त होंगी। इसलिए इस सम्बन्ध में अनुच्छेद 270 में उपबंध रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसी प्रकार उन राज्यों के प्रतिज्ञापत्र में, जिन्होंने संघ स्थापित किए हैं, अनुच्छेद 270 के समान ही उपबंध होगा। उनके प्रतिज्ञापत्र में यह कहा जा सकता है कि जिन राज्यों ने मिलकर एक नवीन राज्य का निर्माण किया है उनकी परिसंपत्तियाँ तथा दायित्व संघटित राज्य की परिसंपत्तियाँ और दायित्व होंगे।

अब अन्त में हम उन राज्यों के प्रश्न को उठाते हैं जो प्रान्तों में समाविष्ट हो गए हैं। उनके सम्बन्ध में अनुच्छेद 270 के कारण कोई कठिनाई नहीं उपस्थित हो सकती। एक उदाहरण लीजिए। यदि कोई राज्य किसी भारतीय प्रान्त में समाविष्ट हुआ है तो यह स्पष्ट है कि समाविष्ट राज्य और निकटवर्ती प्रान्त के बीच इस संबंध में कोई करार हुआ होगा कि समाविष्ट राज्य के दायित्वों और परिसंपत्तियों के सम्बन्ध में क्या किया जाएगा। उस करार में यह अवश्य तय किया जाएगा कि ये दायित्व समाप्त हो जाएंगे अथवा समाविष्ट राज्य या वह भारतीय प्रान्त, जिसमें वह राज्य समाविष्ट हुआ हो, इन दायित्वों का निर्वहन करेगा। इस अनुच्छेद में यह कहा गया है कि संविधान के प्रवर्तन में आने पर (ये शब्द महत्त्वपूर्ण हैं और इस समय मैं यह मान लेता हूँ कि वह 26 जनवरी को प्रवर्तन में आएगा) उस प्रान्त का, जिसमें कोई राज्य समाविष्ट हुआ हो, यह दायित्व होगा कि वह उस करार का निर्वहन करे जो उसके तथा समाविष्ट राज्य के बीच हुआ हो। यदि संविधान के प्रवर्तन में आने के पूर्व कोई करार न हुआ हो तो केन्द्रीय सरकार तथा प्रान्तीय सरकारों को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वे उस एकक अथवा समाविष्ट राज्य अथवा किसी अन्य एकक के सम्बन्ध में जो भी नए आभार चाहे, स्वीकार करे। इसलिए संविधान के प्रवर्तन में आने के पश्चात् जो भी आदान-प्रदान होगा, वह उस करार के अनुसार होगा, जिसे प्रान्त संविधान के अधीन स्वतंत्रता से कर सकेंगे। इसलिए इस संबंध में कोई उपबंध रखने की आवश्यकता नहीं है। अन्य राज्यों के सम्बन्ध में, जैसा कि मैं मैसूर के बारे में कह चुका हूँ, उन्हें इसकी स्वतंत्रता होगी कि वे अपना प्रबन्ध स्वयं करें। जब यह व्यवस्था की जाएगी हम उसे भाग ￼￼￼ में राज्यों के विशेष उपबंधों के संबंध में अधिनियम बनाते समय उसे निस्संदेह रूप से समाविष्ट कर लेंगे। इसलिए जहाँ तक अनुच्छेद 270 का सम्बन्ध है, मेरे विचार से उसके कारण कोई कठिनाई नहीं होगी। मेरे विचार से उसे उसके वर्तमान रूप में ही स्वीकार कर लेना चाहिए।

श्री महावीर त्यागी : क्या मैं यह जान सकता हूँ कि जिस करार का निर्देश किया गया है, वह केवल वित्तीय करार ही है अथवा उसका क्षेत्र सम्बन्धी करार भी है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उसका सम्बन्ध संपत्तियों, दायित्वों और बाध्यताओं से है। उदाहरणार्थ यदि किसी प्रान्त ने किसी राज्य को समाविष्ट किया है और वहाँ के नरेश को कोई निवृत्ति वेतन देने का आभार स्वीकार किया है तो अनुच्छेद 270 के अधीन वह आभार समझा जाएगा। क्षेत्र के संक्रमण के सम्बन्ध में अन्य उपबंध होंगे।

श्री एच.वी. कामत : क्या मैं जान सकता हूँ कि हाशिए के उप-शीर्षक में 'अधिकार' शब्द को रखने पर भी अनुच्छद से उसे क्यों निकाल दिया गया है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मसौदा-समिति इसकी ओर ध्यान देगी।

श्री बी. दास : भारत की विदेशों में विशेषकर इंग्लैंड में जो सम्पत्ति है, क्या उनके

सम्बन्ध में, मैं यह जान सकता हूँ कि उन्हें अनुच्छेद 270 के अधीन वर्णित सम्पत्ति में क्यों नहीं सम्मिलित किया गया है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे विचार से उस सम्पत्ति का उदाहरणार्थ इंडिया ऑफिस के पुस्तकालय आदि का, भारत और पाकिस्तान के बीच विभाजन होना है और मेरे विचार से इस सम्बन्ध में बातचीत हो रही है।

श्री बी. दास : पौंड पावने का क्या होगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे माननीय मित्र को उसके सम्बन्ध में मुझसे अधिक जानकारी है।

(अनुच्छेद २७० डॉ. अम्बेडकर के एकमात्र संशोधन के साथ संशोधित रूप में संविधान में जोड़ा।)

* * * * *

अनुच्छेद २७१

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 271 में -

(1) दो स्थलों पर जहां "उस राज्य की सरकारों के प्रयोजनों के लिए" शब्द प्रयुक्त हैं, वे निकल दिए जाएँ;

(2) दो स्थलों पर जहां "भारत सरकार के प्रयोजनों के लिए" शब्द प्रयुक्त हैं, वे निकाल दिए जाएँ।"

(प्रस्ताव स्वीकार हुआ। अनुच्छेद २७१, संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

नवीन अनुच्छेद २७१-क

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करताा हूँ:

"कि अनुच्छेद 271 के पश्चात् निम्नलिखित नवीन अनुच्छेद रखा जाए:

सभी भूमियाँ, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें जो भूभागीय समुद्र में हैं, संघ में निहित होगी।

271-क. भारत के जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे की सब भूमियों, खनिज तथा अन्य जल प्रांगण में स्थित

मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी तथा संघ के प्रयोजन के लिए धारण की जाएंगी।

यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद है। हम भारत के राज्य-क्षेत्र में कई ऐसे राज्यों को समाविष्ट करने जा रहे हैं, जो समुद्र तटवर्ती हैं। यह सम्भव है कि ये राज्य यह प्रश्न उठाएँ कि उनके जल-प्रांगण में समुद्र के नीचे की वस्तुएँ उन्हीं की सम्पत्ति हैं। इस प्रकार के तर्क का खण्डन करने के लिए इस अनुच्छेद को प्रविष्ट करना आवश्यक है।

* * * * *

श्री एच.वी. कामत : इसके अतिरिक्त अनुच्छेद में कहा गया है, "भारत के जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें।" प्रथम अनुसूची में हमने राज्यों की तथा भारत राज्य-क्षेत्र की परिभाषा की है। किन्तु इस अनुच्छेद में कहीं भी 'भारत के जल-प्रांगण' की परिभाषा नहीं की गई है। संविधान इस सम्बन्ध में मौन है।

माननीय सभापति : अन्तर्राष्ट्रीय विधि में यह पदावली सुस्पष्ट है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसकी पृथक रूप से परिभाषा करने की आवश्यकता नहीं है।

श्री एच.वी. कामत : मुझे आशा है कि इसके पूर्व कि इस अनुच्छेद पर मत लिया जाए, डॉ. अम्बेडकर स्थिति को स्पष्ट करेंगे।

श्री ए. थानू पिल्लै (ट्रेवनकोर राज्य) : अध्यक्ष महोदय, मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर सभा को इस बारे में अवगत कराएँगे कि इस अनुच्छेद को जिन शब्दों में लिखा गया है, इसकी क्या आवश्यकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : क्या मैं यह जान सकता हूँ कि मुझे किस बात की व्याख्या करनी है।

श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर : मैं तो यह चाहता हूँ कि ये शब्द रखे जाएँ "जल-प्रांगण में समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें तथा भारत का जल-प्रांगण संघ में निहित होगा तथा संघ के प्रयोजनों के लिए धारण किया जाएगा।"

एक माननीय सदस्य : वायु का क्या होगा?

एक अन्य माननीय सदस्य : आकाश का क्या होगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, संशोधन को उपस्थित करते समय

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 15 जून, 1949, पृ. 886

\+ पूर्वोक्त, पृष्ठ 887

++ पूर्वोक्त, पृष्ठ 887

#पूर्वोक्त, पृष्ठ 888

मैंने यह बताया था कि हमने एक प्रकार के अनुच्छेद को प्रविष्ट करना क्यों आवश्यक समझा। इस सम्बन्ध में मेरे माननीय मित्र श्री पिल्लै ने यह सन्देह प्रकट किया है कि इससे मत्स्य–क्षेत्र सम्बन्धी अधिकार भी सम्मिलित हो सकता है। मैं उनका ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ कि मत्स्य–क्षेत्र सूची–II – प्रविष्टी संख्या 29 में अंकित है।

श्री ए. थानू पिल्लै : मैंने अन्य विषयों के सम्बंध में भी आपत्ति की थी।

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : मैं उनके सम्बंध में भी बोलूँगा। इस समय मैं इसी विषय पर अपने विचार प्रकट कर रहा हूँ। मत्स्य–क्षेत्रों के सम्बंध में सूची–प्प में स्पष्ट शब्दों में प्रविष्टि का अर्थ यह है कि केन्द्रीय सरकार का जल–प्रांगण के सम्बंध में जो भी क्षेत्रधिकार होगा वह सूची–II की प्रविष्टि संख्या 29 के अधीन होगा। इसलिये भारत के जल प्राँगण में भी जो मत्स्य–क्षेत्र हो, वे भी प्रान्तीय विषयों के अन्तर्गत आते हैं। मेरे माननीय मित्र श्री पिल्लै अब इसे स्पष्टतया समझ गये होंगे।

पहले प्रश्न के सम्बन्ध में स्थिति इस प्रकार है। जैसा कि मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने बताया है, अमेरिका में यह प्रश्न उठाया गया था कि जल–प्रांगण पर संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार का अधिकार है अथवा विभिन्न राज्यों का, क्योंकि यह आपको विदित ही है कि अमेरिका के संविधान के अधीन केन्द्रीय सरकार को केवल वही शक्तियाँ प्राप्त हैं जो उसे स्पष्ट शब्दों में प्रदान की गई हैं। इसलिए अमेरिका में, मेरे विचार से, अभी यह विवादग्रस्त प्रश्न ही है कि जल–प्रांगण राज्यों का है अथवा केन्द्र का। हमने यह विचार किया कि यह इतना महत्त्वपूर्ण विषय है कि हमें इसे छोड़ना नहीं चाहिए क्योंकि आगे चलकर इसके सम्बन्ध में अनुमान लगाया जा सकता है अथवा विवाद उठ खड़े हो सकते हैं अथवा दावे उपस्थित किए जा सकते हैं। साधारणतया यही समझा जाता है कि किसी राज्य का क्षेत्र उसकी भूमि तक ही सीमित नहीं होता अपितु उसके आगे समुद्र में तीन मील तक विस्तृत होता है। यह सामान्यतः अन्तर्राष्ट्रीय विधि में सन्निहित है। भय यह है और मैं इसे छिपाना नहीं चाहता कि यदि कुछ तटवर्ती राज्य, जैसे कोचीन, ट्रेवनकोर अथवा कुछ भारतीय संघ में समाविष्ट होंगे तो यदि संविधान में इस प्रकार का कोई उपबंध न होगा तो वे यह कह सकते हैं कि उनके समाविष्ट होने से केन्द्रीय सरकार को उनके भौतिक क्षेत्र के सम्बन्ध में क्षेत्राधिकार प्राप्त होता है किन्तु उनका वह क्षेत्र जिसमें उनका जल–प्रांगण भी सम्मिलित है, केन्द्रीय सरकार के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत नहीं आता और उनके क्षेत्र तथा जल–प्रांगण पर, जो अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अधीन और समाविष्ट के पूर्व उनको ही प्राप्त था, उनका ही क्षेत्राधिकार रहेगा। इसलिए संविधान में हम इसका स्पष्ट शब्दों में उल्लेख कर देना चाहते हैं कि यदि कोई तटवर्ती राज्य भारतीय संघ में समाविष्ट होगा तो उस तटवर्ती राज्य का जल–प्रांगण केन्द्रीय सरकार के अधिकार में आ जाएगा। इस प्रकार के प्रश्न के सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं उठाया

जा सकेगा और न उसे न्यायालय में ही घसीटा जा सकेगा। इसी कारण हम अनुच्छेद 271-क में इस प्रकार का उपबंध रख रहे हैं।

श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर : जल-प्रांगण के स्वामित्व का क्या होगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : आप जल-प्रांगण पर स्वामित्व का अधिकार क्यों चाहते हैं। इसके पश्चात् आपकी यह इच्छा हो सकती है कि आवश्यक आकाश पर भी आपका अधिकार हो।

श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर : नमक आदि के उत्पादन के लिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उस क्षेत्र में आपकी विधियाँ प्रवर्तन में रहेंगी, आप चाहे जो भी विधियाँ निर्मित करें, उनका विस्तार भूमि से तीन मील तक के क्षेत्र पर रहेगा। इसकी आवश्यकता है और आपको इस अनुच्छेद से प्राप्त हो जाता है।

श्री महावीर त्यागी : जल-प्रांगण को सम्मिलित नहीं किया गया है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अधीन अर्थात् किसी राज्य के राज्य-क्षेत्र में केवल भूमि ही नहीं, बल्कि तीन मील आगे तक का क्षेत्र सम्मिलित होता है। आप जो भी विधि निर्मित करेंगे उसका प्रवर्तन उस क्षेत्र में भी होगा।

श्री महावीर त्यागी : अवशिष्ट जल-प्रांगण का क्या होगा?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : आकाश के नीचे जो कुछ भी होगा वह आपका होगा।

श्री महावीर त्यागी : तीन मील के आगे के जल-प्रांगण का क्या होगा?

श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर : क्या मैं डॉ. अम्बेडकर से पूछ सकता हूँ कि क्या उन्हें यह विदित है कि जल-प्रांगण भी अन्य प्रकार की सम्पत्ति के समान ही है और अन्य सम्पत्ति से श्रेष्ठ भी कही जा सकती है और जल-प्रांगण के सम्बन्ध में बहुत विवाद होते हैं? किसी प्रान्त और संघ के बीच विवाद न होने देने के लिए क्या यह आवश्यक नहीं है कि जल-प्रांगण को भी भारतीय संघ की सम्पत्ति में सम्मिलित किया जाए?

माननीय सभापति : इसका उत्तर दिया जा चुका है। उनका यह विचार है कि इसके उल्लेख की आवश्यकता नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : भूमि के ऊपर जो कुछ हो वह भूमि में ही सम्मिलित किया जाता है। यदि भूमि के ऊपर कोई पेड़ हो तो वह भूमि में ही सम्मिलित किया जाएगा। जल भूमि के ऊपर होता है, इसलिए भूमि का ही भाग होगा।

एक माननीय सदस्य : श्रीमान् ...

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 15 जून, 1949, पृ. 91-93

माननीय सभापति : मेरे विचार से हम काफी वाद-विवाद कर चुके हैं और डॉ. अम्बेडकर उत्तर भी दे चुके हैं। अब अधिक वाद-विवाद करने की आवश्यकता नहीं है। अब मैं इस अनुच्छेद पर मत लूँगा।

श्री के. हनुमन्थय्या (मैसूर राज्य) : श्रीमान्, मैं एक बात का स्पष्टीकरण चाहता हूँ। यदि डॉ. अम्बेडकर के कथनानुसार जल-प्रांगण, अर्थात् तट से तीन मील तक की भूमि संघ की होगी, तो इस अनुच्छेद की आवश्यकता ही क्या है?

माननीय सभापति : वे प्रश्न का उत्तर दे चुके हैं।

श्री के. हनुमन्थय्या : यदि डॉ. अम्बेडकर का निर्वचन ठीक है...

माननीय सभापति : अब इस पर वाद-विवाद की आवश्यकता नहीं है। डॉ. अम्बेडकर को जो कुछ कहना था, वे कह चुके हैं। सदस्यों को उसे स्वीकार करना है। अब मैं इस अनुच्छेद पर मत लूँगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 271 के पश्चात् निम्नलिखित नवीन अनुच्छेद रखा जाए-

(271-क, भारत के जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे की सब भूमियों, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी तथा संघ के प्रयोजन के लिए धारण की जाएंगी।)

जल-प्रांगण में स्थित भूमियों, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी।

(प्रस्ताव स्वीकार हुआ। अनुच्छेद २७१-क संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २७२

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 272 में 'भाग 1' शब्द और अंक जिन दो स्थानों पर आए हैं, वहीं 'अथवा भाग 3' शब्द और अंक प्रविष्ट किए जाएं।"

माननीय सभापति : डॉ. अम्बेडकर, आप क्या बोलना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे विचार से श्री मुंशी ने सब बातें स्पष्ट कर दी हैं, और अब अधिक कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।

(संशोधन स्वीकार हुआ। अनुच्छेद २७२, संशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया)

* * * * *

अनुच्छेद २७३

माननीय सभापति : अब अनुच्छेद 273 को लेते हैं। डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूँः

"कि अनुच्छेद 273 के खण्ड (1) में "भाग 1" शब्द और अंक के बाद "अथवा भाग 3" शब्द और अंक प्रविष्ट किए जाएँ।

उपरोक्त संशोधन संख्या 201 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 273 के खण्ड (1) में जिन दो स्थानो पर 'राज्यपाल' शब्द आया है, वहां 'अथवा राज्यप्रमुख' शब्द प्रविष्ट किए जाएँ।

उपरोक्त संशोधन संख्या 201 के सम्बंध में अनुच्छेद 273 के खण्ड (2) में ''राज्य के राज्यपाल'' शब्दों के स्थान पर ''राज्यपाल अथवा राज्यप्रमुख'' शब्द प्रविष्टि किये जायें।''

* * * * *

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र श्री कामत "हस्तान्तरण-पत्रों" के सम्बन्ध में कुछ कह रहे थे और मेरे विचार से इनका तर्क यह था कि हम एक स्थान पर 'संविदा' शब्द प्रयोग कर रहे हैं और दूसरे स्थान पर 'हस्तान्तरण-पत्र'। 'हस्तान्तरण-पत्र' बहुत पुरानी पदावली है और वह सभी प्रकार के हस्तान्तरण के अर्थ में प्रयोग किया जाता रहा है। इसलिए 'हस्तान्तरण-पत्र' शब्द में 'संविदा' शब्द का आशय सम्मिलित है। इसलिए यदि ये दोनों शब्द भी प्रयोग किए जाएँ तो कोई कठिनाई नहीं होगी, क्योंकि सम्पत्ति के हस्तान्तरण के सम्बन्ध में हस्तान्तरण-पत्र का अर्थ संविदा ही है।

श्री एच.वी. कामत : मैंने भाषा के सम्बन्ध में आपत्ति की थी। अनुच्छेद के आरम्भ में "सब संविदाएं" शब्द आए हैं और बाद को "वे सब संविदाएं और सम्पत्ति सम्बन्धी हस्तान्तरण-पत्र" आदि शब्द आए हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यदि भाषा के सम्बन्ध में कोई कठिनाई होगी, तो उस पर मसौदा-समिति विचार करेगी। मैं यह बता रहा था कि विधि की दृष्टि से हस्तान्तरण-पत्र और संविदा में क्या अन्तर है।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 15 जून, 1949, पृ. 893

\+ पूर्वोक्त, 895

++ पूर्वोक्त, पृष्ठ 895

\# पूर्वोक्त पृष्ठ 898-99

इसके अतिरिक्त श्री त्यागी ने यह प्रश्न उठाया है कि यदि कोई व्यक्ति किसी संविदा पर हस्ताक्षर करता है तो वह उसके दायित्व से विमुक्त क्यों किया जाए। मेरे विचार से यदि श्री त्यागी को मंत्रिमंडल का सदस्य बना दिया जाता तो उनकी आपत्ति के बहुत अंश का निराकरण हो जाता। मैं उनसे यह पूछता हूँ कि यदि वे भारत सरकार की ओर से कोई संविदा करते तो उसका दायित्व क्या उन पर होता? मुझे विश्वास है कि वे साधारण वाणिज्य सम्बन्धी प्रक्रिया से परिचित हैं। एक प्रधान अपनी ओर से कुछ कार्य करने के लिए एक अभिकर्ता नियुक्त करता है। जब तक कि अभिकर्ता ने प्रधान द्वारा उसे दिए हुए प्राधिकार का उल्लंघन न किया हो, तब तक प्रधान के हितसाधन के लिए उसने जो भी संविदा की हो, उसका दायित्व व्यक्तिगत रूप से उस पर न होगा। यहाँ भी इसी सिद्धांत का अनुसरण किया गया है। मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी को यह विदित नहीं है कि भारत सरकार में बहुत काल से इसी प्रथा का अनुसरण होता आया है कि किसी निश्चित प्रतिष्ठा के अधिकारी द्वारा जारी किसी दस्तावेज अथवा पत्र द्वारा ही भारत सरकार वचनबद्ध होती है। किसी अन्य अधिकारी द्वारा जारी किया हुआ दस्तावेज अथवा पत्र भारत सरकार के लिए बन्धनकारी नहीं होता। इसलिए इसे नियमों में स्पष्ट शब्दों में कहने की आवश्यकता होती है कि उप सचिव को, अथवा संयुक्त सचिव को अथवा अपर सचिव को अथवा केवल सचिव को ही भारत सरकार को वचनबद्ध करने की शक्ति प्राप्त होगी। इसलिए यह मेरी समझ में नहीं आता कि जो व्यक्ति भारत सराकर की ओर से केवल हस्ताक्षर कर रहा हो, उस पर व्यक्तिगत रूप से दायित्व क्यों हो, क्योंकि यह भारत सरकार के प्राधिकार से अथवा उसके अन्तर्गत कार्य करेगा, यदि भारत सरकर किसी आदान-प्रदान के लिए स्वीकृति देती है, किंतु विधानमंडल उस पर आपत्ति करता है और यह समझता है कि वह अनावश्यक है अथवा हानिकारक है अथवा कार्यपालिका सरकार को संसद द्वारा प्रदत्त विधायी प्राधिकार के अन्तर्गत नहीं है, तो यह मामला सरकार और संसद के आपस में तय करने का है। संसद या तो सरकार को पदच्युत कर सकती है या संविदा का शून्यन कर सकती है या जो भी चाहे कर सकती है। किन्तु यह मेरी समझ में नहीं आता कि किसी ऐसे व्यक्ति को, जो अन्य पक्ष को केवल यह विश्वास दिलाने के लिए नियुक्त किया गया हो कि वह भारत सरकार की ओर से हस्ताक्षर कर रहा है, किसी प्रकार उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। मेरे मित्र श्री त्यागी की आपत्ति में कोई सार नहीं है।

माननीय सभापति : अब मैं इन विभिन्न संशोधनों पर मत लेता हूँ।

[डॉ. अम्बेडकर के तीनों संशोधन स्वीकृत हुए। अनुच्छेद २७३ संशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।]

अनुच्छेद २७४

माननीय सभापति : अब अनुच्छेद 274 पर विचार-विमर्श हो सकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ कि:

"अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में दूसरी जगह जहाँ पर "भारत सरकार" शब्द आए हैं, उनके स्थान पर "भारतीय संघ" शब्द रखे जाएँ।"

श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में अपने अन्य संशोधनों को भी प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ कि:

"अनुच्छेद 274 के खण्ड (2) के उप-खण्ड (क) में "भारत सरकार" शब्दों के स्थान पर "भारतीय संघ" शब्द रखे जाएं।"

मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2980 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में श्च्तंज प्श (भाग 1) शब्द और अंक के बाद अथवा भाग 3 शब्द और अंक प्रविष्ट किए जाएँ।"

मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2980 और 2981 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में विधानमंडल द्वारा शब्दों के स्थान पर विधानमंडल का शब्द रखा जाएँ।"

मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ कि:

"उपरोक्त संशोधन संख्या 204 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में "तत्स्थानी प्रान्तों" शब्दों के बाद अथवा "तत्स्थानी देशी राज्य" शब्द प्रविष्ट किए जाएँ।"

मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ कि:

"उपरोक्त संशोधन संख्या 206 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (2) के उप-खण्ड (ख) में -

(1)"कोई प्रान्त" शब्दों के बाद "अथवा कोई देशी राज्य" शब्द प्रविष्ट किए जाएँ और

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 15 जून, 1949, पृ. 900

+ पूर्वोक्त, पृष्ठ 901-02

(2)"प्रांत" शब्दों के बाद "अथवा देशी राज्य" शब्द प्रविष्ट किए जाएँ।"

श्री जसपतराय कपूर (संयुक्त प्रान्त : जनरल) : मैं अपने संशोधन संख्या 2981 और संशोधन संख्या 2984 को उपस्थित नहीं कर रहा हूँ। किन्तु यदि उचित समझा जाए तो उन्हें मसौदा-समिति के सामने उनके विचारार्थ रखे जाएँ।

* * * * *

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् उचित यह होगा कि मैं सभा के सम्मुख इस अनुच्छेद को उस रूप में पढ़ कर सुनाऊँ जैसा कि यह मेरे विभिन्न संशोधनों को समाविष्ट करने से हो जाएगा। अनुच्छेद इस प्रकार हो जाएगा।

"भारत संघ के नाम से, भारत सरकार व्यवहार-वाद ला सकेगी अथवा उसके विरुद्ध व्यवहार-वाद लाया जा सकेगा तथा इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 अथवा भाग 2 में उल्लिखित किसी राज्य के नाम से, उस राज्य की सरकार व्यवहार-वाद ला सकेगी अथवा उसके विरुद्ध व्यवहार-वाद लाया जा सकेगा, तथा इस संविधान द्वारा दी गई शक्तियों के आधार पर, संसद द्वारा ऐसे राज्य के विधानमंडल द्वारा, जो अधिनियम बनाया जाए, उसके उपबंधों के अधीन रहते हुए वे अपने-अपने कार्यों के बारे में उसी प्रकार व्यवहार-वाद ला सकेंगे, अथवा उनके विरुद्ध उसी प्रकार व्यवहार-वाद लाया जा सकेगा, जिस प्रकार भारत अधिराज्य और तत्स्थानी प्रान्त अथवा तत्स्थानी देशी राज्य व्यवहार-वाद ला सकते अथवा उनके विरुद्ध व्यवहार-वाद लाया जा सकता, यदि इस संविधान को अधिनियम का रूप न दिया गया होता।"

(2)यदि इस संविधान के प्रारम्भ पर -

(क) कोई ऐसी विधि कार्यवाहियाँ लम्बित हैं जिसमें भारत अधिराज्य एक पक्ष है, तो उन कार्यवाहियों में उक्त अधिराज्य के स्थान में भारत संघ समझा जाएगा, तथा

(यह एक नई बात है -)

(ख) कोई ऐसी विधि-कार्यवाहियाँ लम्बित हैं, जिनमें कोई प्रान्त या कोई देशी राज्य एक पक्ष है, तो उन कार्यवाहियों में उस प्रान्त या देशी राज्य के स्थान में तत्स्थानी राज्य समझा जाएगा।

यह स्पष्ट है कि इस अनुच्छेद में यह निर्धारित किया गया है कि व्यवहार-वाद और कार्यवाहियाँ किस प्रकार आरम्भ की जाएंगी, इसका और कोई महत्त्व नहीं है। आरम्भ में ये शब्द थे कि भारत सरकार के नाम से व्यवहार-वाद लाया जाएगा। यह स्पष्ट है कि भारत सरकार अर्थात् कार्यपालिका सरकार एक अस्थायी निकाय होगी। एक समय जो सरकार पदारूढ़ होगी वह आगे चलकर लुप्त हो जाएगी और कुछ अन्य लोग आएंगे

जो कार्यपालिका का भार संभालेंगे।

श्री एच.वी. कामत : सरकार अस्थायी न होगी, सरकार के पदाधिकारी भले ही अस्थायी हो सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : भारत सरकार और भारतीय संघ में अन्तर है। भारत सरकार, विधि की दृष्टि से एकक नहीं है, भारतीय संघ विधि की दृष्टि से एकक है। वह एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न एकक हैं और उसके अधिकार तथा दायित्व हैं। इसलिए यह उचित है कि केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध जो कोई व्यवहार-वाद लाया जाए वह संघ के नाम से लाया जाए अथवा संघ के विरुद्ध लाया जाए।

"तत्स्थानी राज्य" पदावली के सम्बन्ध में कुछ आपत्ति की गई है। इसमें कोई संन्देह नहीं कि यह कहना कठिन होगा कि कौन राज्य पुराने राज्य का तत्स्थानी राज्य होगा। इस कठिनाई को दूर करने के लिए अनुच्छेद 303 (1) (6) में उपबंध रखा गया है, जो संविधान के मसौदे के पृष्ठ 145 पर देखा जा सकता है। वह इस प्रकार है कि तत्स्थानी प्रान्त अथवा तत्स्थानी राज्य से संशयात्मक दशाओं में अभिप्रेत है ऐसा प्रान्त या राज्य जिसे प्रश्नास्पद विशिष्ट प्रयोजन के लिए राष्ट्रपति यथास्थिति तत्स्थानी प्रान्त अथवा तत्स्थानी राज्य निर्धारित करे। चूंकि क्षेत्र आदि में कुछ परिवर्तन होंगे और यह कहना कठिन है कि पुराने प्रान्त अथवा राज्य का तत्स्थानी प्रान्त अथवा राज्य कौन होगा। इसलिए यह कठिनाई राष्ट्रपति को यह निर्धारित करने की शक्ति देने से ही दूर हो सकती है कि किसी पुराने राज्य का तत्स्थानी राज्य कौन है। इसी कारण यह उपबन्ध रखा गया है।

उप-खण्ड (2) लम्बित कार्यवाहियों के सम्बन्ध में है और उसमें केवल यह सुझाव रखा गया है कि जब कभी कोई कार्यवाहियां लम्बित हों और जब व्यवहार-वाद लाने वाले पक्ष अथवा जिनके विरुद्ध व्यवहार-वाद लाया जाए वे पक्ष उन पक्षों से भिन्न हों जिनके सम्बन्ध में हमने उप-खण्ड (1) में उपबंध रखे हैं, तो पुरानी कार्यवाहियों में भारतीय संघ अथवा तत्स्थानी राज्य शब्द प्रविष्ट किए जाएंगे ताकि राज्यों के विरुद्ध अनुच्छेद 274 (1) के अधीन व्यवहार-वाद लाया जा सके। मेरे माननीय मित्र श्री सन्थानम् ने यह आपत्ति की है कि "इस संविधान से दी हुई शक्तियों के आधार पर" शब्द बिल्कुल अनावश्यक हैं और इसके सम्बन्ध में मुझे केवल यह कहना है कि मैं उनके कथन से सहमत नहीं हूँ और मेरे विचार से ये शब्द बहुत आवश्यक हैं।

(संशोधन स्वीकार कर लिया गया। अनुच्छेद २७४, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।)

* * * * *

नवीन अनुच्छेद २७४-क

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् मैं यह चाहता हूँ कि इस अनुच्छेद पर विचार-विमर्श स्थगित किया जाए।

माननीय सभापति : इसके अतिरिक्त श्री सिंधवा का एक लम्बा संशोधन है जिसका उद्देश्य एक नवीन भाग प्रविष्ट करना है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : मैं यह सुझाव रखता हूँ कि सभा भाग 13 निर्वाचन विषयक अध्याय को उठाए, अर्थात् जैसा कि कार्यावली में अंकित है अनुच्छेद 289 पर और उसके आगे के अनुच्छेद पर विचार किया जाए।

श्री आर.के. सिंधवा : श्रीमान् मैं जिस नवीन अनुच्छेद को उपस्थित करना चाहता हूँ उसका सम्बन्ध स्थानीय क्षेत्रों अर्थात् सारे भारत के राज्य क्षेत्र के शहरी और देहाती क्षेत्रों के परिसीमन से है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसे स्थगित किया जा रहा है।

* * * * *

अनुच्छेद २८९

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ कि:

"अनुच्छेद 289 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाए:"

निर्वाचन का अधीक्षा नियंत्रण एवं निर्देशन निर्वाचन आयोग में निहित होगा।

289. (1) इस संविधान के अंतर्गत होने वाले समाज संसदीय सभी राज्यों के विधान -मंडल तथा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के निर्वाचन के तैयार होने वाली निर्वाचक सूचियों का अधीक्षण निर्देशन एवं नियंत्रण के साथ-साथ संसदीय तथा विधानमंडलों के दौरान उत्पन्न संदेहों तथा विवादों के निपटान के निर्वाचन अधिकरणों की नियुक्ति का अधिकार एक आयोग में निहित होगा जो इस संविधान में निर्वाचन आयोग के नाम से निर्विष्ट है। इसकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाएगी।

(2) निर्वाचन आयोग मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा, यदि कोई हो तो, अन्य निर्वाचन-आयुक्तों से, जितने कि राष्ट्रपति समय-समय पर नियत करे, मिलकर बनेगा और जब कोई अन्य निर्वाचन आयुक्त इस प्रकार नियुक्त किया गया हो तब मुख्य निर्वाचन आयुक्त निर्वाचन-आयोग के सभापति के रूप में कार्य करेगा।

(3) लोकसभा, तथा प्रत्येक राज्य की विधानसभा के प्रत्येक आम चुनाव से पूर्व, तथा विधानपरिषद् वाले प्रत्येक राज्य की विधानपरिषद् के लिए पहले आम चुनाव तथा तत्पश्चात् प्रत्येक द्विवार्षिक निर्वाचन से पूर्व राष्ट्रपति निर्वाचन आयोग से परामर्श करके खंड (1) द्वारा निर्वाचन आयोग को दिए गए कृत्यों के पालन में आयोग की सहायता के लिए ऐसे प्रादेशिक आयुक्त भी नियुक्त कर सकेगा जैसे वह आवश्यक समझें।

(4) संसद द्वारा निर्मित किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए निर्वाचन आयुक्तों और प्रादेशिक आयुक्तों की सेवा की शर्तें और पदावधि ऐसी होंगी जैसी कि राष्ट्रपति नियम द्वारा निर्धारित करे:

परन्तु मुख्य निर्वाचन आयुक्त को उसके पद से बिना वैसे कारणों और बिना वैसी रीति के नहीं हटाया जाएगा जैसे कारणों और रीति के उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश हटाया जा सकता है तथा मुख्य निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति के पश्चात् उसकी सेवा की शर्तों में उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा :

परन्तु यह और भी कि किसी अन्य निर्वाचन आयुक्त या प्रादेशिक आयुक्त को मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सिफारिश के बिना पद से नहीं हटाया जाएगा।

(5) जब निर्वाचन-आयोग ऐसी प्रार्थना करे, तब राष्ट्रपति या किसी राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख निर्वाचन आयोग या प्रादेशिक आयुक्त को ऐसे कर्मचारी प्राप्त कराएगा जैसे कि खंड (1) द्वारा निर्वाचन आयोग को दिए गए कृत्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक हों।

माननीय सभापति : मुझे कई संशोधनों की सूचना दी गई है। कुछ का उद्देश्य यह है कि अनुच्छेद 289, 290 और 291 के स्थान पर अन्य अनुच्छेद प्रविष्ट किए जाएँ और कुछ संशोधन उन संशोधनों पर है जो प्रस्तुत किए जाएंगे। मेरे विचार से मुझे इन संशोधनों को पहले लेना चाहिए जिनका उद्देश्य यह है कि इन अनुच्छेदों के स्थान पर अन्य अनुच्छेद रखे जाएँ। डॉ. अम्बेडकर एक संशोधन प्रस्तुत कर चुके हैं। एक अन्य संशोधन पंडित ठाकुरदास भार्गव के नाम से है।

पंडित हृदयनाथ कुंजरू (संयुक्त प्रान्त : जनरल) : श्रीमान् क्या मैं यह पूछ सकता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर ने जो प्रस्ताव प्रस्तुत किया है उसके संबंध में क्या वे कुछ कहने नहीं जा रहे हैं? उसका संबंध एक महत्त्वपूर्ण विषय से है। क्या यह उचित नहीं है कि अनुच्छेद 289 के संबंध में डॉ. अम्बेडकर ने जो संशोधन प्रस्तुत किया है उसके संबंध में वे कुछ कहें? मेरे विचार से उचित यही होगा कि वे सभा को यह बताने का कष्ट करें कि वे अनुच्छेद 289 के स्थान पर एक नवीन अनुच्छेद को किस कारण प्रविष्ट करना चाहते हैं। यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण विषय है और ये खेद की बात है कि इस

प्रस्ताव के संबंध में डॉ. अम्बेडकर ने कुछ भी कहना उचित नहीं समझा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : अध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव के समर्थन में मैंने दो कारणों से कुछ कहना उचित नहीं समझा। एक कारण यह है कि यदि इस अनुच्छेद के संबंध में वाद-विवाद हुआ, जो अवश्य ही होगा, तो उस समय कुछ प्रश्न उठाए जाएँगे और मैंने यही उचित समझा कि मैं उनका अन्त में उत्तर दूँ ताकि मेरे भाषण में उन्हीं तर्कों की पुनरुक्ति न हो। एक कारण यह है।

दूसरा कारण यह है कि मैंने यह विचार किया कि प्रत्येक सदस्य ने मेरा संशोधन पढ़ लिया होगा और चूँकि वह बहुत सरल है, इसलिए उसका आशय हर एक समझ गया होगा। यह स्पष्ट है कि मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू जल्दी में इस अनुच्छेद के मेरे नए मसौदे को नहीं पढ़ पाए हैं।

पंडित हृदयनाथ कुंजरू : मैंने उसकी प्रत्येक पंक्ति पढ़ी है। मैं केवल यह चाहता हूँ कि माननीय सदस्य महोदय सभा के प्रति कुछ आदर भाव दिखाएँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : सभा को स्मरण होगा कि बहुत पहले संविधान सभा ने अपनी कार्यवाहियों में मूलाधिकारों पर विचार करने के लिए एक समिति नियुक्त करने का आयोजन किया था। उस समिति ने अपने प्रतिवेदन में यह लिखा था कि यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि निर्वाचनों को स्वतंत्र रूप से कराना तथा विधान मंडल के निर्वाचनों में कार्य पालिका का हस्तक्षेप न होने देना एक मूलाधिकार है और इसे मूलाधिकार-विषयक अध्याय में समाविष्ट करना चाहिए। जब यह विषय सभा के सामने रखा गया तो सभा ने यह मत प्रकट किया कि यद्यपि इसमें किसी को आपत्ति नहीं हो सकती कि यह एक आधारभूत महत्त्व का विषय है किन्तु इसे संविधान के किसी अन्य भाग में स्थान देना चाहिए न कि मूलाधिकार विषयक अध्याय में। सभा ने बिना किसी प्रकार की असहमति प्रकट किए हुए इसकी पुष्टि की कि विधान मंडलों के लिए स्वतंत्र तथा शुद्ध रूप से निर्वाचनों को करने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि उनमें तत्कालीन कार्यपालिका का किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो। सभा के इस निर्णय को देखते हुए मसौदा-समिति ने इस विषय को मूलाधिकारों के अध्याय से निकाल दिया और उसे एक पृथक भाग में, जिसमें अनुच्छेद 289, 290 आदि हैं, स्थान दिया। इसलिए जहाँ तक इस आधारभूत प्रश्न का संबंध है कि निर्वाचन-संगठन पर कार्यपालिका सरकार का कोई नियंत्रण न होना चाहिए, किसी प्रकार का मतभेद नहीं था। अनुच्छेद 289 में संविधान-सभा के उसी निर्णय का समावेश है। उसके द्वारा संसद के राज्यों के विधान मंडलों के निर्वाचनों की अधीक्षण, निदेशन तथा नियंत्रण तथा उनके लिए नामावली तैयार करने का अधिकार कार्यपालिका के अतिरिक्त एक निकाय को सौंपा गया है जो निर्वाचन आयोग कहा जाएगा। उप-खण्ड (1) में यही उपबन्ध है।

उप–खण्ड (2) में कहा गया है कि एक मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा उतने अन्य निर्वाचन आयुक्त होंगे जितने राष्ट्रपति समय–समय पर नियुक्त करें। मसौदा–समिति के सामने दो विकल्प थे, अर्थात् या तो एक स्थायी निकाय को स्थापित करना जिसमें निर्वाचन काल में एक तदर्थ निकाय को स्थापित करने की शक्ति राष्ट्रपति को देना। समिति ने मध्यम मार्ग का अवलम्बन किया। उप–खण्ड (2) द्वारा मसौदा–समिति ने यही प्रस्ताव किया है कि एक व्यक्ति को अर्थात् मुख्य निर्वाचन आयुक्त को, स्थायी रूप से पदासीन रखा जाए ताकि निर्वाचन संगठन सूक्षम रूप में हमेशा उपलब्ध रहे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि साधारणत: प्रत्येक पाँच वर्ष के पश्चात् निर्वाचन होंगे किन्तु यह प्रश्न भी है कि उप–निर्वाचन किसी समय हो सकते हैं। पाँच वर्ष समाप्त होने के पूर्व ही विधानसभा विघटित हो सकती है। इसलिए इन आकस्मिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह पर्याप्त होगा कि एक पदाधिकारी, जो मुख्य निर्वाचन आयुक्त के नाम से कहा जाएगा, स्थायी रूप से पदासीन रहे और जब निर्वाचन हों तब राष्ट्रपति अन्य लोगों को नियुक्त करके निर्वाचन आयोग में सम्मिलित कर सकता है।

श्रीमान्, इसके अतिरिक्त आरंभ में अनुच्छेद 289 के अधीन यह आयोजन था कि केन्द्रीय विधानमंडल के दोनों - उच्च और निचले सदन के निर्वाचनों के लिए एक आयोग हो और प्रत्येक प्रान्त तथा राज्य के लिए एक पृथक निर्वाचन आयोग हो जिसे राज्यपाल अथवा राज्य का राजप्रमुख नियुक्त करे। उसमें तथा अनुच्छेद 289 के वर्तमान रूप में निस्सन्देह आधारभूत अन्तर है। इस अनुच्छेद के अधीन यह प्रस्ताव रखा गया है कि निर्वाचन संगठन एक ही आयोग के हाथ में रखा जाए और उसकी सहायता प्रादेशिक आयुक्त करें जो प्रान्तीय सरकार के अधीन रहकर कार्य न करें बल्कि केन्द्रीय निर्वाचन आयोग के अधीक्षण तथा नियंत्रण में कार्य करें। जैसा कि मैं कह चुका हूँ यह एक आधारभूत परिवर्तन है। किन्तु यह परिवर्तन आवश्यक हो गया है क्योंकि हम यह देखते हैं कि इस समय भारत के कुछ प्रान्तों में मिश्रित जन–समुदाय है। उनमें एक तो वे लोग बसते हैं जो आरंभ से वहाँ के निवासी हैं। उनके साथ ऐसे लोग भी रहते हैं जिनका मूल वंश तथा जिनकी भाषा तथा संस्कृति उन बहुसंख्यक लोगों से भिन्न है जो वहाँ के निवासी हैं। मसौदा–समिति तथा केन्द्रीय सरकार के ध्यान में यह बात लाई गई है कि ऐसे प्रान्तों में कार्यपालिका सरकार इस प्रकार से प्रबंध कर रही है अथवा इस प्रकार से प्रबंध करने का आदेश दे रही है कि ये लोग जिनका मूल वंश तथा जिनकी भाषा और संस्कृति वहाँ के निवासियों से भिन्न है, निर्वाचन नामावलियों में स्थान नहीं दिए जा रहे हैं। मैं आशा करता हूँ कि सभा यह समझती है कि मताधिकार ही जनतंत्र का आधार स्तम्भ है। हमारे संविधान के अधीन वर्णित अवस्थाओं में 21 वर्ष की आयु के किसी वयस्क को यदि मतदाता के रूप में निर्वाचन नामावली में स्थान दिया जा सकता है तो उसे किसी स्थानीय सरकार के विद्वेष के कारण अथवा किसी पदाधिकारी

की सनक के कारण इस अधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। यदि यह हुआ तो इससे जनतंत्रात्मक सरकार के मूल पर ही आघात होगा। इसलिए ताकि किसी प्रान्त के ऐसे लोगों के प्रति जिनका मूल तथा वंश जिनकी भाषा और संस्कृति वहाँ के निवासियों से भिन्न हो प्रान्तीय सरकारें अन्याय न कर सकें यह उचित समझा गया कि उस मूल प्रस्ताव को स्वीकार न किया जाए जिसके अधीन प्रत्येक प्रान्त के लिए पृथक निर्वाचन आयोग स्थापित किया जाता और जिसका पथ-प्रदर्शन राज्यपाल और स्थानीय सरकार द्वारा होता। इसी कारण इस अनुच्छेद में परिवर्तन किया गया है और अब इसके अधीन यह आयोजन है कि निर्वाचन का पूरा संगठन केन्द्रीय निर्वाचन आयोग के हाथ में हो और वह आयोग निर्वाचक-पदाधिकारियों, मतग्राही पदाधिकारियों और निर्वाचक-नामावली के पर्यावलोकन में लगे हुए अन्य लोगों को निदेश दे ताकि भारत के किसी ऐसे नागरिक के प्रति अन्याय न हो सके, जिसे संविधान के अधीन निर्वाचक-नामावली में अपना नाम प्रविष्ट कराने का अधिकार हो। संविधान के मसौदे के वर्तमान उपबन्धों में यही एक आधारभूत परितर्वन किया गया है।

जहाँ तक खण्ड (4) का संबंध है, हमने यह राष्ट्रपति पर छोड़ दिया है कि वह निर्वाचन आयोग के सदस्यों की सेवा की शर्तें तथा पदावधि निश्चित करे किन्तु एक दो शर्तें भी रख दी हैं और इसका उल्लेख कर दिया है कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त उन्हीं दशाओं में हटाया जा सकेगा जिन दशाओं में उच्चतम न्यायालय का कोई न्यायाधीश हटाया जा सकता है। यदि इस सभा का उद्देश्य यह है कि निर्वाचन-संबंधी मामलों पर तत्कालीन कार्यपालिका सरकार का नियंत्रण न रहे तो यह अत्यंत आवश्यक है कि हम जिस नवीन संगठन को, अर्थात् निर्वाचन आयोग को, स्थापित करने जा रहे हैं उसे कार्यपालिका स्वेच्छा से विघटित न कर सके। इसलिए जहाँ तक पदच्युत होने का प्रश्न है, हमने इसके संबंध में मुख्य निर्वाचन आयुक्त की वही प्रतिष्ठा निश्चित की है जो उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की है। किन्तु हम इस आयोग के अन्य सदस्यों को यह प्रतिष्ठा प्रदान करने नहीं जा रहे हैं। हमने यह राष्ट्रपति पर छोड़ दिया है कि वह जिन दशाओं में भी उचित समझे, निर्वाचन-आयोग के अन्य सदस्यों को पदच्युत करे, हमने केवल एक शर्त रखी है और वह यह है कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त को इस आशय की सिफारिश देनी होगी कि अमुक व्यक्ति को पदच्युत करना उचित तथा न्यायपूर्ण है।

इसके अतिरिक्त हमें यह प्रश्न भी हल करना था कि जो कार्य निर्वाचन आयोग को सौंपा गया है उसे पूरा करने के लिए उसे स्वतंत्र रूप से अपने कर्मचारी रखने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए अथवा नहीं। यह अनुभव किया गया कि यदि निर्वाचन आयोग को, निर्वाचक नामावली तैयार करने, निर्वाचक नामावलियों का पर्यावलोकन करने और निर्वाचनों के संचालन आदि का कार्य करने के लिए स्वतंत्र रूप से कर्मचारी वर्ग रखने का प्राधिकार दिया गया तो दो स्थानों पर कर्मचारी-वर्ग एक ही कार्य करेंगे

जिससे प्रशासन-व्यय व्यर्थ में बढ़ जाएगा। यह धन बड़ी आसानी से बचाया जा सकता है क्योंकि, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, निर्वाचन आयोग के पास कभी तो बहुत काम होगा और कभी कुछ भी काम नहीं होगा। इसलिए खण्ड (5) में हमने यह उपबन्धित किया है कि निर्वाचन आयोग को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह प्रान्तीय सरकारों से, दफ्तर के काम के लिए ऐसे कर्मचारियों को ले जिनकी उसे अपने काम को पूरा करने के लिए आवश्यकता हो। जब काम पूरा हो जाएगा तो ये कर्मचारी प्रान्तीय सरकार को वापस कर दिए जाएंगे। किन्तु जब तक ये लोग निर्वाचन आयोग के अधीन कार्य करेंगे तब तक उसी के प्रशासन के अधीन रहेंगे और कार्यपालिका सरकार के प्रशासन के अधीन नहीं रहेंगे। इस अनुच्छेद में यही उपबन्ध है। मुझे आशा है कि सभा की समझ में अब यह आ गया होगा कि उनका अर्थ क्या है और उनमें तथा संविधान के मसौदे के मूल अनुच्छेद में कितना अन्तर है।

* * * * *

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई : जनरल) : अध्यक्ष महोदय, मेरे इस संशोधन पर कई दृष्टिकोणों से आलोचना की गई है। किन्तु अपने उत्तर में मेरा यह विचार नहीं है कि बहस में जितनी बातें उठाई गई हैं उन सबका उत्तर दूँ। मेरा विचार केवल उन्हीं बातों का उत्तर देने का है जो मेरे मित्र प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना ने उठाई हैं और जिस पर मेरे मित्र पंडित हृदयनाथ कुंजरू ने बल दिया है। मेरे मित्र प्रोफेसर सक्सेना ने जो संशोधन पेश किया है उसमें असल में दो बातें हैं जिन पर हमें विचार करना है। एक बात तो इस निर्वाचन आयोग में आयुक्तों की नियुक्ति के विषय में है और दूसरी बात निर्वाचन आयुक्तों को हटाने के विषय में है। जहाँ तक हटाने के प्रश्न का संबंध है, मेरा वैयक्तिक रूप से यह खयाल है कि मेरे प्रस्ताव में किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि सदन देखेगा कि जहाँ तक निर्वाचन आयोग के सदस्यों को हटाने का संबंध है, मुख्य आयुक्त की वही स्थिति है जो कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की है। और मैं नहीं जानता कि हमने खंड (4) के परन्तुक में जितनी सुरक्षा की व्यवस्था की है उससे अच्छी व्यवस्था किसी भी अन्य संविधान में विद्यमान हो।

अन्य आयुक्तों के विषय में यह उपबंध है कि उन्हें हटाने की शक्ति तो राष्ट्रपति के पास रहने दी गई है, पर उस शक्ति पर एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सीमा है कि अन्य आयुक्तों को हटाने के मामले में राष्ट्रपति मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सिफारिश पर ही कार्यवाही कर सकता है। अत: मेरा कहना यह है कि जहाँ तक हटाने के प्रश्न का संबंध है, मेरे संशोधन में जो उपबन्ध रखे गए हैं वह पर्याप्त हैं और उस प्रयोजन के लिए अधिक कुछ भी आवश्यक नहीं है।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 16 जून, 1949, पृ. 928-30

अब नियुक्ति के प्रश्न के संबंध में मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि मेरे मित्र प्रोफेसर सक्सेना के कथन में काफी बल है कि निर्वाचन आयुक्त की पदावधि को निश्चित और सुरक्षित करने से कोई लाभ नहीं है, यदि संविधान में ऐसे व्यक्ति को वर्जित करने का कोई उपबन्ध न हो जो कि मूर्ख या दुष्ट या ऐसा व्यक्ति हो जो कि कार्यपालिका की मुट्ठी में रह सकता हो। मुझे स्वीकार करना है कि मेरे उपबंध में कोई ऐसी बात नहीं है जिससे कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त या अन्य निर्वाचन आयुक्तों के पद पर किसी अनुपयुक्त व्यक्ति को नामनिर्देशित होने से रोका जा सके। मैं यह भी स्वीकार करना चाहता हूँ कि यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न है जिससे मुझे बहुत सरदर्द रहा है और मुझे इस पर संदेह नहीं है कि इससे सदन को बहुत सरदर्दी होगी। संयुक्त राज्य अमरीका ने इस प्रश्न का हल अपने संविधान के अनुच्छेद 2 धारा (2) के उपबंध द्वारा कर लिया है जिससे कि अनुच्छेद 2 की धारा (2) में उल्लिखित कुछ नियुक्तियाँ राष्ट्रपति द्वारा सीनेट से पूछे बिना नहीं की जा सकतीं; जिससे कि जहाँ तक नियुक्ति की शक्ति का संबंध है, यद्यपि वह राष्ट्रपति में निहित है तदापि इस पर सीनेट को देखभाल का अधिकार है जिससे कि सीनेट किसी समय जब कोई नाम प्रस्तावित किया जाए, पूछताछ करके अपने आपको संतुष्ट कर सकती है कि प्रस्तावित व्यक्ति समुचित व्यक्ति है। परन्तु यह भी समझ लेना चाहिए कि वह बहुत विलम्बकारी तरीका है। जब नियुक्ति की जाए तब शायद संसद समवेत न हो और नियुक्ति करना तत्काल आवश्यक हो सकता है। दूसरे अमरीकी आचरण से नियुक्तियाँ करने में राजनैतिक विचार प्रविष्ट हो सकते हैं और वास्तव में ऐसा होता भी है। परिणामत: मैं यह तो समझता हूँ कि अमरीकी संविधान के उपबंध नियुक्तियाँ करने में राष्ट्रपति पर अत्यन्त ठीक रोक है पर उससे प्रशासनिक कठिनाइयाँ हो सकती हैं और इसीलिए मैं हिचकिचा रहा हूँ कि क्या मुझे आगे चलकर अपने संविधान में अमरीकी उपबंधों के रखने की सिफारिश करनी चाहिए। मसौदा-समिति ने इस प्रश्न पर अत्यधिक विचार किया है, क्योंकि, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, यह हमारे लिए सबसे बड़ा सरदर्द है, और मध्यवर्ती उपाय के रूप में यह विचार किया गया था कि यदि यह सभी राष्ट्रपति के लिए तथाकथित अनुदेश पत्र बना दे ओर दे दें और उसमें नियुक्तियाँ करने से पूर्व कोई ऐसी व्यवस्था रख दे जिससे परामर्श करना राष्ट्रपति के लिए आवश्यक हो तो मेरे विचार में अमरीकी संविधान से जो कठिनाइयाँ पैदा होती प्रतीत होती हैं वे हट सकती हैं और उसमें जो लाभ है वह प्राप्त हो सकता है। इस समय मेरे लिए यह कहना असंभव है कि जब सदन के समक्ष उन अनुदेशों का मसौदा आएगा तब सदन का क्या दृष्टिकोण होगा। यदि सदन मसौदा -समिति के इस सुझाव को ठुकरा दे कि राष्ट्रपति के लिए एक अनुदेश पत्र होना चाहिए, जिसमें अन्य बातों के अतिरिक्त नियुक्तियाँ करने के विषय में भी एक उपबंध होना चाहिए, तो फिर यह समस्या उस प्रकार सुलझ जाएगी। किन्तु जैसा कि मैंने कहा है, मेरे लिए यह कहना कठिन है कि क्या होगा। अत: अपने माननीय मित्र

प्रो. सक्सेना की आलोचना को मानकर, जो मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू की आलोचना से समर्थित हुई है, मैं संशोधन संख्या 99 में कुछ संशोधन करने के लिए तैयार हूँ। मुझे अफसोस है कि मुझे इन संशोधनों को घुमाने का समय नहीं मिला, किन्तु मैं उन्हें पढ़ दूंगा तो सदन को पता लग जाएगा कि मैं क्या प्रस्ताव कर रहा हूँ।

मेरा प्रथम संशोधन यह है:

"कि खंड (1) के अन्त में "राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाएगा" ये शब्द हटा दिए जाएं।

"खंड (2) की पंक्ति 4 में नियुक्त करना (appoint) शब्द के स्थान पर नियत 'fix' शब्द रख दिए जाएं, तथा उसके पश्चात् निम्न प्रविष्ट कर दिए जाएं:

"मुख्य चुनाव आयुक्त और अन्य चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति संसद द्वारा इस संबंध में बनाए गए किसी कानून के उपबंधों के अन्तर्गत राष्ट्रपति द्वारा की जाएंगी।"

"जब कोई अन्य चुनाव आयुक्त इस प्रकार नियुक्त किया जाएगा।"

आदि, इन शब्दों के पश्चात् शेष खंड की संख्या खंड (2-क) कर दी जाए।

श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर (मद्रास : जनरल) : श्रीमन्, एक औचित्य का प्रश्न है। नई बातें पेश की जा रही हैं जिनके लिए इस समय अनुमति नहीं मिलनी चाहिए, अन्यथा इस पर और वाद-विवाद आवश्यक होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे आशा है कि सभापति अन्य सदस्यों को अपने विचार प्रकट करने की अनुमति देंगे।

माननीय सभापति : मेरे विचार में ऐसी अवस्था में सर्वोत्तम उपाय इस अनुच्छेद पर विचार को स्थगित कर देना होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : ये संशोधन बिल्कुल आपत्तिजनक नहीं है; उनमें यही लिखा है कि जो कुछ किया जाए वह संसद द्वारा निर्मित विधियों के अधीन होना चाहिए।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी (मद्रास : जनरल) : मेरा सुझाव है कि इन संशोधनों की प्रतिलिपियाँ तैयार करा कर सदस्यों को दे दी जाएँ और उन्हें बाद में लिया जाए।

माननीय श्री के. सन्थानम् (मद्रास : जनरल) : मेरा सुझाव है कि इन पर मसौदा-समिति विचार करे। चाहे वे पारिभाषिक ही हों, पर हमें उन पर विचार करने का अवसर मिलना चाहिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इन संशोधनों को मसौदा-समिति से परामर्श करके ही पेश किया गया है।

* * * * *

माननीय सभापति : संशोधनों को पेश होने दिया जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरा अगला संशोधन यह है:

"कि खंड (4) के आरंभ में ये शब्द प्रविष्ट कर दिए जाएँ:

इस विषय में संसद द्वारा बताई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए।"

माननीय श्री के. सन्थानम् : श्रीमान् यह सारवान संशोधन है क्योंकि राष्ट्रपति के स्वविवेक पर संसदीय विधि का बन्धन पड़ सकता है।

माननीय सभापति : मैं नहीं समझता कि अधिक बहस आवश्यक है; इन्हें पेश होने दिया जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : आप संविधान पर तकनीकी बातों से विचार नहीं कर सकते। अत्यधिक तकनीकी बातों से संविधान-निर्माण नष्ट हो जाएगा।

श्री एच.वी. कामत : आपने उस दिन निर्णय किया था कि सारवान संशोधन स्थगित कर दिए जाएंगे

माननीय सभापति : यदि इन्हें सारवान संशोधन समझा जाता है तो वे स्थगित कर दिए जाएंगें सदन में काफी लोग स्थगन के पक्ष में प्रतीत होते हैं, अत: बहस स्थगित रहेगी।

* * * * *

नया अनुच्छेद २८९-क

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि प्रथम सूची (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 110 के निर्देश से प्रस्तावित अनुच्छेद 289-क के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाए:

289: (क). संसद के प्रत्येक सदन अथवा किसी राज्य के विधानमंडल के सदन

लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के लिए चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर लेना।

धर्म, प्रजाति, जाति या लिंग के आधार पर कोई व्यक्ति निर्वाचक नामावली में सम्मिलित किए जाने के लिए न तो अपात्र होगा न ही उससे निकाले जाने के लिए दावा करेगा। या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचन के हेतु प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्र के लिए एक सामान्य निर्वाचक नामावली होगी तथा केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या इनमें से किसी के आधार पर कोई व्यक्ति ऐसी किसी नामावली में सम्मिलित किए जाने के

लिए न तो अपात्र होगा और न ही उससे निकाले जाने का दावा करेगा।"

श्रीमान् इस अनुच्छेद का उद्देश्य सदन के उस विनिश्चय को कार्यान्वित करना है कि आगे चलकर पृथक् निर्वाचक-गण नहीं होंगे। वास्तव में यह खंड अनावश्यक है क्योंकि बाद के संशोधनों द्वारा हम संविधान के मसौदे के उन उपबंधों को हटा देंगे जिनमें मुस्लिमों, सिक्खों, आंग्ल भारतीयों आदि के प्रतिनिधित्व का उपबंध बनाया गया है। परिणामत: यह आवश्यक है। पर लोगों की यह भावना है कि हमने ऐसा महत्त्वपूर्ण विनिश्चय किया है जो विगत को लगभग समाप्त कर देता है, अत: यह अच्छा है कि संविधान में इसकी स्पष्ट चर्चा हो। इसी कारण मैंने यह संशोधन रखा है।

माननीय सभापति : क्या मैं इसका यह अर्थ समझूं कि केवल वाद-विवाद के प्रयोजन के लिए ही अपने यह पेश किया है और इसे आप पारित करवाना नहीं चाहते?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं, श्रीमान्, यह बात नहीं है। मैंने संशोधन पेश क्या है। मैं केवल कारण बता रहा था कि मैंने इसे पेश क्यों किया है।

मैं दूसरा संशोधन भी पेश करूँगा कि नया अनुच्छेद 289-ख प्रविष्ट कर दिया जाए। मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि संशोधन सूची के संशोधन संख्या 3087 के स्थान पर निम्न संशोधन रख दिया जाए:

'कि अनुच्छेद 289-क के पश्चात् निम्न अनुच्छेद रख दिया जाए:

'289-ख, लोकसभा प्रत्येक राज्य की विधान-सभा के लिए निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होंगे, अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति जो भारत का नागरिक है, तथा जो ऐसी तारीख पर, जैसी कि समुचित विधानमंडल द्वारा निर्मित किसी विधि के द्वारा या अधीन इसलिए नियत की गई हो, इक्कीस वर्ष की अवस्था से कम नहीं है, तथा इस संविधान अथवा समुचित विधानमंडल द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन अनिवास, चित्त विकृति, अपराध अथवा भ्रष्ट या अवैध आचार के आधार पर अनर्ह नहीं कर दिया गया है, ऐसे किसी निर्वाचन में मतदाता के रूप में पंजीबद्ध होने का हकदार होगा।'

(संशोधन स्वीकृत हुआ। अनुच्छेद २८९-ख संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 15 जून, 1949, पृ. 930

\+ पूर्वोक्त, पृष्ठ 930-31

अनुच्छेद २९०

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 290 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाए:

संसद की विधानमंडल चुनावों के संबंध में उपबंध बनाने की शक्ति

"290 इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद, समय-समय पर संसद की विधानमंडल चुनावों के संबंध में उपबंध बनाने की शक्ति के लिए विधि द्वारा ससंद के प्रत्येक सदन अथवा किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचनों या संबंधित अन्य विषयों के संबंध में जिनके अन्तर्गत निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन तथा ऐसे सदन या सदनों का सम्यक् गठन कराने के लिए आवश्यक विषय भी है, उपबंध कर सकेगी।"

श्रीमान् आपकी अनुमति से मैं दूसरे संशोधन को भी पेश करना चाहता हूँ जो इसमें संशोधन करता है। मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि प्रथम सूची (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 123 के निर्देश से नए अनुच्छेद 290 में, 'अन्तर्गत' शब्द के पश्चात् निर्वाचक नामावलियों का तैयार कराना तथा अन्य ये शब्द प्रविष्ट किए जाएँ।

माननीय सभापति : मैं देखता हूँ कि प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना ने अनुच्छेद 290 पर एक संशोधन की सूचना दी है। जब संशोधन पेश हुए थे तब वे यहाँ नहीं थे। पर यह सारवान संशोधन नहीं है।

यदि डॉ. अम्बेडकर उत्तर में कुछ नहीं कहना चाहते तो मैं इस संशोधन पर मत लूंगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे कुछ भी नहीं कहना है, श्रीमान्।

(डॉ. अम्बेडकर का उपर्युक्त संशोधन स्वीकार किया गया। अध्याय २९० संशोधित रूप में संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २९१

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 291 के स्थान पर, निम्न अनुच्छेद रख दिया जाए:

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 16 जून, 1949, पृ. 932

किसी राज्य के विधानमंडल को ऐसे विधानमंडल के लिए निर्वाचनों के संबंध में उपबंध बनाने की शक्ति

'291. इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए तथा जहाँ तक इस संबंध में संसद किसी राज्य के विधानमंडल को ऐसे विधानमंडल के लिए निर्वाचनों के संबंध में उपबंध बनाने की शक्ति उपबंध नहीं बनाती वहाँ तक, किसी राज्य का मंडल, समय-समय पर, विधि द्वारा, उस राज्य के विधानमंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचनों से सम्बद्ध या तत्संबंधी विषयों के संबंध में, जिनके अन्तर्गत ऐसे सदन या सदनों का सम्यक् गठन कराने के लिए आवश्यक विषय भी है, उपबंध कर सकेगा।''

श्रीमान् आपकी अनुमति से मैं छठी सूची, पंचम सप्ताह, के संशोधन संख्या 211 को भी पेश करता हूँ।

संशोधन इस प्रकार है:

"कि प्रथम सूची (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 128 के संदर्भ में नए अनुच्छेद 291 में, 'अन्तर्गत' शब्द के पश्चात् 'निर्वाचन नामावलियों को तैयार करना तथा' ये शब्द प्रविष्ट किए जाएँ।

* * * * *

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे खयाल में श्री कामत ने दोनों अनुच्छेदों 290 और 291 को या तो ठीक प्रकार से पढ़ा नहीं है या ठीक प्रकार से समझा नहीं है। अनुच्छेद 290 में संसद को शक्ति दी गई है, पर 291 में लिखा है कि यदि कोई ऐसा मामला है जिस पर संसद ने उपबंध नहीं बनाया है तो राज्य विधानमंडल को उस पर उपबंध बनाने का अधिकार होगा। यह एक प्रकार का अवशेष है जो संसद राज्य विधानमंडल के अतिरिक्त छोड़ सकती है। यह तो शेषाधिकार संबंधी अनुच्छेद है। इसके अतिरिक्त इसमें कुछ नहीं है।

श्री ए. थानु पिल्लै (ट्रावंकोर राज्य) : जब समय-सारिणी के अनुसार काम करना हो, तब क्या स्थानीय विधानमंडल को प्रतीक्षा करनी होगी और यह देखना होगा कि केन्द्रीय संसद क्या करती है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : प्रधानत: 290 के अधीन उपबंध बनाना संसद का कर्त्तव्य होगा। यह उत्तरदायित्व पूर्णत: संसद पर डाल दिया गया है। संसद का यह कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व होगा कि वह 290 में समाविष्ट मामलों के विषय में विधि द्वारा उपबंध करे, यदि किसी मामले पर संसद द्वारा स्पष्ट और विशिष्ट उपबंध न बनाया गया हो, तो 291 में लिखा है कि संसद 290 में समाविष्ट जिस मामले पर उपबंध न बना

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 16 जून, 1949, पृ. 933

\+ पूर्वोक्त, पृष्ठ 934

++ पूर्वोक्त, पृष्ठ 935

सकी है उस पर कोई उपबंध बनाने का राज्य का विधानमंडल को अपवर्जन न होगा।

श्री ए. थानु पिल्लै : क्या मैं डॉ. अम्बेडकर से जान सकता हूँ कि क्या यह अच्छा नहीं होगा कि इस मामले में केन्द्रीय विधानमंडल का स्थानीय विधानमंडल पर ही समस्त उत्तरदायित्व डाल दिया जाए, जिससे कि निर्वाचन समय के अनुसार हो सके?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं सहमत नहीं हूँ। कई मामले महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं और जिन पर संसद यह समझ सकती है कि वह स्वयं ही उपबंध करें। कई अन्य मामलों पर संसद समझ सकती है कि वे स्थानीय महत्त्व के हैं अतः उन पर प्रान्त, प्रान्त में भिन्नता हो सकती है अतः उन्हें संसद स्थानीय विधानमंडल पर छोड़ना अच्छा समझ सकती है। इसी कारण 290 और 291 में अन्तर रखा गया है।

(डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वीकार किया गया। संशोधित अनुच्छेद २९१ संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

नवीन अनुच्छेद २९१-क

माननीय डॉ. बी.आआर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 291 के पश्चात् निम्न नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाए:

निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालय की सीमा पर रोक

'291-क. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी- निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालय की सीमा पर रोक

निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालय की सीमा पर रोक

(ख) संसद के किसी भी सदन अथवा राज्य विधानमंडलों के किसी भी सदन के किसी निर्वाचन पर ऐसी निर्वाचन याचिका के बिना कोई आपत्ति न की जाएगी जो ऐसे प्राधिकारी को तथा ऐसी रीति से न प्रस्तुत की गई हो जो समुचित विधानमंडल द्वारा निर्मित विधि के द्वारा या उसके अधीन उपबंधित है;

(ग) ऐसे किसी निर्वाचन या ऐसे निर्वाचन की किसी स्थिति के संबंध में या उसके विषय में कार्यवाही की अन्तता के लिए उपयुक्त विधानमंडल द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन या उसके द्वारा उपबंध किया जा सकेगा।'

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 16 जून, 1949, पृ. 937

\+ पूर्वोक्त, पृष्ठ 942

++ पूर्वोक्त, पृष्ठ 943

\# पूर्वोक्त पृष्ठ 945

श्रीमान् मै। यह भी प्रस्ताव करता हूँ:

"कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 132 के संदर्भ में नए अनुच्छेद 291-क से, खंड (ग) हटा दिया जाए।"

(अनुच्छेद २९१-क, डॉ. अम्बेडकर के संशोधन द्वारा यथा-संशोधित संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद २९७

श्री एच.वी. कामत : माननीय सभापति जी, मैं प्रस्तुत करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 297 के खंड (2) में 'यदि अन्य समुदायों के सदस्यों की तुलना में ऐसे सदस्य योग्यता के आधार पर नियुक्ति के लिए योग्य पाए गए' शब्दों के स्थान पर 'बशर्ते कि अन्य समुदायों के सदस्यों की तुलना में ऐसी नियुक्ति केवल योग्यता के आधार पर की गई' प्रतिस्थापित किए जाएँ।

श्रीमान्, मैं सोचता हूँ कि यह संशोधन लगभग प्रारूपण प्रकृति का है और मैं इसे प्रारूपण समिति की संयमी समझदारी पर छोड़ता हूँ कि वह इस पर उचित समय पर विचार करे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं नहीं सोचता कि यह प्रारूपण प्रकृति का है। तथापि हम इस पर बाद में विचार करेंगे।

(अनुच्छेद २९७ संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद ३००

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्तुत करता हूँ:

"संशोधन संख्या 3186 के संदर्भ में संशोधनों की सूची के खण्ड (1) के अनुच्छेद 300, शब्द और अंक 'भाग I' के स्थान पर शब्द और अंक 'भाग प्प्' रखे जाएँ।

सभापति महोदय : डॉ. अम्बेडकर क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं श्रीमान्।

---

* सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 16 जून, 1949, पृ. 936

(डॉ. अम्बेडकर का उक्त संशोधन स्वीकार किया गया। यथा संशोधित अनुच्छेद सं. ३०० संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

अनुच्छेद ३०१

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

"कि अनुच्छेद 301 के खंड (3) में, 'संसद' शब्द के स्थान पर 'संसद का प्रत्येक सदन' ये शब्द रखे जाएँ।"

(डॉ. अम्बेडकर के संशोधन से यथासंशोधित अनुच्छेद ३०१ संविधान में जोड़ा गया।)

* * * * *

माननीय सभापति : आप फिर यही धारणा बना रहे हैं कि सदन का सत्र होगा।

श्री जसपतराय कपूर : निस्संदेह मैंने जो कुछ निवेदन किया था वह इसी धारणा पर था किन्तु मैं नहीं जानता कि इसका और भी कुछ अर्थ निकल सकता है। हम हर स्थान पर देखते हैं कि सदस्यगण राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति तथा राज्य-परिषद् के सदस्यों को विधानमंडल के सदस्य होने के नाते निर्वाचित करेंगे, किसी और हैसियत से नहीं। उदाहरण के लिए, अनुच्छेद 55 में लिखा है कि उपराष्ट्रपति संसद के दोनों सदनों के सदस्यों द्वारा एक मीटिंग (अधिवेशन) में निर्वाचित होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : शब्द ये हैं "संयुक्त अधिवेशन (मीटिंग) में" "बैठक (सिटिंग)" में नहीं।

श्री जसपतराय कपूर : यह ठीक होगा यदि इस बात को सदन में प्राधिकार से कह दिया जाए, जिससे कि इस अनुच्छेद का भिन्न प्रकार से अर्थ निकालने की संभावना न रहे।

---

*· सीएडी, खण्ड VIII, दिनांक 16 जून, 1949, पृ. 952

\+ पूर्वोक्त, पृष्ठ 958

अनुच्छेद २८९

मानीय सभापति : पहले मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत संशोधन पर मत लूँगा।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 289 में सूची 1 के संशोधन संख्या 99 में –

(1) खंड (1) के अन्त में आने वाले शब्द 'राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाएंगे' हटा दिए जाएं।

(2) खंड (2) के स्थान पर निम्न खंड रख दिए जाएं:–

'(2) निर्वाचन आयोग मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा, यदि कोई हो तो, अन्य उतने निर्वाचन आयुक्तों से जितने कि राष्ट्रपति समय-समय पर नियत करें, मिल कर बनेगा तथा मुख्य निर्वाचन आयुक्त और अन्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति, संसद द्वारा उस लिए बनाई हुई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राष्ट्रपति द्वारा की जाएगी।'

'(2 क) जब कोई अन्य निर्वाचन आयुक्त इस प्रकार नियुक्त किया गया हो तब मुख्य निर्वाचन आयुक्त निर्वाचन आयोग के सभापति के रूप में कार्य करेगा।'

(3) खंड (4) में "सेवा शर्तों" इन शब्दों से पूर्व "संसद द्वारा बनाए गए किसी प्रावधान के अन्तर्गत" शब्द प्रविष्ट कर दिए जाएँ।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[छः अन्य सदस्यों द्वारा रखे गए संशोधन अस्वीकृत हुए।]

(यथा संशोधित अनुच्छेद 289 संविधान में जोड़ा गया।)

[सभा राष्ट्रपति द्वारा जुलाई 1949 में निर्धारित की जाने वाली किसी भी तारीख तक के लिए स्थगित हुई]

* * * * *

☎ 23320571
23320589
23320576
FAX : 23320582

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
DR. AMBEDKAR FOUNDATION

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
MINISTRY OF SOCIAL JUSTICE AND EMPOWERMENT
भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA

निदेशक
DIRECTOR

15, जनपथ,
15, JANPATH
नई दिल्ली - 110001
NEW DELHI-110001

दिनांक – 31.10.2019

रियायत नीति (Discount Policy)

सक्षम प्राधिकारी द्वारा यह निर्णय लिया गया है कि पहले के नियमों के अनुसार CWBA वॉल्यूम के संबंध में रियायत नीति (Discount Policy) जारी रखें। तदनुसार, CWBA इंग्लिश वॉल्यूम (डिलक्स संस्करण–हार्ड बाउंड) के एक पूर्ण सेट की कीमत और CWBA हिंदी वॉल्यूम (लोकप्रिय संस्करण–पेपर बाउंड) के एक पूरे सेट की कीमत निम्नानुसार होगी :

क्र.सं.	सीडब्ल्यूबीए सेट	रियायती मूल्य प्रति सेट
	अंग्रेजी सेट (डिलक्स संस्करण) (वॉल्यूम 1 से वॉल्यूम 17)– 20 पुस्तकें।	रू 2,250/–
	हिंदी सेट (लोकप्रिय संस्करण) (खंड 1 से खंड 40 तक)– 40 पुस्तकें।	रू 1073/–

2. एक से अधिक सेट के खरीदारों को सेट की मूल लागत (Original Rates) यानी रू 3,000/–(अंग्रेजी के लिए) और रू 1,430/–(हिंदी के लिए) पर छूट मिलेगी जो कि निम्नानुसार है।

क्र.सं.	विशेष	मूल लागत पर छूट का प्रतिशत
	रू 1000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	10%
	रू 1001–10,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	25%
	रू 10,001–50,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	33.3%
	रू 50,001–2,00,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	40%
	रू 2,00,000/– से ऊपर की पुस्तकों की खरीद पर	45%

3. इच्छुक खरीदार प्रतिष्ठान की वेबसाइट : www.ambedkarfoundation.nic.in पर विवरण के लिए जा सकते हैं। संबंधित CWBA अधिकारी / पीआरओ को स्पष्टीकरण के लिए दूरभाष नंबर 011–23320588, पर कार्य दिवसों में पूर्वाह्न 11:30 बजे से शाम 5:30 बजे तक संपर्क किया जा सकता है।

(देबेन्द्र प्रसाद माझी)
निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय (भाग-II)

ISBN (सेट) : 978-93-5109-129-5

रियायत नीति के अनुसार
सामान्य (पेपरबैक) खंड 01-40
के 1 सेट का मूल्य : ₹ 1073/-

प्रकाशक :

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार
15, जनपथ, नई दिल्ली – 110 001
फोन : 011–23320571
जनसंपर्क अधिकारी फोन : 011–23320588
वेबसाइट : http://drambedkarwritings.gov.in
ईमेल : cwbadaf17@gmail.com